विदुषां पत्राणि



सम्पादक

सूर्यप्रकाश व्यास



आचार्य रामचन्द्र द्विवेदी स्मृति ग्रन्थमाला : 20 वाँ पुष्प

विदुषां पत्राणि

सम्पादक

सूर्यप्रकाश व्यास

सेवानिवृत्त आचार्य

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी

विदुषां पत्राणि

सम्पादक : सूर्यप्रकाश व्यास

ISBN-: 978-81-87978-42-8

मूल्य : रु. 300.00 (रुपये तीन सौ मात्र)

संस्करण प्रथम : 2016 / प्रकाशक : आर्यभाषा संस्थान, बी.2/143ए, भदैनी, वाराणसी–221009 (उत्तरप्रदेश), दूरभाष– 09839575796 / स्वत्वाधिकारी : सूर्यप्रकाश व्यास/ मुद्रक : दी महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी–221010/कम्पोजिंग : विक्रम कुमार दवे/ सेटिंग : गौरीशंकर सिंह / कुल प्रतियाँ 300।

VIDUSHAM PATRANI : Edited by :- S. P. Vyas

समर्पित

वर्तमान संस्कृत जगत् में अपनी विशिष्ट भूमिका के लिए प्रख्यात
प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी
को सादर

प्राक्कथन

पत्रलेखन एक व्यावहारिक आवश्यकता के अतिरिक्त साहित्य की विधा भी है. प्राचीन काल में इसका अन्य विकल्प नहीं था. राजाओं, मन्त्रियों, विद्वानों, प्रियजनों, प्रणय–पीड़ितों,व्यापारियों आदि में पत्रों का आदान–प्रदान स्वाभाविक गतिविधि थी। संवाद व संचार के माध्यमों की आधुनिक प्रगति ने तो पत्र–लेखनविधा को लगभग अप्रासङ्गिक ही सिद्ध कर दिया है।

अंग्रेज़ी व हिन्दी भाषाओं में पत्रों के संग्रह व प्रकाशन की परम्परा रही है। महापुरुषों, विद्वानों, नेताओं, समाजसेवकों आदि के पत्रों के संग्रह इन भाषाओं में प्रकाशित हुए हैं किन्तु राष्ट्रव्यापी संस्कृत भाषा में पत्राचार की परम्परा विद्यमान रहते हुए भी इसके व्यवस्थित संग्रह व प्रकाशन की ओर, प्राप्त जानकारी के अनुसार, अनुसन्धाताओं का विशेष व सार्थक ध्यान नहीं जा सका है। इसके कुछ कारणों का अनुमान किया जा सकता है। जैसे विद्वानों में परस्पर पत्राचार नितान्त व्यक्तिगत स्तर पर होते होंगे, पण्डित–परिवारों में पत्रों के संग्रह की प्रवृत्ति के प्रति उदासीनता रही होगी, किसी संग्राहक का इस प्रकार के संग्रह की ओर ध्यान जाने पर भी व्यक्तिगत पत्रों की प्राप्ति कठिन समस्या रही होगी आदि। यही नहीं, लेखक अपनी साहित्यिक और शास्त्रीय रचनाओं के प्रकाशन के लिए स्वाभाविकरूप से समुत्सुक रहते हैं, रहे होंगे किन्तु उन कृतियों की तुलना में पत्राचारों के प्रकाशन का भी कोई ऐतिहासिक और साहित्यिक महत्त्व है इस ओर उनका ध्यान न जाना भी एक कारण हो सकता है।

पण्डित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी को संस्कृतज्ञों के जो पत्र प्राप्त होते थे वे उन्हें वर्ष क्रमानुसार ज़िल्द बनवाकर सुरक्षित रखते थे। किन्तु यह संग्रह भी सुरक्षित है या नहीं और कहाँ है, यह अज्ञात है। इन्हीं के प्रधान शिष्य और कालान्तर में **संस्कृतरत्नाकर** के संपादक रहे पण्डित वृद्धिचन्द्र शास्त्री(जयपुर) ने **संस्कृतरत्नाकर** के एक अङ्क में विद्वानों के कुछ संस्कृत पत्रों का प्रकाशन किया था, ऐसी सूचना प्राप्त होती है। किन्तु यह अङ्क मुझे उपलब्ध नहीं है।

श्रद्धेय देवर्षि कलानाथ शास्त्री ने अपने एक पत्र(91) में सूचित किया है कि पत्र–लेखनविधा तत्कालीन पाठ्यक्रम का अङ्ग होती थी। उनके पूज्य पितृचरण पण्डित मथुरानाथ शास्त्री का संवाद पण्डित रामचन्द्र बलवन्त आठवले के साथ होता था। राजगुरु श्रीचन्द्रदत्त ओझा ने तो केवल पद्य में ही समस्त लेखन की प्रतिज्ञा की थी और उनका पत्राचार संस्कृत पद्यों में ही होता था। मान्यवर शास्त्रीजी ने यह भी बताया है कि हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित साहित्यकार पण्डित चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' भी संस्कृत में कविता करते थे और उनके संस्कृत पत्रों का संग्रह संभावित है। प्रो. सत्यव्रत शास्त्री ने भी इस दिशा में कुछ प्रयत्न किया था, ऐसा कहा गया किन्तु इन प्रयासों की परिणति की प्रामाणिक सूचना सुलभ नहीं है।

संस्कृत साहित्य में पत्रलेखन के एक प्राचीन उदाहरण की ओर सभी का ध्यान सहज ही चला जाता है। यह मार्मिक पत्र प्राकृत भाषा में कालिदास ने दुष्यन्त के प्रति शकुन्तला से लिखवाया था–

तुज्झण आणे हिअअं मम उण कामो दिवावि रत्तिम्पि ।
णिग्घिण तवइ बलीअं तुइ वुत्तमणोरहाइं अंगाइं ॥ 3.13

[तव न जाने हृदयं मम पुनः कामो दिवाऽपि रात्रावपि।
निर्घृण, तपति बलीयस्त्वयि वृत्तमनोरथाया अङ्गानि॥]

कालिदास के काल से इस पत्र की प्राचीनता का अनुमान किया जा सकता है।

वाराणसी में आदरणीय डॉ. शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी के साथ आत्मीय गोष्ठी में लगभग एक दशक पूर्व एक बार यह विषय चर्चा में आया। उन्होंने इस कार्य में मुझे अग्रणी करके संकल्पबद्ध किया। योजनानुसार 500 पत्रों के संग्रह का लक्ष्य रखा गया। अनेक पत्र उनके पूज्य पिताश्री महामहोपाध्याय पण्डित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी को सम्बोधित प्राप्त हुए और कुछ को सायास जुटाया गया। सीमित संख्या और अव्यवस्थित संग्रह के बावजूद उत्साह के आधिक्य के कारण सामग्री प्रेस को दी जाने लगी। किन्तु दोनों की विषम परिस्थितियों और अन्य प्रकाशनादि कार्यों में व्यस्तता के कारण यह अभियान अवरुद्ध हो गया। पहले डॉ. चतुर्वेदी की और कुछ वर्षों बाद मेरी सेवानिवृत्ति ने योजना को मानो पूर्णविराम ही लगा दिया। दोनों वाराणसी के साहित्य–सेवानुकूल परिवेश से वञ्चित हो गए। वे कामाक्ष्या की शरण में गुवाहाटी चले गए और काल के प्रवाह ने मुझे महाकाल की नगरी उज्जयिनी में पहुँचा दिया। यहाँ अपने अधूरे कार्यों का लेखा–जोखा इकट्ठा करते हुए यथावसर मेरा ध्यान पत्रों की इस दुर्लभ सम्पत्ति की ओर गया और मन में इसके प्रकाशन का सुकुमार सङ्कल्प जागा।

प्रथम दृष्टि में संग्रह से निराशा हुई क्योंकि पत्रों की संख्या सीमित थी। पत्र कहीं जर्जरित और कहीं खण्डित थे। प्रेषकों की तुलना में प्रापक कम थे। कुछ प त्र साधारण तो कुछ असाधारण लगे। कुछ गद्य में थे और कुछ पद्य में। अब ऐसी क्षमता व साधनों की सुलभता नहीं है कि देश के विभिन्न भागों में विद्यमान पण्डित–परिवारों से सम्पर्क करके तथा उनको विश्वास में लेकर उनके सम्भावित संग्रह से पत्रों को प्राप्त किया जाए और इस प्रकार उनके व्यापक प्रकाशन का स्वप्न साकार किया जाए। तथापि स्वयं ही निराश मन को सान्त्वना दी कि ये जैसे भी हैं, यदि अब भी इन्हें प्रकाशित नहीं किया गया तो इस संग्रह का क्या होगा? अन्ततोगत्वा निर्णय किया कि इसे इस

विधा का राजपथ मानकर नहीं बल्कि उसकी एक पगडण्डी मानकर ही सही, प्रकाशित अवश्य किया जाए ताकि भविष्य में कोई समानधर्मा इस कार्य को आगे बढ़ा सके।

मुद्रणार्थ पाण्डुलिपि तैयार हो जाने के बीच ही आदरणीय आचार्य बालकृष्ण शर्मा, निदेशक, सिंधिया प्राच्यविद्या शोधसंस्थान, विक्रम विश्वविद्यालय को इस योजना से अवगत कराया गया। आपने इसके ऐतिहासिक महत्त्व को समझकर सुदूर व विविध स्थानों से एकत्रित पत्रों को मुझे सहज सुलभ कराया तथा संग्रह को समृद्ध किया। अस्तु।

प्रथम स्तवक

यह पत्रसंग्रह दो स्तवकों में विभक्त है। प्रथम स्तवक में कुल 91 पत्र हैं। प्रेषकों की संख्या 33 और प्रापकों की संख्या 7 है। प्रमुख प्रापक 2 हैं पण्डित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी और पण्डित दुर्गादत्त उपाध्याय। प्रमुख प्रेषक 4 हैं–पण्डित शिवजी उपाध्याय (17), पण्डित वसन्त शेवडे(15), पण्डित बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते (12) और पण्डित शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी(11)। स्थान की दृष्टि से प्रापक जयपुर, मिर्जापुर, चमौली, गुवाहाटी और पटना के हैं तथा प्रेषकों के स्थान हैं मुंबई, पूना, नागपुर, पटियाला, अम्बाला, हरिद्वार, प्रयाग, वाराणसी, मिर्जापुर, जौनपुर, चमौली, शहडोल, खंभात तथा जयपुर। प्राचीनतम पत्र सन् 1892 का पण्डित अप्पाशास्त्री राशिवडेकर, पुणे (महाराष्ट्र) का है तथा अन्तिम पत्र सन् 2016 का देवर्षि कलानाथ शास्त्री, जयपुर (राजस्थान) का है। कुछ पत्रों में तिथि का उल्लेख नहीं था किन्तु प्रापक के काल से सङ्गति स्थापित करते हुए उन्हें क्रमानुसार स्थान दिया गया है। कुछ पत्र विषय की दृष्टि से विशिष्ट न मानते हुए संग्रह में सम्मिलित नहीं किये गये हैं।

पद्यबद्ध पत्रों की संख्या 16 है। दो पत्र गद्य–पद्यमय हैं। इनमें कुल श्लोक 116 हैं। शेष पत्र गद्य में हैं। पद्य–संख्या की अधिकता की दृष्टि से पत्रों में आचार्य शिवजी उपाध्याय के 52, पण्डित बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते के 19 , पण्डित रामकुबेर मालवीय के 14, पण्डित शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी के 10, पण्डित माधवाचार्य के 9, पण्डित रतिनाथ झा के 5, पण्डित शालिग्राम शर्मा के 4 और पण्डित गोमृनाथ मिश्र के 3 श्लोक हैं।

इस पत्रसंग्रह में मुख्यतः दो प्रापक हैं किन्तु दोनों का व्यक्तित्व और प्रेषकों की उनके प्रति दृष्टि में भेद है। पण्डित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी अत्यन्त वरिष्ठ हैं। प्रेषकों ने उनके लिए जिन मुख्य विशेषणों का उपयोग किया है इससे उनके व्यक्तित्व और विद्वत्ता का सहज ही अनुमान किया जा सकता है यथा अशेषशास्त्रपारदृश्वा, धवल यश के धनी, ऋषिकुल व्यवस्थापक(1), विविधविद्या–विनोदविलसितान्तःकरण(2), परमोत्साही, धीर–वीर (4), अनेकगुणगौरवगुम्फित (8), धर्मोद्धारप्रवृत्त, विद्याप्रचारनिरत (18), निखिलशास्त्रनिष्णात, परम उदार, गम्भीर, धैर्यवान्, सकललोकमान्य (21), सर्वतन्त्रस्वतन्त्र (22) विद्वत्प्रवर (24), विद्वत्–सामन्त–सम्राट्,

कविकुलतिलक, शास्त्रार्थवीर, श्रीकृष्ण के समान वाणी से सम्पन्न, व्याकरणेन्दु, धार्मिकदशाव्याख्यानवाचस्पति (25) आदि।

पण्डित चतुर्वेदी संस्कृतज्ञों और सनातन धर्म के संरक्षक और मार्गदर्शक हैं। संस्कृत साहित्य सम्मेलन के संस्थापक व तत्कालीन अध्यक्ष /महामन्त्री होने के नाते विबुधजंन उनसे सम्मेलन की गतिविधियों की जानकारी लेते हैं। अपनी उपस्थिति व अनुपस्थिति की सूंचना उन्हें देते हैं तथा निबन्ध–लेखन के लिए उनसे मार्ग दर्शन प्राप्त करते हैं। वे अपने स्वाध्याय–लेखन की प्रगति की भीं सूचना उन्हें देते रहते हैं। संस्कृतरत्नाकर के प्रधान सम्पादक होने के नाते प्रेषक उनसे अङ्कों के यथासमय प्राप्त न होने या रचनाओं का प्रकाशन न होने की विनयपूर्वक शिकायत करते हैं। उनकी प्रभावशीलता के कारण पत्र–प्रेषक आजीविका की प्राप्ति में उनकी सहायता की भी याचना करते हैं। सनातन धर्म का रक्षक मानते हुए समाज को सम्बोधित करने के लिए उनसे विनम्र आग्रह भी किया जाता है (पत्र 25)। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के संस्थापक महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय भी उनको पर्याप्त आदर प्रदान करते हैं। पत्र–प्रेषक अपने कुशल–क्षेम व स्वास्थ्य की सूचना देने के साथ ही उनके भी स्वास्थ्य के प्रति अपनी चिन्ता व्यक्त करते हैं। उनसे समय पर पत्रोत्तर प्राप्त न होना प्रेषकों के लिए व्याकुलता का कारण बन जाता है।

पण्डित दुर्गादत्त उपाध्याय के प्रति प्रेषकों ने जो भाव व्यक्त किए हैं उनके अनुसार वे कविभूषण हैं (29), उनकी वाणी स्निग्ध, गम्भीर, कोमल, मधुर, उदार और धीर है। वे काव्यरसचर्वणसावधानचित्त हैं तथा रम्य कविता–वनिता–प्रिय हैं (32)। शुभैकदत्तहृदय (53) कल्याणगुणशाली(59), कविप्रेष्ठ(63) तथा पत्रों के संग्रह में शूर (84)आदि हैं।

प्रापक पण्डित दुर्गादत्त उपाध्याय की भूमिका पत्र–प्रेषकों के लिए भिन्न है। इन प्रेषकों में उनके गुरुतुल्य पण्डित खिस्तेजी भी हैं तथा उनके मित्रादितुल्य पण्डित शिवजी उपाध्याय, पण्डित वसन्त शेवडे, पण्डित शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी आदि हैं। पण्डित उपाध्याय को सम्बोधित पत्रों में प्रेषकों की व्यक्तिगत समस्याओं की प्रधानता है तथा साथ ही लेखन–प्रकाशन, यात्रा आदि की सूचनाओं का आदान–प्रदान है। प्रेषक उनके वाक् प्रवाह, भाव–सौन्दर्य, मोती जैसे अक्षरों अथवा लिपि की प्रशंसा करते हैं।

सामान्य मनुष्य हो या विद्वान्, सुख–दुःख सभी के जीवन का अपरिहार्य अङ्ग है। किन्तु भेद यह है कि आस्थावान् विद्वान् दुःख–सुख दोनों में समभाव रखते हुए अपनी सारस्वत साधना को सर्वोच्च स्थान देते हैं। उन्हें विश्वास रहता है कि ईशकृपा से यथासमय सब कुछ ठीक हो जाएगा। इसलिए इन पत्रों के प्रेषकों के समक्ष चाहे बाढ़ में सब कुछ ध्वस्त होने का सङ्कट हो, आजीविका, आवास, अर्थाभाव, स्थान–परिवर्तन, पदोन्नति, लिखित के प्रकाशन, परिवार के प्रिय सदस्य की अस्वस्थता अथवा मृत्यु आदि का कैसा भी संकट हो वे हर हाल में अपनी सारस्वत साधना से

विरत नहीं होते। यही कारण है कि वे दो–चार प्राथमिक शब्दों में अपनी व्यक्तिगत समस्या कहकर पुनः विद्या–प्रसङ्ग पर आ जाते हैं।

संस्कृतज्ञों के प्रति एक आम धारणा है कि उनका अहं बड़ा प्रबल होता है और वे एक–दूसरे से ईर्ष्या–द्वेष बहुत रखते हैं किन्तु ये पत्र इस धारणा को, अपने सीमित दायरे में ही सही, मिथ्या सिद्ध करते हैं। ये पत्र, प्रेषक और प्रापक के मध्य मधुर सम्बन्ध के दस्तावेज हैं। इनमें वरिष्ठ व कनिष्ठ विद्या–साधक के प रस्पर सहयोग, मार्गदर्शन, स्वास्थ्य, पारिवारिक सुख–दुःख आदि की सरल भाव से परस्पर चिन्ताएँ व्यक्त हुई हैं। एक पत्र में तो प्रेषक ने पूछा है कि पत्रप्रापक की घड़ी अभी तक ठीक हुई या नहीं (40)। संक्षेप में इन वैविध्यपूर्ण पत्रों के विषय हैं–व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक व शिक्षण संस्थागत समस्याएँ, स्वास्थ्य, विवाह, भवन –निर्माण, धार्मिक कर्मकाण्ड, कुशल–क्षेम की जिज्ञासा, सभा–सम्मेलन, कवि–समवाय की सूचनाएँ, परीक्षाकार्य, शिक्षणकार्य, यात्राएँ, पुस्तक–लेखन, प्रकाशन, प्रतिक्रियाएँ, पुरस्कार, पत्र–पत्रिकाएँ, विश्रामवृत्ति, विद्वत्वृत्ति, अध्येतावृत्ति आदि। वैसे तो सभी पत्र व्यक्तिगत हैं और इनमें गोपनीय जैसा कुछ नहीं है तथापि एक पत्र (13) का विषय संवेदनशील प्रतीत हुआ। इसलिए इस पत्र से प्रापक–प्रेषक के नामों को प्रकाशन से परे रखना नैतिक दृष्टि से उचित प्रतीत हुआ।

द्वितीय स्तवक

द्वितीय स्तवक में कुल 39 पत्र हैं जिनमें से 36 के लेखक आचार्य वेङ्कटाचलम् हैं। शेष में दो पत्रों के लेखक डॉ. शिवरामसिंह तथा एक के लेखक आचार्य निरञ्जनदेव तीर्थ हैं। ये सभी पत्र, प्रेषक व प्रापक की दृष्टि से केवल आचार्य वेङ्कटाचलम् से सम्बद्ध हैं तथा इनकी प्रकृति भी भिन्न है। इसलिए इनको स्वतन्त्र स्तवक में प्रस्तुत किया गया है। आचार्य वेङ्कटाचलम् के पत्रों के प्रापक/प्रापिका हैं–डॉ. अजिता त्रिवेदी(16), डॉ. शिवरामसिंह (11), कु. शुभा (2), श्रीमती विजया सुब्रह्मण्यम् (1), आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी (1), आचार्य के.एम.सुब्रह्मण्यम् (1), आचार्य शेषाद्री (1), डॉ. गङ्गाधर पण्डा (1) और डॉ. श्रीमती पुष्पा त्रिपाठी (1)। एक पद्यबद्ध पत्र संस्कृत विभाग, विक्रमविश्वविद्यालय के सदस्यों को नववर्षोपहार के रूप में लिखा गया है।

इस स्तवक में केवल तीन पत्रों में कुल 11 श्लोक संग्रथित हैं। इनकी कालावधि 1962 से 1996 हैं। एक व्यक्ति से सम्बद्ध पत्रों को एक साथ रखने में कालक्रम का भङ्ग स्वाभाविक है।

पत्रों के प्रेषण स्थानों में उज्जैन, भोपाल, बड़वानी, शाजापुर व नागोद उल्लखित हैं जबकि प्रापक स्थानों में पेटलाद, मलाड,जम्मू, दिल्ली, मद्रास, वाराणसी,उज्जैन, भोपाल, शाजापुर, शिवपुरी, रीवा, पन्ना, खरगोन और बिलासपुर के नाम हैं।

द्वितीय स्तवक के पत्रों की कालावधि में पद्मश्री आचार्य वेङ्कटाचलम् के शैक्षणिक व प्रशासनिक जीवन की सामान्य व्याख्याता से कुलपति (सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय,

वाराणसी तथा दरभङ्गा विश्वविद्यालय) और कुलाधिपति (लाल बहादुर संस्कृत विश्वविद्यालय, दिल्ली) बनने तक की विकास–यात्रा के प्रतिबिम्ब हैं। तथापि उनका सारल्य, विनय, शिष्यवर्ग के प्रति सद्भाव आदि सदैव अपरिवर्तित रहा। पत्रों में उनकी भाषा–शैली प्रापक/प्रापिका की प्रकृति के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। शिष्यवर्ग की अपेक्षा पुत्रियों को लिखे गये पत्रों की भाषा अति सरल है किन्तु विद्वानों को पत्र लिखते समय भाषा–शैली का स्तर व स्वरूप उच्चतर और भिन्न हो जाता है। यह प्रवृत्ति स्वाभाविक व उचित ही है।

आचार्य वेङ्कटाचलम् से सम्बद्ध इन पत्रों को तीन वर्गों में विभाजित करके देखा जा सकता है। प्रथम वर्ग में गुरु–शिष्य/शिष्या से सम्बद्ध पत्र हैं जबकि दूसरे वर्ग के तीन पत्रों में पिता–पुत्री के सम्बन्ध की अभिव्यक्ति हुई है। तीसरे वर्ग के पत्र विद्वज्जनों /पूजनीयों के प्रति सद्भाव, श्रद्धा व लोकाचार की अभिव्यक्ति के उदाहरण हैं।

गुरु–शिष्य से सम्बद्ध पत्रों की सर्वाधिक संख्या 29 हैं। इनमें मात्र दो पत्र डॉ. शिवराम सिंह द्वारा आचार्य को लिखे गये हैं व शेष 27 पत्र गुरु द्वारा शिष्या (16) व शिष्य (11) को लिखे गए हैं।

भारतीय शिक्षा–संस्कृति का एक विलक्षण आयाम है विद्यावंश अथवा गुरुपरम्परा। यह विद्या–सम्प्रदाय से भिन्न है। प्राचीन काल में गुरु से प्रधान विषय की शिक्षा प्राप्त करके शिष्य भाष्य, टीका, वृत्ति अथवा स्वतन्त्र ग्रन्थ लिखकर, समयानुसार उसी विचारपरम्परा का विकास करता था। अतः यह विद्या–सम्प्रदाय की परम्परा कही जाती थी। किन्तु विद्यावंश या गुरु–परम्परा में ऐसा आग्रह नहीं होता। गुरु अपने शिष्य को रुचि व क्षमतानुसार ज्ञान की शाखा के चयन की स्वतन्त्रता देते हुए पितातुल्य संरक्षक, मार्गदर्शक बनकर उसकी उच्च शिक्षा के लिए आजीवन सर्वविध सहयोग करता है तथा उसके कल्याण के लिए सतत प्रयत्नशील रहता है। इस गुरु–परम्परा में शिष्य को ही नहीं अपितु गुरु को भी सुपात्र शिष्य पाकर अपने सौभाग्य पर गर्व और हर्ष होता है। इसी आत्मीयता की पृष्ठभूमि में शिष्य यदि गुरु के पत्रों की प्रतीक्षा करता है तो गुरु भी उत्तर पाने तथा प्रदत्त निर्देशों के पालन की प्रमति जानने के लिए व्याकुल रहता है। दोनों पक्ष पारिवारिक सद्भावना से परस्पर इस प्रकार जुड़ जाते हैं कि दो परिवारों में भेद की सीमारेखा समाप्तप्राय हो जाती है।

पत्रों से स्पष्ट है कि आचार्य अपने शिष्य–शिष्याओं को पितृतुल्य स्नेह, मार्गदर्शन देकर उनसे आजीवन सम्बन्ध बनाए रखकर अपने विद्यावंश को समृद्ध करने में सन्नद्ध दिखाई देते हैं। इसी भाव का प्रतिबिम्ब उनके कुछ पत्रों में देखा जा सकता है।

– शिष्य के प्रश्नों , जिज्ञासाओं का आदर्श गुरु सदा स्वागत करता है।

गुरु शिष्य के सर्वाङ्गीण विकास व कल्याण की कामना करते हुए यह भाव रखता है कि उसके अपने गुरु का ऋण चुकाने का एक मात्र सही उपाय यही है कि वह अपने सुयोग्य शिष्य की उन्नति में यथाशक्ति सहभागी बने। शिष्य–मण्डली में से एक भी शिष्य यदि सही दिशा में प्रगति कर पाता है तो वह अपने को उऋण मान लेगा जैसे उपवन का एक भी सुपुष्पित व सुगन्धित वृक्ष उपवन व माली को यशस्वी बनाने के लिए पर्याप्त होता है। विद्याभ्यास, स्वाध्याय, कठोर श्रम, आत्मविश्वास में वृद्धि और लोकाचार के प्रति भी जागरूकता की प्रेरणा देते हुए तथा दोषों, शिथिलताओं के प्रति ध्यानाकर्षण करते हुए, वह मानता है कि मातृवत् रोष प्रकट करना गुरु का स्वाभाविक अधिकार है। उसे शिष्य की स्वाध्याय–विषयक साधन–सामग्री, आजीविका, पदोन्नति, शारीरिक–मानसिक स्वास्थ्य आदि की चिन्ता रहती है। अनुसन्धानगत व सङ्गोष्ठियों से सम्बद्ध समस्याओं पर मार्गदर्शन को वह अपना कर्तव्य मानता है। शिष्य की प्रशंसा या उपलब्धि से वह प्रसन्नता के साथ सन्तोष तथा गर्व की अनुभूति करता है।

– गुरु शिष्यों को मात्र उपदेश ही नहीं देते बल्कि उसका शब्दशः स्वयं भी पालन करते हुए लोकाचार के निर्वाह का प्रयत्न करते हैं और इसमें परिस्थितिवश चूक हो जाने पर क्षमाप्रार्थी बनकर उसकी क्षति–पूर्ति का प्रयत्न भी करते हैं। (द्रष्टव्य, पत्र संख्या–120)। वस्तुतः भाग्यशाली हैं वे शिष्य व सन्तान जिन्हें आचार्य वेङ्कटाचलम् जैसे आदर्श गुरु व पिता मिले।

– गुरु तैत्तिरीय उपनिषद् की शिक्षावल्ली में विद्यमान उपदेश (यानि अस्माकं सुचरितानि तानि त्वया सेवितव्यानि नेतराणि) का अनुकरण करते हुए शिष्य से कहता है कि पत्रोत्तर में विलम्ब आदि की मेरी शिथिलता का अनुकरण तुम्हें नहीं करना है। वह शिष्य की ओर से कभी अनुत्तरित और कभी विस्तृत पत्रोत्तर प्राप्त करने पर स्वयं ही उसकी व्याख्या करके समुचित सङ्गति स्थापित कर लेता है कि ग्रीष्म काल में जो मेघ नीरस व शुष्क दिखाई देता है वही वर्षाकाल में अतिवर्षण करके उसकी क्षतिपूर्ति कर देता है।

– गुरु प्रायः अपनी व्यक्तिगत चिन्ताओं से शिष्य को दूर ही रखता है। कभी कुछ संकेत मात्र दे देता है ताकि किसी प्रकार की भ्रान्ति न हो किन्तु दूसरी ओर शिष्य के जीवन, व्यक्तित्व और परिवेश के सभी पक्षों पर वह सूक्ष्म दृष्टि रखता है क्योंकि शिष्य का सर्वाङ्गीण विकास ही उसका अभीष्ट है। वह जानता है कि शिष्य की सर्वविध समस्याओं के समाधान के लिए उसके पास कोई अमोघ अस्त्र नहीं है। फिर भी धैर्य–धारण के आशीर्वचन के साथ वह ईश्वर के प्रति भी शिष्य की आस्था को दृढ़ बनाने का प्रयत्न करता है। वह शिष्य पर एकाधिकार न मानते हुए उसे अन्य वरेण्य विद्वानों से सम्पर्क के लिए भी प्रेरित करता है।

– पुत्रियों को लिखे गये पत्रों में आदर्श और वात्सल्य से परिपूर्ण पिता का व्यक्तित्व प्रतिबिम्बित होता है। सुखद बात यह है कि शिष्यवर्ग के लिए वह गुरु के साथ पिता भी है और संतति के लिए पिता के साथ गुरुभाव भी रखता है। आचार्य ने दोनों पक्षों के प्रति अपनी दोहरी भूमिका का निर्वाह सहजता से किया है। पिता का हृदय संस्कृत प्रेम से परिपूर्ण है। इसलिए सन्तति यदि संस्कृत में पत्रव्यवहार करके अपने पूज्य पिता को प्रसन्न करना चाहती है तो यह स्वाभाविक ही है और इसके फलस्वरूप सन्तति को गुरुतुल्य पिता का भरपूर आशीर्वाद प्राप्त होता है क्यों कि शिष्य का संस्कृत में पत्र लिखना उतना सुखद नहीं है जितना सन्तति का संस्कृत में पत्रलेखन। पुत्री के संस्कृत पत्रों को पढ़कर पिता उसे सरलतम संस्कृत में और पद्यबद्ध पत्र लिखकर आशीर्वाद देता है तथा विद्याभ्यास में कठिन परिश्रम करने के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित करता है। पिता का यह नैतिक निर्देश उल्लेखनीय है कि अपने उत्थान के लिए पर्याप्त प्रयत्न करो किन्तु दूसरों के पतन की कामना कभी–भी मत करो।

– सौभाग्यवती पुत्री को पिता के निर्देश महर्षि कण्व का स्मरण दिलाते हैं। वह आदर्श गृहस्थ–जीवन, लोकयात्रा में सावधानी, उन्नत मार्ग का अनुसरण, व्यावहारिक जीवन में तपश्चरण का महत्त्व, धैर्य–धारण, पति–सुख में अपना सुख मानना तथा संस्कृत की संस्कृति से सुसंस्कृत स्त्री का उसे धर्म समझना आदि विशेषरूप से सिखाता है। कूपमण्डूकता से परे रहकर निरन्तर स्वाध्याय करने की प्रेरणा उसके गुरुभाव की अभिव्यक्ति है।

आचार्य वेङ्कटाचलम् के शिक्षक व समीक्षक के स्वरूप की भी संक्षिप्त झलक कुछ पत्रों में देखी जा सकती है। वे अपने छात्रों को कक्षा में संस्कृत माध्यम से पढ़ाने और लेखन की अशुद्धियों के प्रति सावधान रहने के लिए निर्देश देते हैं। दूसरी ओर रचना की समीक्षा के निवेदन पर उसके दोषों का सविनय उल्लेख करने में भी संकोच नहीं करते हैं।

सामान्य

पत्र दो आत्मीय जनों के मध्य संवाद के सेतु होते हैं। पाठक पत्रप्रेषक की भाषा व भाव का तो साक्षात्कार करता ही है किन्तु प्रापक का अप्रत्यक्ष परिचय भी उसे सहज ही होने लगता है। इसके साथ ही दोनों के परस्पर सम्बन्ध की छवि भी पाठकों के हृदयपटल पर अङ्कित होने लगती है। यही इस पत्र–सेतु का त्रिआयामी आनन्द है। इस पृष्ठभूमि में दोनों स्तवकों के पत्र–लेखकों के और उनके सम्बोध्यों के संक्षिप्त परिचय की यहाँ स्वाभाविक अपेक्षा थी किन्तु सहेतुक इस पक्ष को स्थगित किया गया। सम्पादक के नाते यह भाव प्रबलतर हो गया कि पाठकों के मन को विद्वानों की

गरिमा से बोझिल न बनाकर उन्हें पत्रों के माध्यम से ही त्रिआयामी सेतु का आनन्द लेने के लिए मुक्त छोड़ दिया जाए।

सभी पत्रलेखक वरिष्ठ विद्वान् और कवि हैं किन्तु इनके पत्रों की भाषा सरल और सहज है। पत्रों में विद्वत्ता हावी नहीं है। अतः ये पत्र विद्वानों के होते हुए भी सहृदय साधकों के हैं। ये पत्र उनकी सरलता , विनयशीलता, स्निग्धता और व्यावहारिकता के प्रतिबिम्ब हैं। स्वाध्याय व साहित्य–साधना की अप्रमादता के उदाहरण हैं। इन प्रेषक विद्वानों की साहित्यिक रचनाएँ आस्वाद के लिए बौद्धिक व्यायाम की अपेक्षा रखती हैं किन्तु इन पत्रों की सरल भाषा–शैली में उनकी बुद्धि नहीं अपितु मन की सरलता प्रकट हुई है। जैसे उच्च कोटि का राजनीतिज्ञ अथवा कूटनीतिज्ञ जब बच्चों के साथ सम्पर्क करता है तो वह बालक बन जाता है। उसी प्रकार ये उच्च कोटि के संस्कृत के विद्वान् और साहित्यकार व्यक्तिगत सम्पर्क के प्रसङ्ग में निश्छल और स्निग्ध व्यवहार को अभिव्यक्त करते हैं। तथापि इन पत्रों में विद्वानों के स म्बोधन, पत्रारम्भ, भाषा–शैली, भावाभिव्यक्ति आदि में प्रसङ्गानुसार यत्र–तत्र साहित्यिक संस्पर्श भी प्रकट हो गया है । ऐसे प्रयोग गद्यात्मक पत्रों में कम और पद्यात्मक पत्रों में अधिक हैं। सहृदयों के लिए कतिपय उदाहरण पर्याप्त हैं–

(अ) प्रापकों से प्राप्त पत्रों की प्रशंसा में –

– नवनीपवनीनिकुञ्जचङ्क्रणश्चतुरो गोविन्दोऽत्र..........। (पत्र संख्या 2)

– स्मित–प्रभाभिः प्रभवन्ति यस्य कटाक्षविक्षेपवशान्मिषन्ति।
जगन्नियन्ति भ्रुकुटीविलासेऽप्यमन्दमानन्दमहं तमीहे।।1।।

– क्वायं जनश्चञ्चलचित्तवृत्तिर्विषणाः क्व स्थिरधीर्विधेयाः।
नूनं नरो यो नर–साऽभिबन्धः किं तस्य साध्यः सरसो निबन्धः।।4।। (पत्र संख्या 8)

– करकमलकोरकाङ्कितागतम् . . .... पत्रम् । (पत्र संख्या 19)

– भवत्सुन्दरपत्रेन्दोरागतायां रुचाविह। प्रबुद्धो मे मनःकोशः पूर्णिमायां यथाम्बुधिः ।।2।।
स्निग्धगम्भीरमसृणमधुरोदारधीरवाक्। विद्वन्मानसपद्मान्तस्त्वमेकः षट्पदायते।।3।।
स्नेहेन भवदीयेन ज्ञातेनाद्य महामते । तापेन हिमरेखेव मनोम्लानिर्विलुप्यते।।4।।
(पत्र संख्या 30)

– पत्रं समीक्ष्य भवदीयकरारविन्दसञ्जातलेखविहिताक्षरभृङ्गमालम्।
स्वान्तं मदीयमतिहर्षतरङ्गरङ्ग –क्रीडाश्चकार रागवृन्दमिवापगासु।।2।।(पत्र संख्या 31)

– श्रीमत्करकञ्जोल्लिखितम् . . .... पत्रम् । (पत्र संख्या 36)

– अहो वाक्प्रवाहो भावसौन्दर्यं च पत्रेष्वपि. . . . .। (पत्र संख्या 80)

– श्रीमत्करकमलाक्षराङ्कितं सुस्वादुशीतलं चन्दनविलेपनानन्दजनकं पत्रम्.........।
(पत्र संख्या 82)

- श्रीमन्मौक्तिकाक्षराङ्कितपत्रारूढभावलहरिकाम् ....। (पत्र संख्या 82)
- मौक्तिकप्रायाक्षराङ्कितं पत्रं निभाल्य चाक्षरसमूहनृत्यमाधुरीं पायं पायं च सुरम्यतरभावोल्लासनैपुर्णी कस्य पामरस्यापि मनो न मुह्यति माधुरीं प्रति.....।

(पत्र संख्या 89)
- आसादितं त्वदीयं द्राघिष्ठं पत्रं वार्ताभारभरितम्। (पत्र संख्या 99)
- यदा मौनमवलम्बसे तदा काष्ठमौनादिव्रतधारिणो मुनितल्लजानप्यतिक्रम्य तिष्ठसि, लिखसि च चेद्दीर्घदीर्घं ते पत्रं लङ्कादाहव्यग्रं हनूमल्लाङ्गूलमपि व्रीडास्पदं विदधाति। (पत्र संख्या 102)
- यैव त्वमेतावन्तं कालं स्थिरनैभृत्यमवालम्बथाः सैव त्वं साम्प्रतं भूयिष्टं पत्रमयीं शब्दवृष्टिं स्रक्ष्यसीति। य एव खलु मेघः ग्रीष्मे शुष्को नीरसश्चावतिष्ठते, सन्नप्यसन्निव च प्रतिभाति, स एव खलु वर्षासु प्रकामं रसवर्षी भवति! (पत्र संख्या 102)
- यत् त्वया वाक्यद्वयं संस्कृतभाषया लिखितं तद् दृष्ट्वा नर्तितुम् आरब्धं मम मनः।

(पत्र संख्या 115)
- गीर्वाणभाषासंदृब्धं भावत्कं पत्रमनुवाच्य पुत्रोत्सवेनेव अन्तरङ्गमभ्यनन्दत्।

(पत्र संख्या 124)

(आ) कतिपय उल्लेखनीय वक्तव्य –
- हा ! कष्टं खलु 'कूपदर्दुर' निभस्सर्वो ऽत्र संजीवति॥3॥
- त्राताः श्रीगिरिधारिणेन्द्रभयतो गोपा यथा गोकुले,
  नाम्नस्साम्यतया तथैव भवता संरक्षणीया वयम्॥5॥(पत्र संख्या 23)
- न हि कस्तूरिकामोदः शपथेन विभाव्यते.......।
- नास्ति कोऽपि पाणिनेः कात्यायनवत् तस्य च पतञ्जलिवत् संवर्द्धकः समर्थको वेति.....। (पत्र संख्या 27)
- का वार्ता विद्वद्वृन्दवन्दितचरणनखचक्राणां वेदान्तज्ञानसफलीकृताशेषपूर्वपुरुषजन्मनां लोकप्रथितयशसां श्रीमताम् . . . .।(पत्र संख्या 29)
- मित्रालोको भवतु सुमनःपंकजं ध्वान्तराज्यं प्राज्यं नश्यत्वथ समुदयं यातु मद्वासरश्री–रित्याशायामिह मुकुलितं काशिकादीर्घिकायामाकाशे चाकलयति कदाऽऽयास्यतीति प्रभातम्॥5॥ (पत्र संख्या 37)
- . .. वसति शशधरोऽयं खे परं चण्डतापं, प्रशमयति सदा स्वैरंशुभिः कैरवाणाम्॥4॥
  कमल! तव सखा खे त्वं जले खेदखिन्नं कुमुद! कुटिलतां त्वं चात्ममित्रस्य पश्य।
  न कुरु न कुरु नृत्यं बर्हिनालोक्य मेघमनुभवपरितापं मत्सुहृत् सम्मुखोऽयम्॥5॥

(पत्र संख्या 38)

- अर्थकार्श्यकृशाश्चेति श्रुत्वाऽऽनन्दानन्दसिन्धुबुद्बुद्परम्परामुरीक्रियमाणो. . . ॥ (पत्र संख्या 39)
- निदाघः केवलं स्वैरमुन्मत्त इव नृत्यति॥6॥ (पत्र संख्या 50)
- कुटुम्बबाधाः याः काश्चित्ता अपि प्रतिवासरम्।
तमांसीव करैर्भानोर्विलीयन्ते शनैः शनैः॥5॥ (पत्र संख्या 61)
- तत्त्वविरहिता, मात्रा, श्रद्धाऽद्य भक्षयति भारतीयां सस्कृतिं संस्कृतसमाजं ब्राह्मणवर्गञ्च।(पत्र संख्या 87)
- रूढमूलं स्वभावं को वा परिवर्तयतु? (पत्र संख्या 92)
- कालस्य सदुपयोगं कुर्याः।(93)
- मा धैर्यं त्याक्षीः।(पत्र संख्या 96)
- अन्तिमक्षणपर्यन्तं सोत्कण्ठभरमात्मा आयसनीयः सर्वत्र कार्येषु इति नियतिः। (पत्र संख्या 97)
- भाष्यं तु भाष्यमेव न तु लेख्यम्! (पत्र संख्या 100)
- औदासीन्यं मा अवलम्बिष्ठाः।(पत्र संख्या 100)
- किं दूरावस्थानसङ्कल्पः पत्रोत्तरदानमप्यवरुणद्धि? !!! (पत्र संख्या 100)
- य एव खलु मेघः ग्रीष्मे शुष्को नीरसश्चावतिष्ठते, सन्नप्यसन्निव च प्रतिभाति, स एव खलु वर्षासु प्रकामं रसवर्षी भवति! (पत्र संख्या 102)
- एकोनशतांशतः श्रमस्वेदनिष्यन्दं केवलं एकशतांशमात्रया पूर्वपुण्यप्राप्तसंस्कारबलं चावलम्बते।(पत्र संख्या 106)
- अतर्किंतोपनतो.. लाभः स्वहस्तात् स्वयं न च्यावयितव्यः।
- परिश्रमं विना शून्याः सङ्कल्पाः न फलन्ति हि। (पत्र संख्या 116)
- कामम् आत्मोन्नतिः श्लाघ्या प्रार्थनीया च सर्वथा।
किन्त्वेदर्थं न प्रार्थ्यम् अन्येषां पतनं भयम्॥7॥ (पत्र संख्या 116)
- तपो नाम न तत् यत् जराजीर्णैः कतिपयैः कुत्रापि वनगहने वा गुहायां वा आत्मा क्लेश्यते। तपो नाम दृढः संकल्पः, तपो नाम नित्यमग्लानः परिगमभूमा। (पत्र संख्या 119)
- क्षुद्रेषु मा रमस्व। स्पृहय महीयसे श्रेयसे। (पत्र संख्या 119)
- विमृश्यकारिणं स्वयं वृण्वन्ति सिद्धयः। (पत्र संख्या 119)
- नाम्नैव तत् सर्वं नगरं, वस्तुतस्तु तद् गरमित्यवेहि। (पत्र संख्या 119)
- धैर्यमवलम्बस्व। (पत्र संख्या 119)
- कूपमण्डूकवृत्तिमाश्रयन्ती स्वगृहाङ्गणे एव आत्मानं मा बधान। (पत्र संख्या 119)

– पतिं सर्वथा सुखिनं कर्तुं प्रयतस्व। पत्युः सुखेनैव स्वयं रमस्व। इदमेव भारतीयनार्याः कृते श्रेयस्करं, विशेषतश्च संस्कृतसाहित्येन संस्कृतायाः ललनायाः। (पत्र संख्या 119)

– परिणते वयसि सर्वेषां मनुष्याणां स्मृतिदौर्बल्यं जायत एव। (पत्र संख्या 124)

– "श्रद्धत्स्व सौम्य"! (पत्र संख्या 124)

– धारय पूर्ववदुत्साहं सर्वकर्मसु। सत्यनिष्ठया आधिकारिकेषु कर्मसु प्रवर्तस्व। परं सत्यनिष्ठया सह लोकव्यवहारमपि यथायथमनुवर्तस्व। (पत्र संख्या 124)

– सर्वैरेव प्राणिभिरवश्यमेव भोक्तव्यं शुभाशुभानां पूर्वकर्मणां फलम्। (पत्र संख्या 124)

– सत्यनिष्ठया सह लोकव्यवहारमपि यथायथमनुवर्तस्व। उभयोः समन्वयेनैव पुरुषः जीवनयात्रायां सफलो भवति समेधते च। (पत्र संख्या 124)

कुछ पत्रों में प्रसङ्गवश लेखकों के जीवन–दर्शन के ऐसे सूत्र प्रकट हुए हैं जो सबके लिए सदैव उपयोगी हैं, प्रकाशस्तम्भ हैं।

(अ) आस्था

– जगदम्बा की कृपा से समस्त सङ्कट दूर होंगे। (पत्र 28, 38, श्लोक 4–5)

– सेवानिवृत्ति के बाद उपस्थित कार्यों को जैसे–तैसे पूरा किया जाता है किन्तु सङ्कल्पबद्ध होकर कार्य करना कठिन (या असम्भव) हो जाता है। न मन, न शरीर की अनुकूलता होती है। सभी प्रकार के कष्ट होने पर भी पदे–पदे जगन्माता की करुणाजलछाया का अनुभव होता है। (55)

– हज़ार बाधाओं के बावज़ूद श्रीचरण की उपासना और गुरु का स्मरण छूटा नहीं है–यह सौभाग्य की बात है। (59)

– वृद्धावस्था से ग्रस्त शरीर का महोत्सव तभी तक है जब तक नित्य–नैमित्तिक दिनचर्या निर्बाधरूप से चलती रहती है। जब तक स्वधर्म का पालन हो रहा है तभी तक ब्राह्मण के शरीर–धारण की सार्थकता है।(61, श्लोक 3–4)

– प्रतिदिन जो पारिवारिक सङ्कट झेलना पड़ रहे हैं, आशा है वे सूर्य की किरणों से अन्धकार की तरह धीरे–धीरे नष्ट हो जाएँगे। परमात्मा से प्रार्थना है कि वह अपनी चिन्तामणि के प्रभाव से शीघ्र ही अन्धकार नष्ट करके हमें ज्ञान का प्रकाश प्रदान करे।(61, श्लोक 5–6)

– जीवन में प्रबोध का प्रकाश तो जगन्माता की कृपा से ही प्राप्त होता है। (74)

– कौन ऐसा सहृदय होगा जो जगन्माता की कीर्तिगाथा का सम्मान करके स्वयं को सम्मानित करना नहीं चाहता?(79)

– भाग्य के अधीन होने के कारण(प्रायः) प्रयत्न सफल नहीं होते हैं। (4)

- भाग्य में जो लिखा है उसे बदलने में तो देवता भी समर्थ नहीं हैं।(11)
- सभी कर्म कल्याणप्रद हों, वह परमेश्वर सदा रक्षा करे और सात्विक बुद्धि प्रदान करे।(97)
- यदि मेरा संकल्प शुद्ध है तो ईश्वर अवश्य ही अनुग्रह करेगा।(99)
- भगवान् महाकाल सभी प्रकार का कल्याण करें।(104)
- अब तक जीवन में उत्साहपूर्वक बिन्दुमात्र भी यदि सफलता प्राप्त की है तो वह पूर्व जन्मों के पुण्य का ही फल है।(106)
- काशी की समस्त पूर्व विभूतियों की चरणरज को प्रणाम।(125)
- भगवान् श्रीमहाकालेश्वर सभी को चित्तशान्तिमय परमसुख प्रदान करें।(126)
- श्रीमदाचार्यपाद के चरणकमलों में भगवान् नारायण के मंत्रोच्चारपूर्वक मन से ही तीन बार प्रणाम करके निवेदन है......(128)

(आ) जीवन–दृष्टि

- (अपने प्रति) एक बार या अनेक बार किए गए अपराध को भी महानुभाव सहते हैं और क्षमायोग्य को क्षमा करते हैं। (25)
- बालक अच्छा–बुरा कैसा भी व्यवहार करे ..... ज्ञानी और यशस्वी सज्जन उसे क्षमा करते हैं।(37)
- मित्र (ज्ञानादि में) छोटा हो तब भी उसका त्याग (या उपेक्षा) नहीं करना चाहिये। (38)
- उस विधाता को धिक्कार है जो स्वयं के लगाये हुए फूलों से लदे प्रेमवृक्ष को स्वयं ही ध्वस्त करना चाहता है। (42)
- अहङ्कार के विनाश के बिना मन की शान्ति प्राप्त नहीं होती है। (42, श्लोक 7)
- मनुष्य सदा से दुर्बल है। उसके वश में कुछ नहीं है किन्तु एकमात्र परस्पर स्नेह ही है जो दुर्बल नहीं है। (42, श्लोक 8)
- कौन ऐसा गृहस्थ है जो देश, काल, परिवेश आदि से पीड़ित न हो। यह तो कालरूप भगवान् का व्यापार है। (52)
- गृहनिर्माण की स्थिति हनूमान् की पूँछ की तरह होती है। (58)
- स्वास्थ्य ही (अन्य अनेक बाधाओं में) एक बड़ी बाधा है। (60)
- कार्य की प्रबल इच्छा होने पर भी स्वास्थ्य सबसे बड़ी बाधा बन ही जाता है। (60)
- सरकारी अधिकारी संवेदनाशून्य और स्वार्थी हो गये हैं। सभी अच्छी व्यवस्थाएँ ध्वस्त होती जा रही हैं। लेखकों को इस विषय में अवश्य ही कुछ लिखना चाहिये। (60)

- नूतन की प्राप्ति के लिए पूर्वकालिक निन्दनीय स्वरूप का त्याग अनिवार्य है। (87)
- जैसी ग्रहों की परिस्थिति होती है उसी के अनुसार सभी प्रकार के कार्य सम्पन्न होते हैं।(97)
- व्यक्ति को चाहिए कि वह सभी कार्यों में अन्तिम क्षण तक सम्पूर्ण शक्ति लगाकर प्रयत्न करे, यही नियति है। (97)
- इन दिनों नियति के कठोर पाश में बंधा हुआ मैं आवश्यक कार्यों को भी सम्पन्न नहीं कर पा रहा हूँ।(119)
- दृढ़ इच्छा रखने पर भी कभी–कभी कोई कार्य शीघ्रता से सम्पन्न नहीं हो पाता है। अतः धैर्य रखकर अनुकूल समय की प्रतीक्षा करनी चाहिए।(119)
- पत्नी को चाहिए कि वह पति के सुख को ही अपना सुख माने। यही भारतीय नारी के लिए कल्याणकारी है, विशेष रूप से उन नारियों के लिए जो संस्कृत वाङ्मय का स्वाध्याय करके सुसंस्कृत बनी हैं। (119)
- सभी प्राणियों को अपने पूर्व जन्म के शुभ और अशुभ कर्मों का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है।(124)

एक बार महामहोपाध्याय पण्डित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के मालवीय भवन में गीता पर प्रवचन चल रहा था। उसमें देश के प्रथम राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद के कोई प्रबुद्ध बान्धव भी उपस्थित थे। वे उस प्रवचन से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने माननीय राष्ट्रपति को इसका विवरण देकर पण्डित चतुर्वेदी की आर्थिक सहायता व सम्मान के लिए लिखकर निवेदन किया। राष्ट्रपति ने संस्तुतिपूर्वक वह पत्र केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय को भेज दिया। शिक्षामन्त्रालय में विचार–मन्थन से यह निष्कर्ष निकला कि किसी एक संस्कृतज्ञ को एक बार ऐसा सम्मान देने से बेहतर है कि राष्ट्र के चारों भागों से चार वरिष्ठ विद्वानों का चयन कर सबको सम्मानित किया जाए और यह प्रक्रिया प्रतिवर्ष दोहराई जाए। जब यह प्रस्ताव तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षामन्त्री को प्रेषित किया गया तो इस योजना में उन्होंने अरबी और फारसी के एक–एक विद्वान् का नाम भी जोड़ने के साथ इसे स्वीकृत किया। इस प्रकार पण्डित चतुर्वेदी को तो अन्य के साथ सम्मान मिला ही किन्तु उनके निमित्त संस्कृतज्ञों के प्रतिवर्ष सम्मान की परम्परा प्रारम्भ हुई और वर्षों बाद (6 फरवरी, 2002 को) इसी क्रम में उनके सुपुत्र आचार्य शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी को भी इस सम्मान का गौरव प्राप्त हुआ।

इन्हीं आदरणीय डॉ. शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी के प्रति, सन् 1998 में मेरे द्वारा पूर्व में सम्पादित उद्गार नामक पुस्तिका से कुछ विद्वानों के चयनित भावोद्गारों का यहाँ परिशिष्ट में पुनः प्रकाशन किया जा रहा है। विद्वानों के पत्रों के इस संग्रह में आचार्य चतुर्वेदी के महनीय योगदान के प्रति यह कृतज्ञताज्ञापन है।

द्वितीय स्तवक का सम्पूर्ण श्रेय आचार्य बालकृष्ण शर्मा को है। इन्होंने न केवल पत्रसंग्रह को समृद्ध किया है अपितु सावधानतया व सूक्ष्मदृष्टि से पाठसंशोधन में भी प्रभूत श्रम किया है (तथापि यदि कोई अशुद्धि रह गई है तो उसके लिए मैं ही उत्तरदायी हूँ)। इनके इस सहयोग के बिना पुस्तक को वर्तमान स्वरूप देना संभव नहीं था। अतः इनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करने के अतिरिक्त मेरे पास और क्या विकल्प हो सकता है! इसी क्रम में मैं सभी सम्बद्ध विद्वानों के साथ प्रो. वेङ्कटाचलम् के उन शिष्यों और पारिवारिक सदस्यों के प्रति भी आभार व्यक्त करना अपना आवश्यक कर्तव्य मानता हूँ जिन्होंने यह पत्रराशि सुलभ कराई।

मैं इसे नियति के चमत्कार के रूप में देखता हूँ कि वाराणसी से शिथिल व अस्तव्यस्त स्वरूप में प्रारम्भ इस संग्रह का अभियान वर्षों बाद इस स्वरूप में आकार ले सका, मानो यह महाकाल की नगरी और यहाँ के वरिष्ठ विद्वान् प्रो. शर्मा के संस्पर्श के अवसर के लिए प्रतीक्षारत था।

इस पृष्ठभूमि में तथ्य यह है कि संग्रहकर्ताओं डॉ. शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी और आचार्य बालकृष्ण शर्मा ने मुझे पत्रपुष्प सुलभ करा दिये। मैंने तो मात्र सूत्र की भूमिका का निर्वाह कर उसे मालारूप में जिज्ञासुओं का कण्ठहार बनाने का प्रयत्न किया है। हिन्दी में इसकी प्रस्तावना के द्वारा हिन्दी पाठकों को संग्रह के आन्तरिक स्वरूप की संक्षिप्त झलक दिखाना आवश्यक प्रतीत हुआ। इस समस्त प्रयास के लिए विद्वज्जन ही प्रमाण हैं। आज की संचार व्यवस्था की प्रतिरोधक परिस्थितियों में यदि इस संग्रह से कुछ संस्कृतज्ञों को भी संस्कृत में पत्रलेखन की प्रेरणा मिलती है तो यह जीवित और प्रचलित भाषा संस्कृत की अतिरिक्त उपलब्धि होगी।

संस्कृत–संस्कृति के वर्तमान युग के मूर्धन्य विद्वानों में से एक और मेरे गुरुप्रवर स्व. आचार्य रामचन्द्र द्विवेदी की स्मृति में प्रवर्तित ग्रन्थमाला का यह 20वाँ पुष्प है। इसे वर्तमान संस्कृत जगत् में अपनी विशिष्ट भूमिका के लिए प्रख्यात विद्वान् आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी को आधुनिक संस्कृतधारा का प्रतिनिधि मानकर समर्पित करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता व सन्तोष है।

आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी के मंत्री लोलार्क द्विवेदी सहित सभी पदाधिकारियों के प्रति हृदय से कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ जो वर्षों से मेरी किताबों को प्रकाशित करने हेतु तत्पर रहे हैं। यह पुस्तक उसी तत्परता का परिणाम है। मुद्रणार्थ पाण्डुलिपि तैयार करने में श्री विक्रम दवे के श्रम की प्रशंसा करते हुए मैं उनके प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ।

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, **सूर्यप्रकाश व्यास**

25 अगस्त, 2016

अनुक्रमणिका

द्वितीयः स्तवकः

प्रथम स्तवक

1

प्रेषकः – पण्डित अप्पाशर्मा राशिवडेकरः,पुणेनगरम्

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः – 1892

श्रीशिवः शरणम्

स्वस्ति श्रीमदशेषशास्त्रपारदृश्वसु धवलतमयशःपटलसमुद्भासिताशेषदिक्चक्रवालेषु प्रियसुहृत्प्रवरेषु व्याकरणाचार्याद्युपाधिमण्डितेषु ऋषिकुलव्यवस्थापकेषु संस्कृतरत्नाकरसंपादकेषु श्रीमत्पण्डित–गिरिधरशर्ममहोदयेषु श्रीअप्पाशर्मा प्रेष्ठाः। कुतोऽपि प्रचारकधूर्याणां केषाञ्चित् प्रभावेण प्रतिबद्धायां संस्कृतचन्द्रिकायां च सूनृतवादिन्यां च परित्यक्तकोल्हापुरः सोऽयं जन इदानीं पुण्यपत्तनमधिवसति। समुस्थितेऽपि चातीते वत्सरे श्रीमतां हरिद्वारतः कृपापत्रे नापारयं केनापि दैवदुर्विपाकेन व्याकुलितमानस इति क्षम्यतामेतत्प्रियमहाभागैः। मम हि तदार्नीं दिवमुपारूढा प्राणेभ्योऽपि प्रेयसी भार्येति। ततः परमपि नातिचिरादेव तामेव गतिं गतवती पूजनीयतमा श्रीमती जननीदेवी। ततः प्रभृति पुनरेकमात्र एवावशिष्टः सदने स्वयं पाकमात्रधर्मा कथं कथमप्यत्यवाह्यं कालं कियन्तमपि जीवितमिदं दुःखप्रायं परिबिभृत्। अतीते तु वैशाखे परिणीय पुनरपरां कुलकन्यकां न्यवारयमनाश्रमिताम्। सम्प्रति किलास्मि कथञ्चित् कुशली वाञ्छामि चाचिरादेव संस्कृतचन्द्रिकां प्रकाशयितुम्। आदिश्यतां यदि कार्यमिदानीं किमपि स्यात्।

प्रेष्ठा ! एते किल परिचिततमा मे पुण्यपत्तननिवासिनो बी.ए. परीक्षामुत्तीर्णा योगप्रणयिनः श्रीमन्तो देशपाण्डे इत्युपाख्यान रंगनाथसूनवो माधवराया हरिद्वारे निवसितुमिच्छन्तो धर्मे श्रद्धालवः श्रीमतां चरणमूलमनुप्राप्ताः। यावच्छक्यं विधीयतां साहाय्यमेतेषामिति प्रार्थये सनिर्बन्धं च सानुरागं च। एते हि शक्नुयुः सम्यगेवाध्यापयितुमंग्रेजीभाषां छात्रान्।

विनीतवशंवदः सखा

श्रीअप्पाशर्मा

विद्यावाचस्पतिः

2

प्रेषकः – पण्डितनृसिंहः

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः – 18-04-1914

श्रीमान्यवरशास्त्रिमहोदयेषु सादरं सप्रश्रयश्च प्रणामाः सन्तु। निबन्धनीयविषयपत्रेण सह श्रीमतां कृपापत्रमासाद्य हृष्टं मे चेतः। श्रीमत्कृतकुशलप्रश्नेन ततोऽपि कुशली संवृत्तः। धर्मे प्रमाणानां तारतम्यम् इति विषयं निभन्त्स्यामि। आशासे नवनीपवनीनिकुञ्जचङ्क्रणश्चतुरो गोविन्दोऽत्र मामनुकम्पयिष्यतीति। यत्तु एप्रिलमासस्य 22 तारकायां मध्याह्नोतरं स्वागतकारिण्या

अधिवेशनायाज्ञप्तोऽस्मि। तत्रास्मि परवानध्वनश्चातिपातश्चेति कृत्वा शास्त्रिवर्याः क्षमयन्त्येव, अपि च.....महाविद्यालयमवश्यं गमिष्यामि कार्यवशात् अतोऽपि द्वादश्यां गमागमौ न ममानुकूल्यश्चरिष्यथः। रत्नाकरस्याङ्कद्वयमलभि। किन्तु भृशं प्रार्थिता अपि उपसम्पादकमहाशया मामकीनं रामस्तवनं न प्राहैषुरिति कृपया भवद्भिरेव ते तत्प्रेषनायानुगुणानीयाः। अन्यत्र तस्य मुद्रापयिषा मां त्वरयतीव....।

अनुचरः
नृसिंहः

3

प्रेषकः – पण्डितकन्हैयालालशास्त्री,जयपुरम्
प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः
तिथिः – 31-05-1914

श्रीमत्सु, विविधविद्याविनोदविलसितान्तःकरणेषु विद्वद्वरेषु व्याकरणाचार्यन्यायशास्त्रिश्रीगिरधरलाल-शर्मसु नमस्कारपुरस्सरं सविनयं निवेदनमेतत्–
साहित्यसम्मेलनीयनिमन्त्रणपत्रं समुपलभ्य सोत्साहं खल्वागन्तुकामेन मया श्रीजयपुराधीशमहाराजसेवायामाज्ञाप्राप्त्यर्थं प्रार्थना कृता। परन्तु श्रीजयपुराधीशैः सम्प्रति कार्यविशेषानुरोधेनाज्ञा न वितीर्णा–अतोऽगत्या श्रीमत्सेवायामिदमेव निवेदयितुं शक्यते यदस्मिन् सम्मेलनकार्ये सम्प्रति कथमप्यागन्तुं न समर्थोऽस्मीत्यतः कृपया क्षन्तव्यम्। आशासे च विद्वज्जनवशीभूते मयि कृपां वितीर्य सुखीकरिष्यन्ति मां तत्रभवन्तो भवन्तः श्रीपण्डितवरा इति ।

भवदीयकृपाभिलाषिणः
कन्हैयालालशास्त्रिणः

4

प्रेषकः – पण्डितश्रीकृष्णशास्त्री, राजपण्डितः
प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः
तिथिः – ज्येष्ठ व. 10, संवत् 1971; मई, 1914

।।श्रीः।।

श्रीपरमात्मने नमः। श्रीमत्सु परमोत्साहवत्सु धीरवीरेषु सनति निवेदनं तत्रभवतां सुहृदां प्रस्तावसूचीसहितं पत्रमागतमवगतं च तद्वृत्तं परन्तु दैवायत्ततया मम प्रयासो न सफलतामधिरोहति यदभिलषितोऽपि भवद्दर्शनमुत्सवसगतिं च किञ्चित्कार्यं राजसम्बन्धिप्रतिनियतकालानुष्ठेयं समापतितमतो–न संभावये यत्समुपस्थातुं नियतोत्सवे शक्नुयाम्। निर्वृत्तकार्यः प्रयतिष्ये तु यथाशक्ति यथाकथञ्चिदपि लब्धावसरो विद्वत्समाजे सम्मिलितः स्यामिति। यदि परतन्त्रस्य

कार्यव्यावृत्तस्य स्यान्न ममागमनं तर्हि क्षन्तव्योऽयं जनो विद्वद्भिर्बोधयितव्यश्च। तत्रावधारितप्रस्तावः कृतान्ताभिज्ञनैः श्रीमन्तो मान्याः श्रीशिवकुमारशास्त्रिणोऽपि समुत्सवमलंकरिष्यन्ति न वेति। अन्ये च के प्रसिद्धपण्डिताः समेष्यन्ति महोपदेशकाश्च दीनदयालुप्रभृतयः के क इति। सर्वेभ्यो यथायथं नत्यादयः स्युः। श्री शुभम्।

श्रीकृष्णशास्त्री

5

प्रेषकः — पण्डितशालग्रामशर्मा विद्यावाचस्पतिः, बरेलीनगरम्

प्रापकः — पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः — च. शु. 6, 72; 22-03-1915

॥ ॐ ॥

श्रीमन्मान्यमहाभागेषु सप्रश्रयं सनमस्यमिदम्.

उपलब्धं पत्रं श्रीमताम्। साम्प्रतं कारणान्तरैः परित्यक्तो विचारस्तत्रागमनस्य मातृपादैः। तदहमेव नियते नेहसि तत्रागन्तास्मि। तन्मदर्थमेव कुटीरकं प्रयोजनीयं स्यात्, न तदर्थमित्यावेदयति। प्रवेशपत्रमितः प्रेषितं कार्यालये उपलब्धं स्यात्।

भवदीयः

शालग्रामशर्मा

6

प्रेषकः — पण्डितशालग्रामशास्त्री, हरिद्वारम्

प्रापकः — पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः — का.कृ.4 सम्वत्, 1973 (1916)

॥ श्रीः॥

श्रीमत्स्वनेकगुणगौरवगुम्फितेषु विद्वद्वरेषु सनमस्यमिदं निवेद्यम्।

समागतोऽहमद्यैव गृहात्। यद्यपि स्थानं, वस्त्राणि तदन्यच्च प्रायः सर्वमेवातिवृष्ट्या विकारयन्त्याऽत्याहितं मे तथापि पुस्तकानामप्रतिकार्या बिसतिर्दुःखायैव। प्रायः शतद्वयादप्यधिकस्य मूल्यकानि पुस्तकानि जलेन विनष्टानि। सम्प्राप्तोऽहं पुजारी वस्त्राणि च श्रीमताम्। श्रूयतां परं परेद्युः विसञ्जातः पुत्रजन्मोत्सवो।

सर्वमत्रकुशलम् श्रीमतामनुग्रहात्....। भवान् कार्यं गतवांश्चानागते एव मयि। श्रीदत्तशर्मणापि मासस्यावकाशो याचित इति श्रुतम्। मन्ये पितृपादानामु. . . स्यादिदानीं.. को रोगः कथश्च चिकित्स्यते इति तु न लिखितं श्रीमद्भिः स्वास्थ्यसमाचारे।

शालग्रामशास्त्री

7

प्रेषकः – पण्डितशालग्रामशास्त्री,बरेलीनगरम्

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः – पौ.शु. 14, 75, सन् 1918

श्रीमत्सु प्रियसुहृदयेषु!

सविनयं सनमस्यं चेदम्।

पूर्वं मे पत्रमवश्यं स्यादुपलब्धं तत्रभवद्भिर्वाराणस्याम् तदुत्तरन्तु प्रत्याशामुपासतापि न अद्यावधि लब्धम्। तत्कथम्? कोऽस्यार्थः? माघकृष्णपक्षे सप्तम्यां(संभवतो 22 जनवरी तिथौ) महामण्डले सम्मेलनं भावि निबन्धाश्च प्रेषणीयाः जनवरीमासस्यान्ते किञ्च माघकृष्णे 22 फेब्रुअरी अस्यामेव शताब्द्यामन्वेषणीया एकविंशतितमायां वा शताब्द्याम्?

स्यादेतत् पत्रन्त्वेतद्यदर्थं प्रेष्यते तच्छ्रूयताम्। सम्मत्यवसरे "थारी राय सो म्हारी राय महाराज" एत्येष एवाऽस्यार्थः।

शालग्रामशास्त्री

8

प्रेषकः – पण्डितशालग्रामशर्मा,बरेलीनगरम्

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः –

श्रीमत्सु गुणरत्नाकरेषु!

अनवद्यविद्याप्रसादावदातदिङ्मुखमण्डलेषु सुहृद्वरेषु सनमस्यं

सविनयश्चावेदनमिदम्।

स्मित–प्रभाभिः प्रभवन्ति यस्य कटाक्षविक्षेपवशान्निमिषन्ति।

जगन्नियन्ति भ्रुकुटीविलासेऽप्यमन्दमानन्दमहं तमीहे॥1॥

आयातं श्रीमतां पत्रं वृत्तमज्ञायि दुर्भरम्।

भारं वोढुं संशयानं दोलायितमिवान्तरम् ॥2॥

श्रीमद्भिरद्य मतिमद्भिरहं भवद्भिः संभावितः खलु यथा न तथाऽहमस्मि।

मन्येऽल्पकेऽपि करुणालयानां जायन्त एव महतामपि पक्षपाताः॥3॥

क्वायं जनश्चञ्चलचित्तवृत्तिर्गविषणाः क्व स्थिरधीर्विधेयाः।

नूनं नरो यो नर–साऽभिबन्धः किं तस्य साध्यः सरसो निबन्धः॥4॥

अहो! महति संशये पतितोऽस्मि–यद्धि कार्यमिदं स्वीकरोमि दृढमनात्मज्ञता ख्यातिर्भवति-अथ प्रव्यादिशामि-सुहृदामाद्यप्रणयभङ्ग प्रायश्चिन्ताऽभिभवशङ्क ग्रसते–तद् यथाशक्यं यथामति

आदेशाय अस्मै प्रयस्यन्नपि/यद्युपआसयिष्ये आत्मानं न तन्मे तथादोषाय स्यादिति प्रपिपद्ये। अथेदं प्रष्टव्यम्–

1. कियति खलु कलेवरे निबन्धानेन समाप्तव्यम् ?
2. लिखित्वा प्रेषणमेवालम्–उताहो मध्ये सदो वाचनीयमपि स्यात्?
3. गद्यपद्ययोः कतरस्मिन्ननेन भवितव्यमित्यपि किम् अभिनिविश्येत ?
4. सम्पृष्टस्य विषयान्तरस्य आंशिक उल्लेखोपयोगः?

क्षन्तव्यः स्यान्नवा ? यथा तुरीये द्वितीयस्य सप्तमाष्टमयोश्च इति।

भवदीयः

शालग्रामशर्मणः

9

प्रेषकः – पण्डितगङ्गाविष्णुमिश्रः

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः –

श्रीमन्तस्तत्रभवन्तो महानुभावाः!

सादरं नतयः।

अमरोहानगरे भवन्मुखश्रुतवृत्तान्तं प्रसङ्गतोऽनुमीयते यदागामिनिजुलाईमासे वाराणस्यां हिन्दूविश्वविद्यालये ध्रुवं धर्मविज्ञानविस्तारको महोपदेशकमहाविद्यालयः स्थापयिष्यते। किं तत्र प्रधानाध्यापकपदवीमलङ्कुर्वतामत्रभवतां मद्विधाः सेवकाः सहकारिणोऽप्यपेक्षाः। नाहोस्वित् भवेयुश्चेदपेक्षिताः नूनमस्मिन् दीने अनुचरे अनुकम्पा विधेया भवद्भिरिति सादरं निवेदनं नः।

नास्मान् माननीयाः मालवीयमहोदयाः सम्यक् परिचिन्वन्ति। परं भवदनुग्रहात् सर्वं सेत्स्यति। वयं सर्वथा सर्वदा भवदाज्ञानुवर्तिन एव। नात्र संशयदोलारोहणावसरः। किं बहुना विज्ञेषु।

प्रतिवचः प्रतीक्षमाणस्य

भवच्चरणसरोजरोलम्बस्य

पण्डितगङ्गाविष्णुमिश्रस्य

10

प्रेषकः – पण्डितके.शेषशास्त्री

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः –

अयि प्रियमहाशयाः!

इह खलु चिरान्नाधिगतं भावत्कं पत्रम्। कानपुरप्रवर्त्तनसम्मेलनाधिवेशनस्य न कापि वार्ता श्रुता। कर्नाटकप्रान्तेषु प्रान्तिकसम्मेलनं प्रतिष्ठापनायावकाशो देय इति सम्मेलनसमकाले मंत्रिवार्ता प्रेषिता।

सम्प्रत्यपि सकृपमुत्तरं प्रेषयेयुरित्यभ्यर्थये। सम्मेलनकार्यस्यावधिप्रवृत्तं यावद् वृत्तमपि निवेदयेयुः। आगामिविजयादशम्यामितः पुरात् श्रीशारदाभिधा संस्कृतभाषापक्षपत्रिका प्रकाशनीयेति संकल्पः कृतः। अचिरादियं भवद्हस्तगतं कुर्यादित्याशासे। एतत्पत्रिकायाः प्रसारणाय यावत्साहाय्यं तत्र भवद्भिः करणीयमिति प्रार्थये। एतत्पत्रिकाया एकैकस्याः आणकचतुष्टयं सम्मेलनाय प्रदीयेत। सकृपमुत्तरदलं कुशलवृत्तसनार्थं प्रेषयेयुरिति प्रार्थये।

भवदीयः

विद्वान् के. शेषशास्त्री

11

प्रेषकः – पण्डितः. . . . .

प्रापकः –पण्डितः. . . . .

तिथिः –

॥ श्री ॥

प्रातः स्मरणीयेषु पूज्यचरणेषु सविनयं प्रणामाञ्जलिः। यद्यपि मया निश्चितमासीद्यत्, आमरणं श्रीमत्पुरतः स्वकीयनिर्वेदकारणं न प्रकाशनीयं यतो हि तत्प्रकाशनं खलु लज्जाशून्यं कर्म भविता। परमनुदिनं भवतां श्रीविहीनं मुखमवलोक्य स्वदुःखानि वेदनस्यैव च कारणत्वेनोपस्थितं श्रुत्वा अयुक्तमपि तदत्र भवतां समक्षं निवेद्यते।

अद्यावधि एतस्या प्रकाशने कारणं तु बाल्यादारभ्य गतवर्षद्वयपर्यन्तं यावत् पितामहचरणानामस्मदुपरि छत्रच्छाया आसीत् तावद् गृहे भवतां व्यवहारः शासकत्वेनैव रूपेणासीत् इति भवद्शासनाद्भीताः सर्वेऽपि वयं विशेषतश्चाहमात्मस्थस्य कस्यचन अपि वृत्तस्य निवेदनेऽसमर्थ एवासम्। केवलं पितामहचरणानां पुरत एवं शुभाशुभं सर्वमपि वृत्तान्तमहं प्रकटीकरणे समर्थ आसम्। परं भाग्यहतकेन मूर्खेण मया तदेतद्वृत्तं लज्जया तेषां पुरतोऽपि न निवेदितम्। यदि कथञ्चित्तेषां पुरतोऽप्येतस्य प्रकाशनमभविष्यत्ततो हि मन्ये तदेतद्दिनमेव नायास्यादिति।

यद्यपि तदेतच्छ्रीमतां शासनं मत्कृते महारोगनाशक औषधमिवाभवत् तेनैव चाहमिदानीं संसारस्याग्रे मनुष्यपदभागप्यस्मि तथापि पितृचरणाः! शासनरहिते सहिते च वात्सल्ये भेदो भवत्येवेति नास्त्यविहितं तत्रभवताम्।

मत्कृते यद्यपि.. कोषादुद्धत्य प्रतारणा इति एक एव खल्वेष शब्दो निर्धारितो वर्तते तथापि नास्त्येषा प्रतारणेति अत्र खलु श्रीचरणा एव प्रमाणम्। अस्तु श्रूयतां मदीयात्मकथा दुःखकथा वा। स्मर्यतां सर्वतः प्रथमं यदहं गोपालजलधारिणा श्रीमता च सह जगदलपुरे गत आसम्। अवसरः खलु स एवासीत् मम जीवनधारायाः परिवर्तने वर्तते प्रथमः। तत्र मया यदा . . . .महाभागानां सहोदराऽवलोकिता, तदुत्तरणक्षण एव मे मनसि विचारस्तावदेव परिस्फुटितोऽभवद्यत् मज्जीवनसहचारिणी खलु एषैव कुमारी भविष्यति, नान्या काचन इति। परं बलवतो विधेर्विधानस्याग्रे

वराकस्य ममैव का कथा? न जाने कियन्ति कोमलानि हृदयानि निर्दयेन हृदयदन्येनानेन खलु विधात्रा दलितानीति। तत्परं यदाहमत्रागमम् समावर्तनान्तरं च यदा मद्विवाहचर्चा प्रारब्धा। इतश्च श्रीमन्तो . . . . . . गता आसन् तत एव चैकं पत्रं श्रीमता पितामहचरणान् प्रति प्रेषितमासीद्यत् मदीयश्वसुरगृहे श्रीमता लेख्यं यदस्मिन्नेव वर्षे यदि विवाहो न भविष्यति तर्हि अस्माभिरस्मिन् गृहे विवाह एव न स्वीकरिष्यित इति।'' पितृचरणाः तदा मन्मनसि एका आशारेखा प्रस्फुटिता अभवत्, सर्वा अपि देवता मया प्रार्थिताः यद् कथञ्चिदत्र सम्बन्धो मा भवत्विति। परं लिखितमपि ललाटे प्रोज्झितुं कोऽस्ति समर्थ इति नियमोल्लङ्घने देवताः कथं समर्था भवेयुः। अस्तु। यत्र न विधानमासीत् तत्र विवाहसम्बन्धोऽप्यभवदेव लज्जाहतकेन भाग्यहतकेन च मया हृदयोपरि प्रस्तरं स्थापयित्वा सर्वमप्येतत् कर्म चित्रवत्कृतमिति। तदुत्तरं वरयात्रा सह यदा...... महाशयोऽत्रागतस्तदा सर्वमप्येतदितिवृत्तं सहता प्रलपता च मया रामनिवासोद्याने तेषां पुरतो निवेदितम्। तैरुक्तम् अरे रे . . . .! किं त्वयैतत्कृतम्? मम माता तु एतदेवाभिवाञ्छति स्म। परं केवलं त्वत्पितुर्भयादेव तया न किञ्चिदप्यस्मिन् विषये भवत्पितुरग्रे मातुरग्रे वा निवेदितमिति। तेऽपि च प्रायश एकहोरापर्यन्तं तत्रैवोद्याने मया सह रुदन्तोऽवातिष्ठन्त। अस्तु। तत आरभ्य एव यस्मिन्कस्मिन्नपि विषये यद्विचाराः चञ्चलचित्तवृत्त्योद्भाविताः, श्रीमता प्रतारणात्वेन रूपेणाद्यावधि दृष्टा इति नास्त्यत्र भवतामन्यस्य कस्यापि वा दोष इति। अस्ति केवलं मद्भाग्यदोष एवेति। पितृचरणाः! यदा दुष्टेन विधात्रा मद्भाग्ये दुःख इति शब्दद्वयमुल्लिखितमस्ति तदा कस्यास्ति सामर्थ्यं यो मां सुखिनं कुर्यादिति।

अहमेव जाने मया कथमुपाध्यायपरीक्षायां सफलता लब्धेति। इदानीं यदाऽहं बड़ेदिनावकाशे सिकन्दरपुरेऽगमम् यदा च मया श्रुतं देव्यास्तस्याः पाणिग्रहणं कश्चिदन्य एव करिष्यतीति श्रुत्वैवैतन्मम मानस–समुद्रे ज्वारस्येव महानुत्पातः प्रारब्धः ततो निर्वर्त्य चाहं नास्मि स्वस्थचित्तः। स्वस्थचित्तेन विना च नाम कथं बुद्धिसंचारो भवेदिति। तेन विना च कथमध्ययनं संभवतीति मन्ये भवन्तोऽपि न सन्त्यपरिचिताः।

यद्यपि मया सर्वमप्येतन्मम हृदयं भवदग्रे निवेदितं परमेतन्निवेदनान्तरमहं भवत्सम्मुखागमनेऽस्मिन्नसमर्थ एव। अतो .. ... त्यागोऽत्र मया क्रियतेऽधुना। अहमस्मि भवत्पुत्र इति कृत्वा विश्वासः खल्वेष श्रीमतावश्यं कार्यो यन्मया न किञ्चिदप्यनुचितं कर्म विधास्यत इति। केवलं शान्ति–प्राप्तये भगवतः शान्तस्य निरामयस्य शूलपाणेः पार्वतीवल्लभस्य शंकरस्य चरणे गम्यत इति।

आशासे दधता किमु मन्दराचलं परमाणुकमठेन दुर्धर इति प्रार्थनां कुर्वन्तं मामवश्यं स स्वशरणे रक्षयिष्यतीति। मदन्वेषणाय न खलु श्रीमता कष्टः कार्यः। यदा किञ्चिदपि शान्तिलाभो भविष्यति स्वयमेवाहं भवच्चरणदर्शनं करिष्यामीति। मम सविनयप्रणामाः।

दुःखी . . . .

12

प्रेषकः – पण्डित अखिलानन्दशर्मा, कविरत्नम्, प्रयागः

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथि – 17-10-1917

श्रीमन्नमोऽस्तु भवते।

संस्कृतसाहित्यसम्मेलनस्य कृते मया यत्र–तत्र गत्वा पृष्टाः कतिचन जर्जरीभूताः विद्वांसः। यदुत्तरं तैस्तत्रविषये दत्तं न तन्मनोरमम्। भवद्भिरत्रविषयेऽनवरतं परिश्रमो विधेयो–यथा चारितार्थ्यमत्र विषये स्यात्। मद्हस्तेऽद्यापि पीडा वरीवर्ति। नातः किमपि लेखनीमुत्थाप्य लिख्यते– क्षन्तव्यमतःपरम्।

भावत्कः

अखिलानन्दशर्मा

13

प्रेषकः – पण्डितभट्टश्रीरमानाथः 'शुद्धाद्वैतमार्तण्डः', मुम्बई

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः – श्रावण शुक्ल 1बु., 11-08-1918

महाशयाः प्रणामाः।

भवतां संग्राहकपत्रप्राप्त्यनन्तरं मया विद्यार्थिद्वारा 4 रूप्यकाणां राजनिंदशपत्रक (मनीआर्डर) प्रहितम्। तदेव भवद्भिराङ्ग्लेष्वक्षरेषु तथाऽतथा वाचितम्। भवतु मयैवेतेत्प्रहितमिति ज्ञेयम्। चि. मथुरानाथे शुभाशीर्वादपूर्वकं कुशलं वाच्यम्। कृपा प्रचीयतां विशेषेति।

भट्टश्रीरमानाथः

14

प्रेषकः – पण्डितमुल्कराजशर्मा, पटियाला

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः – 04-12-1918

॥ श्रीः॥

श्रीमत्सु प्रियमित्रेषु प्रणतयः।

क्षमार्थमर्थी भवतो भवामि, यन्मया पितृव्यदेवानां स्वर्गमनखिन्नेन पत्रं नाप्रेषि। परमतोऽपि संशयितोऽस्मि यत् किमिति पत्रं श्रीमता न दत्तम्। ज्ञातुमिच्छामि कुशलं भवतः। श्रीमन्तो लवपुरे

सनातनधर्मविद्यालयं सनाथयिष्यतीति श्रुतवतो मे वेलामतिचक्रा प्रमोदपाथोनिधिः। अपि नाम कुशलिन एव भवन्तः शरीरेण गृहेण च। किं तत्र श्रीमन्तः सम्प्रति कुर्वन्ति? सम्मेलनं च भविष्यति कुत्र? चिरञ्जीविने शुभाशीः। श्रीमन्तः पत्रोत्तरं दीयमानं याचे।

कृपाभिलाषी
मुल्कराजशर्मा

15

प्रेषकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः, जयपुरम्
प्रापकाः – सम्मेलनसदस्याः
तिथि – 22-07-1919, श्रा.कृ.1 0 संवत् 1976

श्रीमन्तो महाभागाः!
अतीते फाल्गुने मासि मद्रासप्रान्ते श्रीरङ्गसविधे माननीयस्य श्रीमतो रङ्गस्वाम्ययङ्गारमहाशयस्य प्रबन्धेन म. म. श्री हाथीभाईशास्त्रिणो जामनगरराजपण्डितस्य सभापतित्वे समवेतेषु शताधिकेषु विद्वत्सु यत्संस्कृतसाहित्यसम्मेलनस्य षष्ठमधिवेशनमभूत्। तत्र सर्वसंमत्या स्वीकृतः तृतीयः प्रस्तावः श्रीमद्भिः सबध्नातीति विज्ञापनार्थं श्रीमत्सकाशे संप्रेष्यते। आशास्यते च लोकोपकृतिबुद्ध्या मातृभूतायाः सुरभारत्याः संसेवनमावश्यकं मन्वानाः श्रीमन्तः प्रस्तावानुरूपं कार्यमवश्यं विदध्युः उत्तरेण च मां त्वरितमनुगृह्णीयुरिति।
श्रीमन्तो ह्यतीताब्दनिर्दिष्टायाः शिक्षाक्रमसंशोधकोपसमितेः सदस्या इति प्रस्तावेनानेन शिक्षाक्रमसम्बन्धे स्वमतप्रकटनाय पुनरपि प्रार्थिताः। प्रश्नावली पुनः श्रीमत्सकाशं संप्रेष्यते। झटिति स्वमतप्रकाशनार्थमुत्तराणि च प्रार्थयते।

संस्कृतसाहित्यसम्मेलनस्य तृतीयः प्रस्तावः

संस्कृतशिक्षाक्रमपरिशोधनविषयकः प्रयागाधिवेशनस्वीकृतस्तृतीयः प्रस्तावः शिक्षाक्रमसम्बन्धे कार्यालयात्प्रकाशिता प्रश्नावली, मान्यानां विदुषां कियन्ति चिदुत्तरपत्राणि चेति सर्वमवलोक्य विमृश्य च सम्मेलनमिदमेतदावश्यकं मन्यते –यदतीवोचिता विचार्याश्चेमे प्रश्नाः।

बहूनां च विदुषां सम्मतिसङ्ग्रहोऽत्रावश्यकः। तस्मात्पुनरपि प्रश्नानिमान् संप्रेष्य महतां विदुषां सम्मतिसंग्रहे प्रयतनीयम्। विशिष्य दाक्षिणात्यानां विदुषां सम्मतिसङ्ग्रहाय श्रीवाणीविलासयन्त्रालयाध्यक्षः श्रीबालसुब्रह्मण्यशास्त्रिमहाशयः संप्रार्थ्य विनियोज्यः। गुर्जरप्रान्तीयविदुषां च सम्मतिसंग्रहमेतत् सम्मेलनसभापतिः म. म. श्रीहाथीभाईशास्त्रिमहोदयः कृपया विदध्यात्। एतत्संग्रहफलं मासषट्काभ्यन्तरे महाशयाभ्यामाभ्यां प्रधानकार्यालये प्रेषणीयं

स्यात्। अतीताब्द निर्दिष्टोपसमितिसदस्या अपि पुनः स्वमतेन क्रमनिर्धारणाय प्रार्थनीयाः। सर्वमिदं विचारायाग्रिमे सप्तमेऽधिवेशने समुपस्थापनीयम्।

प्रस्तोता
श्रीगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

सर्वसम्मत्या स्वीकृतः।

अनुमोदकः
श्रीकृष्णमाचार्यमहाशयः

16

प्रेषकः – पण्डितसूर्यनारायणशर्मा आचार्यः, जयपुरम्

प्रापकः – श्रीमन्तो गिरिधरशर्माणः शिक्षासमितेः सं. का. मन्त्रिणः, जयपुरम्

तिथिः –

श्रीमत्सु धर्म्मोद्धारप्रवृत्तेषु विद्याप्रचारनिरतेषु सादरं निवेदनम्।

वर्तमानमासस्य द्वादशतारिकायां लिखितं भवत्कृपापत्रमवाप्य तत्रस्थभवन्निर्देशानुसारं तृतीयश्रेण्या द्वितीयतृतीयदिनार्थं काव्यानुवादयोः प्रश्नपत्रद्वयं संपाद्य मुख्याधिष्ठातृमहाशयानां सेवायां हरिद्वारे प्रेषितम्। अस्मिँल्लोकोपकारकर्मणि मामपि विनियुञ्जानेन भवता ममोपरि सुमहाननुग्रहः कृतस्तदर्थं भूयो भूयो धन्यवादान् वितरामि तत्रभवद्भ्यः। किञ्च यथासमयं भूयोऽपि कस्मिंश्चिदेतत्साध्ये विनियोगेऽनुयोक्तव्योऽयं जन इति सोत्कण्ठमभ्यर्थये।

भवदादेशवर्ती
सूर्यनारायणशर्मा आचार्यः

17

प्रेषकः – पण्डितसूर्यनारायणाचार्यः, जयपुरम्

प्रापक : – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः, जयपुरम्

तिथि – 08-12-1920

॥श्री॥

नमः स्नेहास्पदाय सुहृदे।

भवत्कृपापत्रं प्राप्तम्। 'प्रवृत्तकार्यो न निर्वर्ततताम्' इति बुद्ध्या यत् भवता रामचन्द्रस्तत्र गृहमागच्छन्नपि स्थापितो यच्च कथञ्चिदपि स एव परीक्षायां संप्रवेशानुमतिं प्राप तत्सर्वमपि भवतः कृपायाः सत्परामर्शस्य च फलमिति। तदर्थं भूयो भूयो धन्यवादान् समर्पयामि। मन्ये स इदानीं भवदवेक्षायां वर्तमानः सम्यग्विद्याभ्यासे प्रवृत्तः स्यात्। तदनुसारं शतं रूप्यकाणि प्रेषितानि प्राप्तान्येव तेन। समयानुसारं वस्त्रादिव्यवस्था विधेया। यथा च स नास्माकं स्मरेत् तथा लालनीयः। मदर्थं कम्बलक्रयरूपमपि कार्यं शोभनमेव समाचरितम्।

श्रीवीरेश्वरशास्त्रिणां विश्रामवृत्तिर्नाद्यापि जयपुराधीशेन स्वीकृता भवतीति न कश्चिदुद्योगावसर इदानीं यावत्। यद्यपि 'एहि आस अटक्यो रहे, अलि गुलाब के मूल, व्है व्हैं भूरि बसन्त ऋतु इन डारिन वे फूल'' इति भाषापद्याशयानुसारं चिराल्लघुना वेतनेन जयपुरराज्यं सेवमानेन मयाऽपि चिराल्लक्ष्यीकृतमिदं पदं, वर्तते। चासति कस्मिंश्चिन्महति प्रत्यूहे ममैव संभावना, तथापि मदीयार्थगौरवविच्छेदं विना यदि नास्त्येव काचिदन्या गतिस्तर्हि प्रयततां भवान् यावत्सामर्थ्यमहमपि करिष्यामि साहाय्यसेवाम्। न्यायस्तु नैतत् संमनुते। परं सौहार्द बलवत्तरं ततः। किमत्र बहु वाच्यम्। आयात्येव भवानस्मिन्नेव मासे तदा भूयो विमर्शः स्यात्। पत्रोत्तरं शीघ्रं लेख्यम्।

सखा सूर्यः

18

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

प्रेषकः – पण्डितकालीप्रसादमिश्रः, वाराणसी

तिथिः –

॥श्रीः॥

श्रीमन्तः पूज्यपादाः म.म.पण्डितप्रवराः गिरिधरशर्ममहोदयाः!

प्रणामं विनिवेदनम्।

अपि जानन्ति तत्रभवन्तः वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य कुलपतिमहोदयैः काशीस्थैर्बहुभिर्विद्वद्भिः सम्मानितप्राध्यापकपदं लालितम्। परं मदीयं नाम न संग्रहीतमिति विलौक्यैतमवमानं दूयमानस्वान्तो भूयो भूयः स्मरामो महाप्रभावान् भवत एव। आशासे च भवतां सम्मानश्चेत्कुलयोमसावयो समुपतिष्ठेत द्रुतं मनोरथः सफलो भवेदिति।

कतिपये लोका आगत्य मामवोचन् यत् संस्कृतविश्वविद्यालयस्य वी.सी. महोदयः यदान्तरमलं–चिकीर्षतीति समयेऽत्र नागरिकविद्वत्समित्या अभिनन्दितोहम्भवेदिति तदर्थं नियोजितायाः समितेर्भवन्तः कर्णधाराः भवेयुरिति। कार्येऽत्र शिवदत्तो नियोजनीयः। स सर्वं सम्पादयितुमर्हतीति।

भवदीयः

पण्डितकालीप्रसादमिश्रः

19

प्रापक : – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

प्रेषकः – मदनमोहनः(मालवीयः)

तिथिः –

॥ श्रीः॥

श्रीमत्सु महामहिमशालिषु, निखिलशास्त्रनिष्णातेषु परमौदार्यगाम्भीर्यधैर्यवत्सु सकललोकमान्येषु प्रणतिपुरस्सरमावेदयते जनोऽयम्।

श्रीमतां·पत्रं करकमलकोरकाङ्कितागतमुपगतमभिवाच्य कृपापरं प्रासीदम्। तच्च 'श्रीसुखदेवसहायक–सनातनधर्मसभाया' अधिवेशने समुपस्थितसभ्यवृन्दसम्मुखे अश्रावयम्। सभ्यवृन्देन सानन्दमनुमोदितं नृपतिद्वारमभिप्रापय्य राजमात्रा सह संभाव्य श्वः समागन्तुकस्य श्रीमतः पृथिवीपतेः श्री 108 श्रीसुखदेवसिंहवर्मणो निदेशः सप्रतीक्षमाणो, विलम्बमकरवं पत्रोत्तरदाने।

अद्य पुनरपरं भवदुपढौकितमधिगम्य पत्रमनिश्चितार्थोऽपि तदिदमुदन्तम् वेदयितुमिदं पत्रं लिखितुमध्यवस्यम् । वयमिह सनातनधर्मानुरागिणः सर्वथा आत्मधर्मसमुन्नतये श्रीमदादिष्टकार्य्यं सम्पादनाय गौरवाय च श्रीमतां महानुभावानां यतामहे। पूर्वं सभाद्वारैव, निमन्त्रयितुमुद्यताः श्रीमन्तः श्रीराजमातुः सम्मतये यत्समीपमुपगता राज्यद्वारैव श्रीमतां निमन्त्रणमुचितं विशिष्टं श्रेयसे चेत्याकलय्य दिनद्वयं प्रतीक्षामहे ततो नरपत्यादेशमादाय त्वरितमेव तडित्–पत्रद्वारा भवन्तं सूचयिष्याम इति विचारनिर्णयः। इत्यलं बहुना।

श्रीमतामनुग्राह्यो

मदनमोहनः

20

प्रेषकः – श्रीज्ञानेन्द्रनाथसेना

प्रापकः – पण्डितगिरिधर शर्मा चतुर्वेदी

तिथि : –

ऋषिकुल आयुर्वेदिक महाविद्यालयः ग–519/सा/52

परममाननीयेषु ....सर्वतन्त्रस्वतन्त्रेषु

महामहोपाध्यायेषु........

सादरं प्रणतयः।

परमामोदास्पदं यल्लवपुर्यैर्दीवान–बहादुर–दीवान–कृष्णकिशोरवर्ममहाभागैर्भवतामायुर्वेद–विद्यालयीयान्वन्तरमन्दिरे भगवतां प्रस्तरविग्रहं स्थापयितुकामा वयं मूर्तिनिर्माणार्थमर्थप्रदानेन सनाथीकृता :।

भवतां रत्नाकरस्यायुर्वेदाङ्कमलङ्करिष्णु सुरुचिरं श्रीभगवतश्चित्रं शिल्पिसाहाय्यायात्रेष्यते। नातिविलम्बतो यथासौविध्यं तदत्र सम्प्रेष्यानुग्राहयिष्यन्ती मञ्जनं कष्टश्चापीदं नातिमंस्यन्ते तत्रभवन्तः श्रीमन्तः इत्याशा बलीयसी।

भवत्कानां

श्रीज्ञानेन्द्रनाथसेनानाम्

श्रीऋषिकुलायुर्वेदमहाविद्यालयाध्यक्षाणाम्

21

प्रेषकः – आचार्यबदरीनाथशुक्लः

प्रापकः – पण्डितगोपालशास्त्रिदर्शनकेसरिमहोदयाः, काशीस्थाः।

तिथिः –

परमादरणीयेषु पण्डितवर्यश्रीशास्त्रिमहाभागेषु

सप्रणामं सादरं विज्ञापयति।

भवतां शुभाशीः पत्रं प्राप्य धन्यतां हर्षोत्फुल्लतां च प्राप्तः। विश्वसिमि श्रीमतामाशीर्वादा एवमेवोत्तरं प्राप्स्यन्ते यद्बलेन भवतां भावनानुसारेण नूतनपदद्वारा संस्कृतजगतः कांचित् तथाविधां सेवां कर्तुं शक्ष्यामि यया श्रीमतां मनस्तोषो नूनं सम्पद्येत।

स्वीयैराशीर्वचनैर्मेऽभिवर्धनाय......विश्वनाथः श्रीमतः स्वस्थानचिरं रक्षेदिति तदीयचरणेषु प्रार्थयमानो

भावत्क एव

बदरीनाथशुक्लः

22

प्रेषकः – पण्डितलक्ष्मणशास्त्री द्रविडः

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथि – 23-03-1921

॥ श्रीगुरुः शरणम्॥

श्रीमत्सु विद्वत्प्रवरगिरिधरशर्ममहोदयेषु सप्रणति निवेदयति।

महोदयाः!

मया श्रीयुत्पण्डितगण्डाशर्मसविधे पूर्वमेव पत्रमेक प्राषेतम्। भवदुल्लिखितप्रकारेण स्थायिकोष–स्थापनमावश्यकमेव। दाता केन प्रकारेण सङ्कल्पितं द्रव्यं पात्रसाचिकीर्षति तदद्यापि न ज्ञातम्। तदवगत्यर्थमेव खलु पत्रं प्रेषितम्। उत्तरप्राप्त्यनन्तरमेतद्विषये यथावकाशं निवेदयिष्यते। श्रीमतां प्रयत्नः सर्वथा परमेश्वरकृपया फलेग्रहिर्भवतादिति प्रार्थयामि निरन्तरम्। किमधिकेन।

श्रीमताम्

श्रीलक्ष्मणशास्त्री

23

प्रेषकः – पण्डितमाधवाचार्य्य, रविसंस्कृतपाठशाला, डेराबसी, अम्बालानगरम्

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः – 10-11-1922

॥ॐसर्वस्मादिन्द्र उत्तरः॥

श्रीमन्तो गिरिधराचार्यशास्त्रिणोऽभ्यर्य्यन्तेऽधस्तनपद्यैः।

विद्वत्सामन्तसम्राट् कविकुलतिलकः सर्वतन्त्रस्वतन्त्रो,
गीर्वाणाचार्य्यवाणीप्रवणगुणगणाऽग्रण्यधन्यः शरण्यः ।
प्राधान्याध्यापको यो निखिलमुनिमनोवेद्यनिष्ठप्रतिष्ठः
श्रीमच्छास्त्रार्थवीरो जयति गिरिधराचार्य्यवर्य्यो गुणार्य्यः ॥1॥

युक्तं यस्य वचो हरिध्वनिनिभं यावन्न कर्णौ गतं,
तावन्नूत्नसमाजचारिकिरिणो गर्जन्ति गर्वोद्धताः ।
सोऽयं व्याकरणेन्दुधार्म्मिकदशाव्याख्यानवाचस्पति–
र्भूयान्नोऽभिमतप्रदोगिरिधराचार्य्यो गुणार्य्योऽधुना ॥2॥

प्रान्ते अम्बालासंज्ञकेऽस्ति नगरी 'डेराबसी' विश्रुता–
स्तस्यां धर्म्मसनातनस्य नितरां ह्रासस्समुज्जृम्भते।
न श्राद्धं प्रतिमार्चनं न च कथा पौराणकीया क्वचिद्
हा ! कष्टं खलु 'कूपदर्दुर' निभस्सर्वो ऽत्र संजीवति॥3॥

तस्मान्मन्त्रियुतैः सनातनसभासभ्यैरहं प्रेरितः
श्रीमन्तं बहु प्रार्थये सविनयं द्राग्दर्शनं दीयताम्।
चेद्यस्मिन्दिवसेऽपि मार्गनियते यात्रावकाशो भवेत्,
तन्निश्चित्य वयं दलेन भवता विज्ञापनीया द्रुतम् ॥4॥

विद्यन्ते बहवः सनातनपथव्याख्यातृवर्य्या भुवि,
किन्तु श्रीमद्वण्यगौरवकथाक्रीता वयं केवलम्।
त्राताः श्रीगिरिधारिणेन्द्रभयतो गोपा यथा गोकुले,
नाम्नस्साम्यतया तथैव भवता संरक्षणीया वयम्॥5॥

तदिहागमनं विधीयतां,भगवन्! मार्गसिते दले द्रुतम्।
दिवसं च विचार्य्य लिख्यतां, विदधे येन सभाप्रबन्धकम्॥6॥

अधिकं किमु वच्मि साम्प्रतं नास्माकं भवदन्तरा गतिः।
यदि नागमनं कृतं तदा हा! हा! धर्म्मसनातनो हतः॥7॥

भवतां पुरतो लघीयसी ननु मे सानुनयं वरार्थना।
न नियोगविधिं समीहते,क्व नु पूज्याः क्व च मन्दधीरहम्॥8॥

स्वयंदासः स्वदेशस्य, रामचन्द्रस्य सेवकः।
शास्त्री श्रीमाधवाचार्य्यः प्रतिवादिभयंकरः ॥9॥

माधवाचार्य्यशास्त्री

24

॥श्री॥

प्रेषकः – पण्डितगोमृनाथः मिश्रः, खंभातम् गुजरात

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः, जयपुरम्

तिथिः – 1932

परममाननीयमहोदयाः!

अयमहं मिथिलादेशीयः प्राचीनार्वाचीनन्यायशङ्करवेदान्तयोः कृतभूरिपरिश्रमो विहारोत्कलीयन्यायोत्तमायां ई. 1922 वर्षे काशीराजकीयमहाविद्यालये न्यायाचार्ये ई. 1928 वर्षे बड़ोदाराजकीयन्यायोत्तमायां परीक्षायां चोत्तीर्णः सम्प्राप्तन्यायरत्नोपाध्यायाचार्यपदवीको वर्षत्रयपर्यन्तं खुर्जाश्रीराधाकृष्णसंस्कृतमहाविद्यालये सम्पादितनिष्कलंकाध्यापनकृत्यः साम्प्रतं द्रव्यविरह– प्रयुक्तः वेद– विरोधि....जनाध्यापनेनात्मनीयधर्मं विध्वंसयन् तज्जन्यैः हि कामुष्मिकदुःखं चानुभवन् यथा कथञ्चित्कालं नयामि। उदीरितसकलपरीक्षोत्तीर्णतासूचकानि अन्यान्यपि म. म. गंगानाथझा–गोपीनाथ–कविराजानन्द – शङ्कर–ध्रुव–प्रमथनाथभट्टाचार्यमहोदयप्रभृतिभिर्दत्तानि प्रमाणपत्राणि दूरदेशवासितया मन्निकटे न सन्ति। येन तत्प्रतिलिपिप्रेषणेनाधुना भवतां विश्वासपात्रतां लभेयमित्यनायत्या पुरोदीरितकोविदैः पण्डितप्रकाण्ड– श्रीबालकृष्णमिश्रैः भवत्परिचितश्रीघूटरशर्मप्रभृतिभिर्वा मदीयां योग्यतां विनिश्चित्य मथुरानगरीयचतुर्वेद–विद्यालये रिक्तन्यायाचार्यपदे नियोगेन मामनुकम्पास्पदीकुर्वन्तु भवन्त इत्याशासे–

मथुरायामहमीहे अध्यापनवृत्त्या स्थितिं विधातुमतः।
मम गोमृनाथविदुषः श्रीगिरिधर एव केवलं शरणम्॥1॥
अहमेव गोमृनाथस्तथापि दैन्याद्वरं परं प्राप्तः।
मथुरामस्मि यियासुर्गोप्तारं मनसि गिरिधरं स्मृत्वा ॥2॥
अनुमानगतोपाधेर्निरसनकर्मणि वयो मया नीतम्।
श्रीगिरिधरं विना मम वित्तोपाधिं परो हरिष्यति कः॥3॥

मामकं शिरोनाम–

पण्डितगोमृनाथः मिश्रः

25

प्रेषकः – पण्डितश्रीकान्तपाण्डेयः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्, उत्तरप्रदेशः

तिथिः – 31-12-1962

स्मरणीयबान्धवाः!

नमस्काराः।

अपरातीते मासे भवतो पत्रोत्तरं नादायि इति मदीयमपराधं क्षन्तुमर्हन्तु भवन्तः । यतो हि असकृत्सकृदपराधेऽपि महानुभावाः सहन्ते परन्तु क्रियासमभिव्याहारेण क्षमी क्षन्तुमर्हति। परीक्षा

अप्रेलमासे चतुर्विंशतितारिकातः भवितेति नात्र कापि विप्रतिपत्तिः। परीक्षाकालः प्रातवातसंवलितो भवितेति।

तदानन्दानुभूतिर्नायास्यति। श्रीमत्याः पराम्बाभगवत्याः कृपया मदीयमध्ययनं यत्किञ्चिद् भवत्येव भवतामपि सम्यग्रूपेण स्यादिति कामये। नमो भवद्भ्य उमाकान्तादीनाम् आचार्यश्रीपन्त-महोदयानाम्।

भावत्कः

श्रीकान्तपाण्डेयः

26

प्रेषकः – पण्डितगोपालशास्त्री, जोशीमठ, चमोली।

प्रापकः – पण्डितबन्दीकृष्णत्रिपाठी, वाराणसी

तिथिः – 21-04-1965

॥श्रीकृष्णः शरणं मम॥

शुभाशीराशिः। ह्यः पत्रं प्राप्तम्। पश्चाङ्गं दृष्टम्। बालः शोभनः। . . . . अस्तु।

अहन्तु सर्वमपि समयोचितं पत्रं सम्प्रेष्य भवतः पत्रस्य प्रतीक्षायामासम्। . . . अतोऽहं नोपालम्भपात्रम्। इत्यलम्। . . . .

"सौभाग्यपुष्टिबलशुक्रविवर्धनानि किं सन्ति नो भुवि बहूनि रसायनानि।
कन्दर्पवर्द्धिति परन्तु सिताज्यदुग्धादुष्णादृते न मम कोऽपि मतः प्रयोगः॥" (लोलिम्बराजः)
भवान् तदेव ददातु। इत्यलम्।

पण्डितगोपालशास्त्री

27

प्रेषकः – श्रीगोपालशास्त्री

प्रापकः – कविभूषणं श्रीभुवनेश्वरप्रसादचौधरी भुवनेशः पाटलीपुत्रस्थः

तिथिः –

श्रीकविभूषणमहोदयाः। गाण्डीवे प्रकाशितं भवतां प्रतिज्ञानाटकं मया सर्वं न पठितम्। तत्र पत्रोपलब्धेरव्यवस्था हेतुः। यावानंशः पठितः तमपि तु (प्रूफ) प्रारूपपत्रशोधकमहाभाग-प्रसादादपठितमेव जानन्तु। तथापि न हि कस्तूरिकामोदः शपथेन विभाव्यते इति न्यायाद् भवतां कृतिरियं भारतीयाचार्यचित्रणं करोतीति स्वतन्त्रे भारते प्राकाश्यमर्हति।

अतश्च कमपि स्वमान्यं विद्वांसं दार्शनिकं महाकविं दर्शयित्वा तदीक्षणपूतं च कृत्वाऽवश्यं पृथक् पुस्तकाकारं प्रकाशयन्तु। भवानपि पुनरेकदा शब्दविन्यासं निभालयतु। यत्र–तत्र एकः शब्दः सम्यक् प्रयुक्त इत्यादिनियमस्य व्यत्यासो मयोपलक्षितोऽस्ति। इति तु सम्पूर्णग्रन्थावलोकनादेव

सम्भवति। तच्च भवत्साध्यम् एव। नास्ति कोऽपि पाणिनेः कात्यायनवत् तस्य च पतञ्जलिवत् संवर्द्धकः समर्थको वेति शिवम्। मम तु नास्ति समयोपलब्धिर्यत् सर्वां भवद्रचनां पश्यामि किन्तु समीहे प्रकाशनमस्य। अङ्गणम् प्राङ्गणं चेत् कीदक् इति विमृशतु। एवमेव बहुत्र शब्दविन्यासो दृश्यः।

श्रीगोपालशास्त्री (सम्पादकः)

28

प्रेषकः – पण्डितशिवाधारः, साउथ जहांगीराबाद, प्रयागरोड, जौनपुरम्

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम

तिथिः – श्रावण शुक्ल 11 2022 (1965)

॥ श्रीः ॥

विलसन्तुतरां श्रीमतां तातपादानां श्रीमताञ्च पुण्यश्रीकेषु श्रीचरणेषु प्रणतिततयः शिवाधारस्य।

श्रीमतां कृपापत्रं प्राप्यातिमहतीं मुदमुपगतः। श्रीमतां श्रीमत्पितृचरणानां मातृचरणानां सर्वेषां च बन्धुबान्धवानां सुहृदाञ्च सर्वाभ्युदयं हितं कुशलं कामये। यदनुष्ठानं करुणोद्वेलचित्तैर्भवद्भिर्मत्कल्याणाय क्रियते तत्कृते दाक्षिण्यसिन्धुकल्पाः श्रीमन्तः सर्वथा सर्वदा च श्रीमद्गुणगणश्रद्धापूरविलुलितस्य कृतज्ञता– कोट्यावर्जितस्य च ममाशेषान् धन्यवादानर्हन्ति।

अनेककार्यव्यापृततया विद्यालयादनुपलब्धावकाशो निर्दिष्टक्रमेण विधेयानां हवनानां कृते स्यादहमुचिते समये दातुं न पारयेयम्। अतः श्रीमद्भिः प्रतिव्यक्ति 130 पाठाः करणीयास्तत्क्रमेण च। कस्मिन्दिवस आगत्य मया जगदम्बापूजनं पाठपरिसमाप्तौ विधेयमिति श्रीमद्भिः कृपया लेखनीयम्। प्राप्तारोपावलीकानामपि भवदावुत्तानां कापि हानिरन्ततो न भविष्यतीति मदीयो ध्रुवो विश्वासः। जगदम्बाकृपया तीर्णाशेषापदुदधयेऽचिरेण वीतचिन्ता भविष्यन्ति। तेभ्यो वैद्यमहोदयेभ्यश्च मम प्रणामाः निवेदनीयाः।

श्रीमतां कृपाकाङ्क्षी

शिवाधारः

29

प्रेषकः – शिवाधारः तिलकधारी महाविद्यालयः, जौनपुरम्

प्रापकः – पण्डितगिरिधरशर्मा चतुर्वेदः

तिथिः – पौष कृष्ण 4 संवत् 2024

विलसन्तुतरां शिवाधारस्य प्रणतिततयः श्रीमतां चरणसरसीरुहेषु।

येषां लोकविश्रुतकीर्तीनां दतियास्थस्वामिमहोदयानां कृपाभाजनतां तातपादाः प्राप्ताः तेषां सङ्केतस्थानं न जाने। संलग्नं पत्रं तेषां सविधे प्रेषणीयम्। यदि नातिखेदकरं तर्हि तातपादानामप्यनुरोधपत्रं संलग्नेन पत्रेण सहैव सम्प्रेष्यानुग्रहीतव्योऽयं दासजनः।

अस्मत्प्रणामततयो मातृपादानां पितृपादानाश्चानन्तश्रीकेषु पादाम्भोरुहेषु सविनयं निवेदनीयाः। का वार्ता विद्वद्वृन्दवन्दितचरणनखचक्राणां वेदान्तज्ञानसफलीकृताशेषपूर्वपुरुषजन्मनां लोकप्रथित-यशसां श्रीमतामुपाध्यायमहोदयानाम्? आशासे हिन्दीभाषायां चतुःसूत्रीभाष्यलेखनानन्तरं भामतीभाष्यमपि तैर्महाभागैर्लिख्यते।

श्रीमतामनुचरः

शिवाधारः

30

प्रेषकः – पण्डितश्रीरामकुबेरमालवीयः

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथि – 23-03-1967

॥ श्रीः ॥

वदनद्युतिसन्दोहध्वस्तान्तर्ध्वान्तसंचया। भास्वती भारती भूयो भूयाद् बोभूरिभूतये॥1॥
भवत्सुन्दरपत्रेन्दोरागतायां रुचाविह। प्रबुद्धो मे मनःकोशः पूर्णिमायां यथाम्बुधिः ॥2॥
स्निग्धगम्भीरमसृणमधुरोदारधीरवाक्। विद्वन्मानसपद्मान्तस्त्वमेकः षट्पदायसे॥3॥
स्नेहेन भवदीयेन ज्ञातेनाद्य महामते । तापेन हिमरेखेव मनोम्लानिर्विलुप्यते॥4॥
दृष्ट्वा पत्रं तव प्रेम्णा सूर्योदयमिवानघ। नाहमद्य तमो व्याप्तो मूढबुद्धेरिवाशयः॥5॥
समाचारस्त्वदीयोऽद्य मत्सकाशं समागतः। आनन्दयति मां प्राज्ञ स्वयं प्राप्तेहितार्थवत्॥6॥
पीत्वामृतं तृप्तिकारि त्वदीयकवितोद्भवम्। भूयोभूयः प्रशंसां ते करोमि विदुषां वर॥7॥
विवाहो रुक्मिणीदेव्याः सम्पन्नः कृपया सताम्। भवादृशां कवीनां च मङ्गलाशीर्वचश्चयैः ॥8॥
भवतामनन्यरूपः शिवजीनामा कविप्राज्ञः । विवाहे न सम्प्राप्तः किञ्चिदस्वास्थ्यकारणचयात्॥9॥
श्रीमान् रामकुबेरोऽयं मालवीयस्सुधीवरः। याचते चण्डिकाजानिं मङ्गलानि सदैव वः ॥10॥

पण्डितरामकुबेरमालवीयः

31

प्रेषकः – पण्डितश्रीरामकुबेरमालवीयः

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथि – 23-11-1967

॥ श्रीः ॥

श्रीमन्माननीयाः पण्डितदुर्गादत्तमहोदयाः मङ्गलानि सततं सन्तु।

श्रीमत्सु काव्यरसचर्वणसावधानचित्तेषु रम्यकवितावनिताप्रियेषु ।
आशीर्वचांसि विलसन्तु सदैव दुर्गादत्तेषु चूतविरचिष्विव(?) सत्फलानि॥1॥

पत्रं समीक्ष्य भवदीयकरारविन्दसञ्जातलेखविहिताक्षरभृङ्गमालम्।
स्वान्तं मदीयमति हर्षतरङ्गरङ्ग –क्रीडाश्चकार रागवृन्दमिवापगासु॥2॥
आराध्य यां भगवतो प्रभवन्ति मूढास्सत्काव्यकौशलकलाप्रविधानदक्षाः।
विन्ध्याचले स्वमहसा सुविराजमानां देवीं तु साम्प्रतमहं परिचिन्तयामि॥3॥
वाग्देवतामृदुरणन्मणिकिंकिणीकपादारविन्दमुखरीकृतहृत्कुटीर।
श्रीकालिदासकवितारसचञ्चरीकः श्रीमालवीयकविरामकुबेर एषः॥4॥

पण्डितरामकुबेरमालवीयः

32

प्रेषकः – पण्डितश्यामकुमार आचार्यः, अधिवक्ता
प्रापकः – पण्डितश्रीगोपालशास्त्री, वाराणसी
तिथिः – 9-12-1977

पण्डितवर्याः! दर्शनकेशरिणः।

सादरं सप्रेम वन्दे।

प्राप्तं यथासमयं भवत्पत्रं 12-11-1977 तिथ्यात्मकम्। ज्ञातं च वृत्तम्। मया 3–4 पत्राणि, जून 77 मासात्प्रारभ्य अद्ययावत् लिखितानि व्यवस्थापकमहोदयाय तथा सम्पादकमण्डलाय नम्रतापूर्वकं प्रथमं तदनन्तरं रोषपूर्णमपि। यतः एकस्य पत्रस्याप्युत्तरं नहि दीयते। इदं सर्वं रोषकारणं तथा च आश्चर्यकरमपि। अतः जनवरी 77 तः .... प्रारब्धं जनवरी 78 मासं यावत् प्रचलेत्। केवलं मई 77 मासं यावत् अंकाः (गाण्डीवस्य) येन केन प्रकारेण प्राप्ताः। परन्तु जून 77तः नहि प्राप्ताः। प्रधानसम्पादकाः भवन्तः। अत एव भवत्कार्यमपि अवलोकनस्य यत् ग्राहकाः पत्रं प्राप्नुवन्ति वा न वा?....

पण्डितश्यामकुमार आचार्यः

33

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 19-09-1964

॥श्रीः॥

परमप्रेमास्पदश्रीउपाध्यायजी!

सादरमभिनन्दनम्।

अत्र कुशलं तत्र तथाऽस्तु। प्रयागादागत्य यदहं श्रीमतां सविधे नागममिति कृतापराधोऽस्मि। एतत् कृतेऽयं जनो भवत्क्षमापात्रतामर्हति। यद्यपि भवद्दर्शनोत्कलिकोत्कण्ठितेनापि मयाऽवसरो न लभ्यते साम्प्रतिककार्यबाहुल्यात् तथापि पत्रमिदं तत्पूरकत्वमुपगच्छेदेवेति समाशास्महे। अस्तु।

वाराणसीतो या हि 'सूर्योदयनाम्नी पत्रिका' निःसरति तस्याः कियन्मूल्यं तथा च कः सङ्केत इति ज्ञातुं श्रीमत्संदर्शनं लब्धावकाशे कस्मिंश्चिद्दिने विद्यालये सप्ताहान्तर एवाभिलषामः। तदेतत्कष्टसहिष्णुना भवतावश्यमेवागन्तव्यमिति। एवं किल नारदघट्टस्थसाहित्यसदनस्य सदस्योऽपि श्रीमताऽयं जनः कार्यो विद्यते। सवध्वामम्बां पितृचरणं सादरमभिवाद्य सशरच्चन्द्रबालचतुष्टयाय सस्नेहमाशिषं दीये।

भवदीयः

शिवजी उपाध्यायः

34

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 20.07.1965

॥श्रीः॥

श्रीमन्तो माननीयाश्च उपाध्यायाः सुहृद्वराः।विलसन्तु प्रणामा मेऽहं कुशली स्याद् भवच्छमम्॥1॥
श्रीमतो गृहतो गत्वा मया पत्रमदायि नो । मर्षणीया त्रुटिश्चैषा यतोऽहं मन्दधीर्जनः॥2॥
मासेऽस्मिन् श्रावणे भ्रातः! श्रीमदागमनं कदा। भवितेति विलिख्यैव पत्रेऽहं सूच्यतामिह॥3॥
श्रीनाथाय निवेद्यास्मत् मन्नुतिं तत्सहाशु वै । समागत्य सखे काश्यामानन्दं मे ददात्यलम्॥4॥
श्रीखिस्तेमालवीयाभ्यां सम्प्राप्य कृपामिह। मोदमानेन सत्पाठाः पठ्यन्तेऽनुदिनं मया॥5॥
भवते गुरुपादौ तौ पत्रेणानेन चाशिषम् । मोदतो लेखयित्वाऽस्मल्लेखन्यैष प्रयच्छतः ॥6॥
बाबाजीत्याख्यवर्याय हरीपूर्वविहारिणे । श्रीमता तत्पुरो गत्वा निवेद्या प्रणतिर्मम॥7॥
सप्ताधिकद्विशतमङ्कचयो मदीयो । मन्नाम तद्भवतु मेरिटलिस्टमध्ये।
मत्तोऽङ्कवानधिकमेक इहास्ति नान्यः । प्रान्तीयवृत्तिरथवा हि मिलिष्यतीति ॥8॥
मित्रप्रधानमिव चेत्पदमस्मदीयं पत्रोत्तरं तदिह मे लघु प्रेषणीयम्।
मार्गावलोकनसमुत्सुकचित्त एषः तत्प्रेषयिष्यति जनः पुनरेव शेषम्. . . . ॥9॥

भवत्सुहृत्

शिवजी उपाध्यायः

35

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 14-08-65

॥श्रीः॥

मया पत्रं दत्तं तदपि भवतामुत्तरमिह, न लब्धं तच्छीघ्रं लिखतु ननु को हेतुरिति च।
उपेक्षा वा नेच्छाऽथ च पुनरशिक्षापरवशोयमस्तीति ज्ञात्वा मम च ममता वा शकलिता ॥1॥

मदीयं सर्वस्वं तव हृदयमाहो मम तथा, हृदि ध्यानं मानं भवति भवतः सत्सुहृदिव।
अतोऽहं लघ्वात्मा कथमपि न हेयो हि भवता, उपाध्याय! श्रद्धाञ्जलिरिव प्रणामो लसतु मे ॥2॥
नमः श्रीनाथायाथ च हरिविहारीतिमुनये, समाप्तिं संयातो सफलमपि दोलोत्सव इह।
न सम्प्राप्तः श्रीमान् तदिति हृदि मेऽशान्तिरमिता कदा काश्यां यात्रा पुनरपि भविष्यत्यथ तव॥3॥
सुहृत् श्रीश्रीकान्तः प्रणमति भवन्तं शुचिमना, कपोले पीडाऽऽसीत् ज्वरमपि परं किन्तु भिषजः।
विधायाथो पथ्यं त्रिदिवसमलं सम्प्रति भृशं स नीरोगी भूत्वा विहरति हि भोगीव भवने॥4॥
क्रयार्थं ... ग्रन्थानामिह गतदिने भ्रातृचरणाः,समायाता आसन् कुशलमथ तेभ्योऽभिनन्दनम् ।
अहन्तन्मासेऽस्मिन् नहि भवनमायातुमुरसा समीहे तावन्मां सुखयतु भवानेत्य सपदि॥5॥
द्वयोर्गुर्वोराशीर्वचनमभितो पातु भवतः,यतस्ताभ्यां पात्रीकृत इव भवानस्ति च भृशम् ।
अमुष्यापि प्राज्योत्तरमिह न चेद्दास्यति ततोऽहमत्यन्तो दुःखी सुहृदथ भविष्याम्यनुदिनम् ॥6॥
श्रीमत्पद्यानि दत्तानि श्रीखीस्तेगुरवे मया। दत्तवन्तो हि ते गत्वा, शीघ्रं तन्मुद्रणं ध्रुवम् ।
सप्ते दशे दिनाङ्के तु श्रीखिस्तेमालवीययोः। रेडियोकार्यप्रोग्रामोऽस्ति पादो चाष्टवादने॥7॥. .. .

शिवजी उपाध्यायः

36

प्रेषकः — पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी
प्रापकः — पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः — 24- 08 -65

॥श्रीः॥

परमस्नेहभाजनं मित्रवर!

सादरमभिवन्दे ।

श्रीमत्करकञ्जोल्लिखितमत्रागतं मया लब्धं पत्रम्। तदवलोकनसंजातहर्षनिर्भरापूरितमना परां शान्तिमन्वभजम्।

यद्यपि तत्रोट्टङ्कितस्य प्रश्नस्योत्तरात्मकमेकं पत्रं यन्मयाऽत्रागतेन श्रीलालताप्रसादशुक्लेन श्रीगुरुमालवीयखिस्तेमहोदयादीनां कार्यक्रमं सम्यङ्निश्चित्य प्रेषितन्तल्लब्धमुताहो नेति मे शंकाशल्यमुद्वहतो हृदयस्योपचारमचिरमाचरन्तु भवन्तः । तेषामादरणीयाङ्घ्रिपङ्केरुहाणां सरस्वतीयन्त्रेण प्रसारितः कार्यक्रमः सप्तदशे दिनाङ्क एवागादुपशमामिति। तत्सूचना प्रादायि श्रीशुक्लेन प्रेरिते पत्रे मया। तथा च श्रीमन्मान्यगुरुचरणाः श्रीमालवीयमहानुभावाः प्रायः स्वकीयान्तरङ्गवर्गसङ्गाः सन्तः समागन्तुकामाऽपि नावकाशसम्भवादायातुमुत्सहन्ते। सम्भवत अनन्तचतुर्दश्यावकाशे समाजिगमिषवो भवन्तु तत्र भवन्त इति। भूयस्तैः सह संविमृश्य सूचनामुष्यदास्यामि भवद्भ्यः ।. . . . पत्र प्रतीक्षायां भवताम्।

शिवजी उपाध्यायः

37

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 28-08-1965

।।श्रीः।।

पत्रप्राप्तौ प्रमुदितमना श्रीमतोऽहं पठिष्णुः पाठं पाठं सुहृददतितरां लब्धवानस्मि मोदम्।
याऽऽर्द्रीभूता तव मयि कृपा वर्ततेऽकिञ्चनेऽपि सायासाऽप्यनुदिनमनायासमावृद्धिमेतु।।1।।
नाहं दोषं कमपि भवते बन्धवे सन्ददामि, भूत्वा दोषी स्वयमपि कथं दोषदानार्हता मे।
किन्त्वेतत् किं? यदिह भवता मत्प्रणामोत्तरं नो पत्रे दत्तं किमपि, तदिति ब्रूहि पत्रोत्तरेण।।2।।
श्रीनाथायाथ च हरिविहारीकृते मे नमोऽस्तु, हित्वा दोषं ननु नतितर्तीर्मद्वतीः स्वीकरोतु।
कुर्याद् बालः किमपि सदसत् किन्तु तज्ज्ञातसाराः त्वादृशास्तु प्रथितयशसः सज्जना मर्षयन्ति।।3।।
पत्रं येन प्रहितमथ तेनोक्तमेवं तदाऽत्रैतद् गत्वाऽचिरमहमितो स्वः प्रदास्यामि तस्मै।
किन्त्वस्मात्ते करसरसिजोट्टङ्कितात् पत्रवृत्तादेवं ज्ञात्वा क्लममनुभवाम्यत्र मित्र प्रभूतम्।।4।।
मित्रालोको भवतु सुमनःपंकजं ध्वान्तराज्यं प्राज्यं नश्यत्वथ समुदयं यातु मद्वासरश्री–
रित्याशायामिह मुकुलितं काशिकादीर्घिकायामाकाशे चाकलयति कदाऽऽयास्यतीति प्रभातम्।।5।।
श्रीश्रीकान्तो विनमति मुदा मोदमेति प्रभूतं श्रावं श्रावं भवत इह तत्स्वागतं भावि सद्यः।
पाठ्यः पाठः पठितमपहायाशु नः पाठयन्तु प्रेम्णः पाठं चिरयतु सखे मा मनाग् वाञ्छितस्य।।6।।
आशीर्वादं किल वितरतो द्वौ गुरू सत्कृपाम्बू, तुभ्यं श्रुत्वा तव नतनतिं बिभ्रतस्तोषमेतौ।
विन्ध्यारण्ये विहरणपरा अध्यमी मालवीया आगच्छेयुः कथमथ सखे! नो लभन्तेऽवकाशम्।।7।।
प्रान्तीया वा मिलतु महती कन्द्रुतो वृत्तिरेषा मह्यं नाहं तदनु मनसा चिन्तये किं तया स्यात्।
एका कापि ध्रुवमिति च मे मास आगामिनीह प्राप्त्येव श्रवणविषयीकृत्य सन्तोषमेतु।।8।।

पत्रप्रतीक्षायां

भवदीयः

शिवजी उपाध्यायः

38

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 02-09-65

।।श्रीः पातु।।

सेवायाम्

सुहृदय तव पार्श्वे पत्रमेकं मया यत्, प्रहितमपि तथापि स्वोत्तरं न प्रदत्तम्।
कथयतु मम दोषं कं हि येनास्ति रुष्टो लघुरपि परिहेयो नैव नैजो वयस्यः।।1।।

मयि तु तव कृपाऽऽसीत् शाश्वतीव प्रभूता, क्षणमपि हृदयान्मां त्यक्तवान्न स्वकीयात्।
विविधविधविचारैश्चिन्तयनप्यकाले किमिति कलयितुं तत्कारणं न क्षमोऽस्मि॥2॥
यदिति कथितवान् मे सद्य आयामि तत्किं, भवति ननु मृषेव स्वाप्निकं वाक्यमेतत्।
अनुदिवसमितस्ते मार्गमालोक्यमानं व्यथयति सुहृदेवं मां हि को हेतुरत्र॥3॥
ननु जनमथवैनं पत्रमात्रैकलोभं कथमिव नहि दत्ते तत्सुखेनात्मलाभम्।
वसति शशधरोऽयं खे परं चण्डतापं, प्रशमयति सदा स्वैरंशुभिः कैरवाणाम्॥4॥
कमल! तव सखा खे त्वं जले खेदखिन्नं कुमुद! कुटिलतां त्वं चात्ममित्रस्य पश्य।
न कुरु न कुरु नृत्यं बर्हिनालोक्य मेघमनुभवपरितापं मत्सुहृत् सम्मुखोऽयम्॥5॥
इति कृतमभिमानं पूर्वमेवं तदद्य सुहृदनुदिनमेभिर्मेऽपि सादृश्यमस्ति।
कुरु सपदि तथा त्वं येन मामाहसन्तः, विदधतु ननु मूढा नोपमानार्हतां मे ॥6॥
प्रणतिविततिरेषात्वामुपाध्यायमेतु, लसतु हरिविहारीसन्मुनिं मे नमस्या।
अपि च मम मकालूमिश्रेभ्य एत्य(?) भूयो, व्रजत नतिरपीयं स्वात्मसाफल्यमेवम्॥7॥
गृहमहमिह मासे शारदीयावकाशे, सुहृदथ सति जाते सद्य आगन्तुकामः।
तदिति तव कृताशा दर्शनस्यास्मदीयाऽचिरमिव सफला साऽऽनन्दयिष्यत्यलं माम्॥8॥

पत्रोत्कण्ठाकुलः भवदीयः
शिवजी उपाध्यायः

39

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 11-09-1965

॥श्रीः पातु॥

आदरणीयवयस्यवर्याः! सादरं प्रणामाः।
भवदीयं पत्रमत्रागतम्। समाचारश्चोपलब्धः। आवयोर्मुधा संजायमानरुजोमूलमप्युच्छिन्नमिति ज्ञात्वा चेतः काञ्चित् चमत्कृतिं विन्दति। गृहनिर्माणे साम्प्रतं भवन्तः संलग्ना इति श्रुत्वा तथाऽर्थकार्श्यकृशाश्चेति श्रुत्वाऽऽनन्दानन्दसिन्धुबुद्बुद्परम्परामुरीक्रियमाणोऽहमिह वर्ते। बहुसाहाय्यमाचरिष्णुनापि न शक्यते किमपि संविधातुम्। न जाने कदा भगवान् भवादृशसज्जनसुहृज्जनसाध्यसाधनोपकरणतां मां नेष्यतीति खेदमनुभवामि। साहित्यरत्न-परीक्षामुत्तीर्णीकरिष्णवो भवन्तः साधु प्रयतन्तामिति कामये।
श्रीखिस्तेमालवीययोरुभयोगुर्वोराशीर्वचोभिर्बोभूयमाना भवन्तो भवन्तु। संविदन्तु च यत् तौ साम्प्रतिकसञ्जातविश्वविद्यालयीयान्दोलनाद्यनेककार्यासक्तचित्ततयाऽऽगमिष्णू अपि न प्रभवतः।

श्रीहरीविहारीउपाध्यायान् श्रीमकालूमिश्रान् च मम प्रणामैर्विभूषयन्तो गृहेऽपि सर्वान् यथान्यायं भवन्तो भवन्तश्चेति दिक्। पत्रोत्तरं शीघ्रम्। शेषं कुशलम्।

भवदीयः

शिवजी उपाध्यायः

40

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम् उत्तरप्रदेश

तिथिः – 16-09-1965

॥श्रीः पातु॥

मान्या उपाध्यायमहानुभावाः! नमस्कृतयः सन्तु।

इतः श्रीमत्सु गच्छत्सु सत्सु परस्मिन्नहन्येव भवत्पत्रं मया समागतमत्रावाप्तम्। तदुत्तरत्वेनेदं पत्रं वृत्तात्मकं नेत्यत्र कारणं पत्रलेखने त्वरातिशय एव। गमनानन्तरं सकुशलप्रयाणोपलक्षीभूतं नैकमपि पत्रं प्रादायि भवद्भिरिति कथम्? अतः सत्वरं पत्रमेकमस्मत्पार्श्वे सञ्चोदनीयम् येन मदीया शान्तिः स्यात्। श्रीमतां घटिका कीदृशी कथं न चलतीत्यपि लेख्यम्। आस्माकीनं वेश्म किं नु ? भवन्तो गतवन्त आसन्न वा। ततोऽपि पत्रं पञ्चविंशतिसंख्याकमुद्राश्च मयाऽऽत्मसात्कृताः। मम भ्रातृचरणाः केनचिद् रुजाऽऽसन् सम्पीडिताङ्गा इति प्रयागात् पाण्डेयमहोदयकरोल्लिखितादागतात्पत्रात् कर्णगोचरीकृतवानहम्। तद् भवद्भिरेव तत्र गत्वा वास्तविकः समाचारः सद्यो नः प्रदेयश्च। यद्यपि सविधेऽस्माकमायातं श्यामाङ्गस्यैकं पत्रं परं तत्र चर्चैव नासीदेतस्य। अस्तु। श्रीवावोपाह्वहरीविहारिणे एवं च श्रीनाथमिश्रमकालवे मे प्रणामः कथनीयः। तथा च मातुः पितुश्चेत्थं मन्मातृवद्भवद्धर्मपत्न्याश्च चरणयोरभिवन्दनम्। शरच्चन्द्रशिशिरचन्द्राभ्यां सुस्नेहाशीर्वचनराशिश्चैवं कौमुदीप्रियंवदाभ्यां चाशीःपरम्परा। मासेऽस्मिन् सम्भवतः अष्टविंशतिदिनाङ्कं यावदहं गृहमागन्ताऽस्मि। शेषं कुशलम्।

भावत्कः

शिवजी उपाध्यायः

41

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 16-11-1965

मान्या उपाध्यायमहोदयाः! सप्रेमप्रणतयो विलसन्तु।

दिनत्रयपूर्वं लब्धस्य श्रीमतां पत्रस्योत्तरं इदानीन्तनया दैक्षान्तिकव्यस्ततया विलम्बेन दत्वाऽस्मि प्रचुरापराधभाजनमहम्। किन्तु सम्प्रति राष्ट्रपतिभ्यो (गार्ड ऑफ ऑनर) सलामीत्यर्थः प्रदातुं प्रत्यहं

एन.सी.सी. इत्यस्याभ्यासो प्रचलति। अतः मत्सकाशेऽतिसमयाभावमवगम्य भवन्तो क्षमां विधास्यन्ति। श्रीमालवीयमहोदयानामतीवोत्कटेच्छाऽऽसीद् यद्भवन्तः कविसम्मेलनेऽत्र भागं गृह्णन्तु, किन्तु ममाधन्यताऽत्रभवतां रुग्णत्वेन संवृता तत्कथं प्रेरयेयं श्रीमतः समागमनायेति। अत्र 19-11-1965 दिनाङ्के कविसम्मेलनं भविता रात्रौ...। यत्र समस्याः "वीरभोग्या वसुन्धरा", "शतघ्नीध्वनिः", "अन्यान्न मन्यामहे", "गिरौ गिरौ गरीयसी" इति चतस्रः सन्ति। अस्तु। मदीयं न जाने कीदृशं दुर्भाग्यं यत् सरुजो भवन्तः संवृत्ताः। इदानीं तत्प्रभावः कथम्भूत इति सद्यः संसूचनीयम् येनाऽहं शान्तिं लभेय। अहमस्मि सम्प्रति नीरोग इति। . .. .

भवताम्

शिवजी उपाध्यायः

42

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 01-09-1966

॥श्रीः पातु॥

मान्याः सुहृद्वर्याः! प्रणामा विलसन्तु।

आत्मनाऽऽरोपितं प्रेमपादपं प्रांशु पुष्पितम्। स्वयमुत्पाटयन्तारं विधातारं धिगस्तु तम्॥1॥
अन्तर्देशीयमेकैकं कार्ड च प्रेषितं मया। किञ्चिद् भावाञ्चितं किञ्चिद् याचनाशुचिसञ्चितम्॥2॥
आत्मना वञ्चितात्मानं विनिवेदितवाँस्तयोः। नाप्तं किं तद्द्वयं? श्रीमत्पत्रादित्यनुमीयते ॥3॥
भवता विस्मरामीति स्वप्नेऽपीत्थं स्मरामि न। यच्छामि भवते वार्तां नो चेद् गच्छामि तत् कुतः॥4॥
रुजारुग्णो भवेन्नाम यश्चिकित्सापयत्वऽसौ। आवयो रोगसत्ता का? कां चिकित्सामपेक्षते॥5॥
कायाकल्पेन किं मित्र! विकल्पेनामुना च किम् कल्पनीयः स्वहृत्कल्पः कल्पं यावद् द्वयोरपि ॥6॥
(अ)हमित्यन्तर्जगज्जातमालिन्यक्षालनं विना। मनःशान्तिर्न लभ्येति,त्वद्वाङ्केऽस्त्युपदेशिका॥7॥
मानवो दुर्बलः शश्वत् तद्वशे नास्ति किञ्चन। किन्त्वेकः स्नेह एवास्य दुर्बलो नेति मे मतम् ॥8॥
अपि साहित्यरत्नं तु भवानस्त्येव वस्तुतः। परीक्षाषाणमासाद्यानवद्यां विन्दतु द्युतिम्॥9॥
हरीविहारीश्रीनाथमिश्रौ तौ सुहृदावुभौ। भवता मत्प्रणामस्य नेतव्यौ भाजनीयताम्॥10॥
श्रीखिस्तेमालवीयानामाशीर्वादेन वर्धताम्। संयोगो दीयते नाभ्यां स्वयं देव्या स्वदर्शने ॥11॥
अर्थकार्श्यकृशस्वीयकार्योपायकरिष्णवः। भवादृशा भवन्त्यत्र प्रायशः प्रभविष्णवः॥12॥
मदर्हसेवा सयुक्तमात्मवृत्तसमन्वितम्। पत्रं दातुं त्वरा कार्या व्याकुलं वीक्ष्य मे मनः ॥13॥
(पञ्चविंशतितारिकायां लिखितं प्रेषितं च भवत्पत्रमद्य लब्धं मयेति महच्चित्रम्।
अत्र केन कारणेन भाव्यमिति लेखनीयम्।)

भवदीय एव

शिवजी उपाध्यायः

43

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम् उत्तरप्रदेश

तिथिः – 19-11-1966

॥श्रीः पातु॥

आदरणीयवयस्यवराः! प्रणामाः विलसन्तुतराम्!

श्रीमतां पत्रं सप्तदशतारिकायामेव प्राप्तम्, किन्तु विश्वविद्यालयेऽऽन्दोलनाद्यनेककार्य-व्यावृत्तचित्ततया मया तदुत्तरं भवदपेक्षितकालाभ्यन्तरे नादायीति क्षमापात्रीक्रियतामयं जनः। गृह-निर्मितिचिन्ताऽश्चितचेतसां भवतां काष्ठां गतायाः परिस्थितिप्रवृत्तेर्दीपावल्यवसरे नात्रागमनं जातमिति प्राप्तपत्रादेव परिकल्पये। किञ्च ममापि समागमनकाले श्रीविन्ध्यवासिनीदर्शनानुषङ्गिश्रीमदादिदर्शनमसुलभमिवाभवदिति स्मारं स्मारं, चेतोऽपि चेखिद्यत एवाऽत्र वसतः पुनर्दर्शनाय सौख्यमवाप्तुम्। मन्ये तत्भवद्भिरत्रागत्य मया सङ्गत्याशु पूरयिष्यत एव। इतः कालिदासीयजयन्त्युत्सवोपलक्षे जिगमिषुभिरस्माभिः सश्रीखिस्तेमहोदयैश्चतुर्विंशतितारिकायां गंस्यते। तदभ्यन्तर एवास्य पत्रस्योत्तरं कामये। भवन्तोऽपि तथा विधास्यन्तीति विश्वसिमि। श्रीहरीविहारीउपाध्याय–श्रीश्रीनाथमिश्रमहोदयाभ्यां नमोवाकं प्रशास्महे। गृहेऽपि सर्वेभ्यो यथायथं एतदेव निवेदयामः।

आवश्यकं निवेदनम् – साहित्यरत्नपरीक्षा भवद्भिर्ध्रुवमेव प्रदेया।

आशूत्तराकाङ्क्षी भवताम्
शिवजी उपाध्यायः

44

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम् उत्तरप्रदेशः

तिथिः – 01-02-1968

॥श्रीः पातु॥

मान्याः मित्रवर्याः! सादरं प्रणामाः।

भवतां सन्निधेरिहागतेन मया सप्रायासिकमध्ययनमारब्धम्। पत्रलेखने विलम्बस्य कारणताऽप्यस्यैव। भवदीयं स्वास्थ्यं नीरोगमास्त इति दृढं विश्वनाथाद् भगवतोऽभिलष्यते। अत्रत्यं सर्वमपि वृत्तं पूर्ववदेव। अस्माकं विभागाध्यक्षमहोदयाः परमं विद्वांसः साधवश्च सर्वान् सन्तोषयन्तो देवगिरैव

पाठयन्ति। सर्वेषु शास्त्रेषु ...गतिस्तेषाम्। इदानीं राजनीतेरहं भवत्परामर्शमङ्गीकृत्य नितान्तं विरक्तोऽस्मि। अन्यत् साध्वेव।...

भवदीयः

शिवजी उपाध्यायः

45

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 09-03- 1973

॥श्रीः॥

आदरणीया उपाध्यायाः सादरं प्रणतयः!

भवदीयं पत्रमधिगतम्। वृत्तं समधिगम्य मुदमगमम्। भवदीयसन्देशश्च तत्रभवतो गुरून् प्रापितः। पूर्वमेव एतत्कृते मयोक्तं यदेतत् दक्षिणाद्रव्यमत्यल्पम्। किन्तु तत्र तैः स्वीयाऽसमर्थता प्रकटिता। पाठस्य कृते एवं विमर्शो निर्णीतो यत् साधारणा एव पाठा विधातव्याः। यदा कदा कस्याप्येकस्याध्यायस्य पाठः सम्पुटीकर्त्तव्यः। मन्ये एतावता पाठकर्तुः सौविध्यं स्यात् । इत्येवं गुरुभिः सन्दिष्टम्।

होलोत्सवे यदि गृहं प्रत्यागमिष्यामि तदा भवद्दर्शनं नूनं सम्भवितेति ममानुहुङ्कृतिरियम्। आशासे भवन्तः कुशलिनः स्युरिति। अन्यत्साधु।

भवदीयः

शिवजी उपाध्यायः

46

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 22-08-1980

॥श्रीः पातु॥

आदरणीया उपाध्यायवर्याः! सादरं प्रणतयः।

भवदीयं पत्रद्वयमवाप्तम्। अहं वाराणसीतो बहिरासं सप्ताहपर्यन्तम्। अतः पत्रोत्तरदाने विलम्बो जातः। आशासे भवन्तः सपरिजनं कुशलिनः स्युः। पूर्वोत्तरमध्यमाकक्षयोः परीक्षाफलं अधुनावधि न प्रकाशितम्। यदैव तत्फलं प्रकाशितं भविष्यति तदैव सूचयिष्यामि। मन्ये सप्ताहपर्यन्तं तत्प्रकाशने विलम्बः स्यात्। कविसम्मेलनं विश्वविद्यालय एवायोजितं वर्तते। तत्र स्थानीया एव कवयः समाहूताः सन्ति। पूर्वामायोजकेन यदुक्तं तदनुसारं मया लिखितम्।. . . .

भवदीयः

शिवजी उपाध्यायः

47

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 29-09-1984

॥ हा!!!॥

पिता त्वदीयः सुहृदेकवृत्त्या सदाचरन् साधुचरित्रशीलः।
दिवङ्गतो हा! परिहाय लोकं तदात्मने शान्तिरथास्तु भूयः॥1॥
सुतस्तदीयस्सुकृती त्वमेको ह्यसौ यथा विन्दसि साधु मार्गम्।
तदात्मवच्चान्यतरोऽप्यनन्यस्वरूपभाग् भासि कृतप्रतिष्ठः॥2॥
तस्मै निवापाञ्जलिदानमाराद् विधाय च श्राद्धमशेषमद्धा ।
श्रद्धाभरं सादरमस्मदीयं निवेदये साञ्जलिदीपमानम् ॥3॥
वाल्मीकिरामायणपाठशीलोऽनुष्ठानलग्नोऽस्मि धृतव्रतोऽहम्।
तस्मान्न चागन्तुमितः क्षमेऽतः क्षमस्व मां त्वन्मनसोऽप्यभिन्नम्॥4॥
अकाल एषोऽद्य विपन्निपातः प्रसह्य सोढव्य इह त्वयाऽत्र।
शक्तिः परा शक्तिमता सह त्वां सुशक्तिमन्तं सततं विदध्यात्॥5॥
काशीस्थत्वद्वयस्योऽहं काशीनाथं तमर्चये।
शान्ताय स्वात्मनिष्ठाय पित्रे शान्तिं प्रयच्छितुम्॥6॥

शिवजी उपाध्यायः

48

प्रेषकः – पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 2-12-1984

श्रीमदुपाध्यायवर्याः! प्रणतयः।
भवदीयं धनादेशमवापम्। प्राप्तकालं श्रीचतुर्वेदिने दास्यामि। तत्र धनादेशपत्रे भवद्भिः खेदः प्रकाशितः। अस्मत्कृते किमपि कष्टं न जातं नापि कश्चित् क्लेशोऽनुभूतोऽस्माभिः। तत्र भगवत्या दर्शनं भवन्मिलनं यात्रादिरमणश्चेति सर्वं मोदाय समपद्यत। अतः किमपि मनसि न निधातव्यमिति निवेदये। इदमेकमत्यावश्यकं कार्यं भवद्भिः सम्पादनीयं सविनयं निर्दिशामि– श्रीशक्तिशतकम् यन्मया प्रणीतं तदर्थानुलेखनं सम्पादनं च परमेश्वरीस्तवीयमिव भवद्भिरेव कार्यम् । तन्मुद्रणं

संस्कृताकादमीद्वारा भावीति कृत्वा भवन्तो निवेद्यन्ते । यथावकाशं तदा दातुं पत्रेणाचिरं सूचयन्तु। आशासे सवधूवरं भवन्तः कुशलिनः स्युः।

भवदीयः
शिवजी उपाध्यायः

49

प्रेषकः – पण्डितरतिनाथझा, वाराणसी
प्रापकः – आचार्यः श्रीअमरनाथपाण्डेयः, वाराणसी
तिथिः – 03.02.1982

श्रीः

भारती कवेर्जयति
कविभारती

विद्यापीठकुलाधिदैवतमलङ्कारं विदां संसदः
प्रज्ञावृत्तविवेकशीलनिलयं कारुण्यवारां निधिम्।
सौजन्यैकनिकेतनं सुमनसां सम्भावनामन्दिरं
पाण्डेयोज्ज्वलवंशमौक्तिकमणिं मूर्ध्ना भवन्तं नुमः ॥1॥
छात्रः पत्रमिदं निवेदयति यः श्रीमत्कराम्भोजयो–
रात्मीयः क्रियतां स एष भवता संख्य सदैवावता।[1]
नामोल्लेखनपूर्वकं निवसतेः कृत्वा प्रबन्धं प्रियं
कल्याणाय सदास्य चेतसि शुभं ध्यायेरिति प्रार्थये ॥2॥
सेवानिवृत्तिकालो मे यतः सन्निहितोऽधुना।
तत एव भवन्मूर्ध्नि भारस्त्वारोपितोऽस्त्ययम्॥3॥
यथाज्यं लभतां विद्यां सदुपाधिं शुभां मतिम्।
विनयं च सदाचारं तथा कुर्यात् क्रियाविधिम्॥4॥
यदिदं निर्भयेनैव सर्वमावोदितं मया।
कदर्थितश्च साम्रेडं तत्र हेतुर्भवत्कृपा॥5॥

भवदीयेष्वन्यतमो
रतिनाथः

---

[1] पाठान्तरः – सर्वात्मना तुष्यता।

50

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, पत्रकारनगरम्, विनायका, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 6-6-1966

॥श्रीगुरुगणेशः॥

दुर्गादत्तधिये श्रीमद्दुर्गादत्ताय दीयते।
शुभाशीः काशिकास्थेन प्रकाशीकृतमङ्गला॥1॥
सौवर्णी भवतो वाणी मयि या विनियोजिता।
सा निवेद्या लसत्पद्या जगदाद्यापदाब्ज्योः ॥2॥
जनोऽयञ्जनसामान्यजीवनो जठरानुगः ।
लोकातिक्रान्तमाहात्म्यपदवीं नाऽधिरोहति॥3॥
सुहृदामिव सञ्जल्पः कल्पनावल्लरीवृतः।
स्मितपुष्पमनोहारी स्फारीभूतो भवद्गुणः॥4॥
परिस्फुरितरश्मीनि पद्यरत्नानि यानि वः ।
तानि संरक्षणीयानि लेखमञ्जूषिकान्तरे॥5॥
कुशलं सर्वमत्रत्यं प्रसन्ना गृहवासिनः।
निदाघः केवलं स्वैरमुन्मत्त इव नृत्यति॥6॥
वर्षासु लब्धहर्षासु यदि विंध्यालयारुचिः।
तत्रोपस्थाय दिवसं कश्चिन्नेतुं मनोऽस्ति नः॥7॥
समस्याः –"वात्या जगत्यां लुठतीव खेदात्"
"चन्द्रोऽपि तन्द्रालसः" "विरहविधुरनारीसन्निभा निम्नगेयम् "

इति भवदीयः

खिस्ते बटुकनाथशास्त्री

51

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 6-6-1968

॥श्रीगुरुगणेशः॥

दुर्गादत्त। शुभैकदत्तहृदय। त्वत्पाणिवल्लीभवं

नूत्नं पुष्पमशेषदोषशमनं गुर्वष्टकं तुष्टये।
भूयादेव गुरोरशेषजगतां बालेन्दुचूडामणेः
संवित्काऽपि तवापि निर्मलतरा नित्यं समुद्योतताम्।।1।।
पराम्बिकायाः करुणाकटाक्षात्, वयं समस्ताः कुशलं भजामः।
भवद्गृहे मङ्गलमञ्जुलश्रीलीलाविलासान् परिचिन्तयामः।।2।।
सत्यवसरे त्वदीया रचना सूर्योदयं भजतात्।
रसिकालिसेवनीया सामोदा पद्मिनीव नवा।।3।।
प्रणम्यन्ते तातपादा वर्ध्यन्ते शिशवो गिरा।
स्मर्यते शर्मदा भूयो सा विन्ध्याद्रिविहारिणी।।4।।

इति

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

52

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 28-09-1974

।।श्रीगुरुगणेशः।।

श्रीमते शुभाशिषः सन्तु,

भवत्पत्रस्यागतस्य कियानतीतः कालः परं कार्यव्यापृत्या विलम्बः समपद्यत तदुत्तरदाने। साम्प्रतिकेन देश–काल–दशा–वैधुर्येण को वा न तादृक् कुटुम्बी यो न पीड्यते, भगवतः कालरूपिणः सोऽयं व्यापारः। परीक्षाकार्यशुल्कं नूनमवाप्स्यत एव। कार्यालयक्रियाकलापो व्यतिक्रमशताकुलः प्रमुखाधिकारिणां बुद्धिमान्द्यादेव। किमत्र प्रतिकुर्मः। तथाऽपि मया भवदर्थं सूचितं तत्र। पूज्यपितृचरणेभ्य प्रणामा आवेद्यन्ताम्। बालेभ्यश्च शुभाशंसनमिति।

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

53

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 2-3-1976

।।श्रीगुरुगणेशः।।

श्रीमते शुभाशिषः सन्तु,

भवतः कुशलपत्रावाप्त्या प्रसादमनुभवामि। कदाचित् कार्यवशाद् विलम्बो भवति पत्रोत्तरप्रेषणे। भवतः सौजन्यं, शुचित्वं कवित्वञ्च मन्मानसे सन्निहितमेव भवतीति तत्र न किञ्चित् प्रतिबन्धकमस्ति। मदीयः प्रातिवेश्मिकः सुहृच्च श्रीशक्तिनारायणसिंहः स्वात्मजस्योपनयनं

चैत्रपञ्चम्यां विन्ध्यक्षेत्रे विधातुं कृतसंकल्पः तदा यद्यपि सम्मर्दो भवति तथाऽपि तदर्थं निकट एव प्रकोष्ठद्वयं यथोचितमूल्येनापि सुप्रापं कर्तुं भवान् अनुरुध्यन्ते इति तदीयं निवेदनम्। अहमपि तद्दिने तत्रोपस्थास्यामि। कुशलमन्यत्। भवतां कविगोष्ठीकृते सत्यवसरे रचनामपि प्रेषयिष्ये। श्री पूज्यपितृचरणेषु नतयः।

भावत्क एव

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

54

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथ शास्त्री खिस्ते, वाराणसी

प्रांपकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 1-4-80

।।श्रीगुरुगणेशः।।

प्रियवरेभ्य उपाध्यायेभ्यः सस्नेहं शुभाशिषः।

श्रीजगदम्बिकाकृपया भवन्तः कुशलिन इति भावयामि। अस्ति किञ्चित् प्रस्तुतं कार्यम्। 21 एप्रिल दिवसे मदीयपौत्राणां चौलविधिः (मुण्डनं) विन्ध्यक्षेत्रे विधातुं कृतो निश्चयः। तदर्थं 20 दिने गृहात् प्रस्थाय यथाकालं तत्रोपस्थाय तत्रैव रात्रिं यापयित्वा प्रभाते कार्यं विधातुमिष्यते। सहयात्रिणः कुटुम्बिनः पञ्चषास्तदधिका वा भवेयुः। तत्र निवासार्थं धर्मशालायां क्वचिदन्यत्र वा स्वच्छं समीचीनञ्च स्थानं भवद्भिरन्विश्य पूर्वत एव रक्षणीयमिति भवतामायासं जनयामि। एतत्सूचनाप्रदानमपि विधेयम्। श्रीमन्तः शेवडेमहोदयाः समुचितावासे प्रसन्नाः स्वकार्यं निष्पादयन्ति। पूज्यपितृचरणेभ्यः प्रणतयो वाच्याः। बालेभ्यः शुभाशिषश्चेति।

भवदीय एव

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

55

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 22-12-1982

।।श्रीगुरुगणेशः।।

श्रीमन् दुर्गादत्तशर्मन्। शुभानि वर्धन्ताम्। भवत्पत्रमद्यैवाऽधिगतं मदीयं प्रमोदमाहवति। सेवानिवृत्तेरारभ्य यदृच्छोपनतान्येव कार्याणि निर्वहामि। क्वापि प्रतिबद्धरूपेण कार्यं विधातुं न सज्जते चेतो न च शरीरमपि। यू.जी.सी. मानवृत्तिं षण्मासीं यावदासाद्य परस्तादन्यैः प्रणुन्न शास्त्रचूडामणिवृत्तिमनुसंलग्नोऽभवम्। परं संस्कृतविश्वविद्यालयाधिकारिभिः कुप्रबन्धेन नाद्यावधि साऽस्माकमन्तिके प्रापयितुं पार्यते, तत्र केचिदन्येऽपि विद्वांसः सन्त्येव। आस्तामिदम्।

हायनेऽस्मिन्नतर्कितोपनतैः कैश्चन कुटुम्बप्रत्यूहैरपि समाक्रान्तः सन्ततसहचरेण जठरोपद्रवेण च समाघ्रातः समयमुल्लङ्घयामि। तथापि पदे–पदे जगन्मातुः कारुण्यजलच्छायामनुभवन् स्वैरमध्वनीनतामनुभवामि । मदीयपद्यबन्धानां मुद्रणावसरोऽग्रिमे वत्सरे समापतेदिति सम्भावये । भवतः श्रेयांसि सन्ततं कामये। श्रीशेवडेमहोदयाः सुखं तपस्यन्ति।

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

56

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 03-09-1983

।।श्रीगुरुगणेशः।।

श्रीमते शुभाशीराशयः सन्तु। दिवसद्वयाद्ध्वन्तमनुस्मरन्नेव पत्रप्रेषणाय कृतमतिरासं परमद्य भवत्पत्रमेवागतमिति प्रसीदामि। श्रीमातुः कृपया राष्ट्रपतिसम्मानपत्रोद्घोषणा सार्धं काशीस्थपण्डितद्वय्या ममाऽप्यभूता। तत्रैकः पण्डितबदरीनाथशुक्लो द्वितीयश्च साङ्गवेद–विद्यालयाध्यक्षः पण्डितरामचन्द्रशास्त्री तृतीयश्चायञ्जन इति। यथावसरं दिल्ल्यां मानपत्रवितरणं सम्पत्स्यते। आजीवनं प्रतिवर्षं पञ्चसहस्रात्मिका वृत्तिरपि प्रदास्यते । संस्कृतपण्डितानामयं सर्वोच्चः सम्मानः । आस्ताम्। स्वास्थ्यं प्रायः प्रतिकूलमेव प्रचलतीति न विशेषकर्मसु प्रवृत्तो भवामि। इदानीं डॉक्टरपद्धत्या फ्लैजिलप्रभृतीनां निषेवणमपि विहितम्। मध्ये ज्वरवशात्किमपि दौर्बल्यमासीत्। विनोदस्य पुनर्जीविकाव्यवस्था सम्भाव्यते तत्रैव। परन्तु स सर्वथा गृहपराङ्मुख एव। श्रीशेवडेमहाभागः कदाचिल्लभ्यते। मुद्रितं तत्काव्यम्। भवतः सपरिकरस्य सार्वदिकं श्रेयः सततं चिन्तयामि। पूज्यपितृचरणेषु प्रणतिर्वाच्या। बालेभ्यः शुभाशिषः।

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

57

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 12-09-1984

।।श्रीगुरुगणेशः।।

श्रीमते कल्याणगुणशालिने श्रीदुर्गादत्ताय शुभाशीराशयः। श्रीजगन्मातुः कृपया तत्रत्यं कुशलं सम्भावयामि। विगते मासे 17 अगस्तदिवसे मम हार्नियाशल्यचिकित्सा सम्पन्ना। प्रथमत एव दौर्बल्यं शल्यचिकित्सातस्तु सुतरामनुभूयते। परन्तु परिणाममपेक्ष्य सर्वमङ्गीकृतम्। शनैः शनैः शक्तिसञ्चयः सेत्स्यति। गृहनिर्माणमपि क्वचिदवरुद्धं कदाचित्प्रचलत्येव। इदानीमपि गृह एव निवसामि। नवरात्रकार्यार्थमाहूतः कश्चन गुरुबन्धुः। नाहमधिकं प्रभवामि कर्तुम्। कुशलमन्यत्।

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

58

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 29-10-1984

॥श्रीगुरुगणेशः॥

श्रीमते दुर्गादत्तविदुषे स्वस्ति। भवतः पत्रमद्य समासादितम्। भवत्पितृचरणानां स्वर्गमनवार्ता पत्र द्वाराऽज्ञासिषम्। तदुत्तरमपि प्रहितमासीत्। अद्यत्वे पत्राणां यथाकालोपलब्धिर्न भवति। मम स्वास्थ्यं यद्यपि पूर्वतः समीचीनं तथाऽपि यत्किञ्चनवातव्याधिमूलकमस्वास्थ्यं वर्तते। नवरात्रात् प्रागेव मम धर्मपत्न्या विषमज्वराक्रमणेन महती चिन्ता समुदिता। एकविंशतिदिनानन्तरं ज्वरः शशाम। परमिदानीमपि शय्यागतैव वर्तते। गृहनिर्माणस्य स्थितिर्हनूमल्लाङ्गूलकल्पा प्रचलत्येव। वर्षेऽस्मिन् प्रत्यूहशतैर्जर्जरीकृतोऽस्मि। श्रीमातुः कृपया सर्वा बाधाः समुल्लङ्घयितुं यतमानोऽस्मि। यथावसरं पद्यानि प्रेषयेयम्।

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

59

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 15-01-1985

॥श्रीगुरुगणेशः॥

श्रीमते शुभाशीराशयः सन्तु। भवता प्रेषिता परिणयमङ्गलप्रशस्तिर्यथाकालमधिगता। परं शैथिल्यादनुत्साहाद्वा तदुत्तरदाने विलम्बः सञ्जातः। पूर्वापेक्षया धर्मपत्न्या मम च स्वास्थ्यं समीचीनमेव। अवस्थाकृतं दौर्बल्यं यत्किञ्चिदस्वास्थ्यञ्च स्वाभाविकमेव। कुटुम्बे विघटनवशान्न चोत्साहः पदमाधत्ते। भवता नववधूरनुकूला लब्धेति परमः प्रमोदः। प्रायो गतवर्षादद्यावधि क्वापि यात्रा न विहिता। कन्यया स्वगृहं निरमायि, सा भृशमुत्कण्ठते दर्शयितुम्। यथाकालं गन्ताऽस्मि। मदीयरचनासङ्ग्रहकार्यं गतवर्षीय–प्रत्यूहबाहुल्यान्मदीयप्रमादाच्च प्रतिरुद्धमेवाऽस्ते। भवादृशः सुहृद एव साहाय्यमाचरिष्यन्ति तदा सम्पत्स्यते। सत्स्वपि बाधाशतेषु श्रीचरणोपासना गुरुस्मरणञ्च न मां विरहयतीति सौभाग्यं मन्ये। सन्तु शुभानि।

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

60

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 07-08-1985

॥श्रीगुरुगणेशः॥

श्रीमते कल्याणगुणशालिने स्वस्ति।

भवत्पत्रमधिगतम्। भवत्कार्यविषये हृदि प्ररूढसंकल्पोऽस्मीति विदितमेव भवतः । इदानीं वर्षातिरेकात् कारणान्तराद्वा मन्दज्वरेणोदरामयेन च पीड्यमानोऽस्मि। ज्वरस्तु सम्प्रत्यवरुद्धः। भाद्रे मासि नियतं तत्रागमनमिति मे संकल्पः ततः परं प्रभवति सा पराम्बिकैव। स्वास्थ्यमेव भवति प्रतिबन्धकम्। तथाप्यागन्तुं सन्नह्यामि। पूर्वत एव सूचयिष्यामि।

वर्षेऽस्मिन् संकल्पितेष्वेकमपि कार्यं न सङ्घटत इति तत्तदुपाधिक्लान्तो भवामि। बहिः स्थिता भूमिर्विक्रेतव्या, तत्र स्थितो जनो निःसारणीयः, संस्कृतविश्वविद्यालयतो शुल्कं मानदेयमुपलभ्यमस्ति परं ततो नैकोऽपि पणकः समासाद्यते। प्रायः पञ्चदशसहस्रात्मको राशिस्ततोऽधिगन्तव्यः स चावरुद्ध्य इति भूयान् प्रतिबन्धः। अधिकारिणः सर्वेऽपि जडाः स्वार्थैकपराः। सर्वाऽपि व्यवस्था तत्र विपर्यस्तैव। अवश्यमेव तद्विषये लेखनीयम्। कुशलमन्यत् ।

शुभाकाङ्क्षी

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

61

प्रेषकः – पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 29-03-1986

॥श्रीगुरुगणेशः॥

विन्ध्येश्वरीपदाम्भोजमकरन्दमधुव्रते।
दुर्गादत्ते कविप्रेष्ठे श्रीराविर्भवतु स्थिरा॥1॥
बहोः कालात् भवत्पत्रं कुशलोदन्तगर्भितम्।
अनवाप्यास्मि जिज्ञासुरुत्कण्ठितमना मनाक् ॥2॥
वर्षेऽस्मिन् पूर्वतः स्वास्थ्यमनुकूलमिवास्ति मे।
जरसा स्पृष्टगात्राणां तावतैव महोत्सवः॥3॥
नित्यनैमित्तिकादीनि निर्बाधं प्रचलन्ति यत्।
कर्माणि तावता मन्ये सफला ब्राह्मणी तनुः॥4॥

कुटुम्बबाधाः याः काश्चित्ता अपि प्रतिवासरम्।
तमांसीव करैर्भानोर्विलीयन्ते शनैः शनैः॥5॥
पराम्बापादपाथोजचिन्ताचिन्तामणिप्रभा।
तामिस्रं विदलय्याशु प्रबोधं नः प्रयच्छतु॥6॥
स्वाध्यायाध्यापनादीनि कर्माणि भवतामपि।
निर्विघ्नं प्रचलन्तीति हृदा सम्भावयाम्यहम्॥7॥
यथाकालं यथोत्साहं सर्ववृत्तान्तमण्डितम्।
प्रतीक्षे भवतां पत्रं सम्पद्यन्तां शुभानि वः॥8॥

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

62

प्रेषकः – पण्डितपट्टाभिरामशास्त्री, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 23-05-1973

कुशलम्।

पण्डितवरेषु निवेद्यते–यदहं विश्वविद्यालयावासं परित्यज्यात्रागतोऽस्मि। मईमासस्य 28दिने दक्षिणदेशं प्रति प्रस्थातुमिच्छामि । द्वितीयमासस्य दक्षिणां 120 रूप्यकाणि प्राहिणवम्। तान्यासादितानि भवेयुरिति तर्कयामि । जूनमासस्य षष्ठदिनपर्यन्तं पाठो भवतु। तदूर्ध्वं समापनं क्रियताम्। यद्यावश्यकता स्यात्तर्हि सूचयिष्यामि । वारं–वारं भवद्भ्यः क्लेशं ददामि। क्षन्तव्योऽहम् । किं करोमि भवादृशा देव्यास्समाराधकाः, तस्याः सान्निध्ये वर्तन्ते। भवदाश्रयेण विना भगवत्याः प्रसादप्राप्तिः न सुकरा। अस्तु । "लोकास्समस्ताः सुखिनो भवन्तु" पितृचरणेभ्यो मन्नमांसि समर्पणीयानि। सन्तु नतयः।

पट्टाभिरामशास्त्री

63

प्रेषकः – पण्डितअञ्जनीप्रसादपाण्डेयः, शा.सं. महाविद्यालयः, कल्याणपुरम्, शहडोलम्, (म.प्र.)
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 16.01.1975

आदरणीयेषु बन्धुवर्येषु सादरं प्रणतयः। सानन्दं वर्ते। दशहरावकाशकाले प्रार्थितविषये श्रीमतामद्यावधि किमपि पत्रादिकमनधिगम्य चेखिद्यते चेतः। अतः पुनरपि विनिवेद्यते यद् वाराणसेये सत्सु गुरुजनेषु तेषाञ्च कृपापात्रेषु भवत्सु अस्मन्मित्रवर्येषु यदि नहि पञ्जीयनमनुसन्धानार्थं भवति तर्हि. मे हतभाग्यतैव। आशासे श्रीमन्तोऽस्मिन् विषये गुरुचरणान् विनिवेद्य सूचयिष्यन्ति। अत्रत्या पण्डिता कास्वपि वाराणसीसंस्कृत- विश्वविद्यालयपरीक्षासु प्रायः परीक्षकाः न भवन्ति यदि ते तत्र केनापि माध्यमेन सम्बन्धिते विभागे प्रयासं न कुर्वते। यद्यपि नहि कोऽपि विशेषलाभोऽस्मिन्

तथाऽपि संस्कृतमहाविद्यालयेषु 11वर्षेभ्योऽध्यापयता तथा च श्रीमत्सद्दशस्वजनवताऽवश्यमेवाद्दशेष्वपि कार्येषु स्वेहा प्रकाश्यते। इदानीं मध्यप्रदेशलोकसेवायोगेन कलामहाविद्यालयेभ्यः 9 पदानि अथ च संस्कृतमहाविद्यालयेभ्यः ....त्रिषयकव्याख्यातृपदानि विज्ञापनरूपेण प्रकाशिताः। .... तदर्थं पूर्वमावेदनपत्रं तत एव 1 मुद्रात्मकपोस्टलआर्डरप्रेषणेन प्राप्तुं शक्यते। अतः स्वजनाः सूच्याः। आचार्याः तथा च एम.ए. सर्वे एव सर्वेभ्य पदेभ्यः सक्षमाः आवेदनं कर्तुम्। पत्रं देयम्। श्रीमद्भ्यः गुरुचरणेभ्यः साष्टाङ्गं नमो वाच्यम्। अत्रत्यं च शं संसूच्यम्। पूज्यमातृ–पितृभ्यश्च प्रणतयो वाच्याः। तनूजाभ्यां स्वस्ति। शमत्र सर्वत्र। पत्रद्वारानुग्राह्यः।

श्रैमत्क एव

अञ्जनीप्रसादपाण्डेयः

64

प्रेषकः – पण्डितअञ्जनीप्रसादपाण्डेयः शहडोलम्

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 7-02-1975

आदरणीयेषु बन्धुवर्येषु सादरमभिवादनम्।

21-01-75 दिनाङ्कप्रहितं श्रैमत्कं कृपापत्रमधिगतम्। आशासे वाराणसीतः पत्रोत्तरमधिगतं स्यात्। वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य नियमानुसारं तत्रोपस्थितिः कियन्ति दिनानि यावदनिवार्या प्रतिवर्षमिति श्रीमद्भिरेव ज्ञात्वा सूच्योऽयम्। एकमासकालिकः दशहरादीपावल्यवकाशः तथा च मासद्वयावधिकश्च ग्रीष्मावकाशस्तु भवत्येव।

मया 1970 ई वत्सरे साहित्याचार्य परीक्षा (वाराणसीसंस्कृतविश्वविद्यालयतः) उत्तीर्णा प्रथमश्रेण्याम्। ततश्च संस्कृतसाहित्यशाखामवलम्ब्यैव रीवाविश्वविद्यालयस्य एम. ए. परीक्षापि प्रथमश्रेण्यामुत्तीर्णा। शास्त्रिपरीक्षा तु 1962 ई.वत्सर एव समुत्तीर्णाऽसीत्।

श्रीमत्सु अस्मद्गुरुचरणेषु साष्टाङ्गप्रणामाः विनिवेदनीयाः। अन्यच्चास्मदीयं कुशलं सर्वं संसूचनीयम्। अन्यदत्र मङ्गलमेव श्रीमतामनुग्रहेण। विश्वसिमि सर्वं वृत्तं यथाकालं ज्ञात्वा पत्रद्वारा सूचयिष्यन्ति। पितृचरणेषु अस्मत् प्रणतयो वाच्याः। तनूजाभ्यां स्वस्ति वाच्यम्।

श्रैमत्केन

अञ्जनीप्रसादपाण्डेयेन

65

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, नागपुर

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 23 जून, 1975

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु दुर्गादत्तोपाध्यायमहोदयेषु प्रणामाः सन्तु। भवतां 2-06-1975 दिनाङ्काकितं पत्रं तथा कन्यायाः पाणिग्रहणोत्सवनिमन्त्रणं चिरात्प्राप्तवतोऽपि मे प्रत्युत्तरप्रदाने सञ्जातो विलम्बो मर्षणीयः। श्रीजगन्मातुः कृपाकटाक्षेण विवाहविधिः समीचीनतया न्यवर्तततेति बाढं विश्वसिमि। श्रीजगन्मातुः कृपया तथा मादृशां श्रीजगन्मातृचरणाम्बुजरजः सदृशानां स्नेहाङ्कितानां शुभाशंसनेन सौ. कौमुदीदेवीअनिलकुमारौ सर्वेषां श्रेयसां भाजनं भविष्यत इति निश्चप्रचं भावयामि। महदिदं सौभाग्यं मदीयं यज्जगन्मातुः श्रीविन्ध्यवासिनीदेव्याः सततपरिचरणपरा भवन्तो मामनुगृह्णन्ति। अहं तावदत्र श्रीजगन्मातुश्चरणकमलस्मरणतत्परः स्वाध्यायादिना कालं यापयामि। स्मरामि च, वारं वारं भवतां सहृदयत्वं स्नेहप्रकर्ष च ये निर्व्याजं पत्रप्रेषणादिना मामाद्रियन्ते। एवमेव यथावकाशं पत्रप्रेषणेन अनुग्रहीतव्योऽस्मि। अपरमत्रत्यं सर्व कुशलं वरीवर्ति ।

भवताम्

वसन्तशेवडे

66

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, नागपुरम्

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 14 -07-1975

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु दुर्गादत्तोपाध्यायमहोदयेषु प्रणामाः सन्तु। भवतां पत्रं तथा काव्यपुष्पाञ्जलिपुस्तकं च प्राप्य प्रसीदामि। भवतां कन्यायाः पाणिग्रहमङ्गलोत्सवः निर्विघ्नः परिपूर्ण इति सर्वमेतज्जगन्मातुः कृपाकटाक्षफलमेव। नूतनं काव्यपुष्पाञ्जलिपुस्तकमामूलचूलमवालोकयम्। तत्र विन्ध्याचलनिवासिनामन्येषां च कविप्रवराणां हृदयङ्गमानि समस्यापूर्तिपद्यानि पठित्वा नूनं हर्षप्रकर्षमन्वभवम्। मदीयं वचनमिदम्, चाटुपूर्णमिति न मन्तव्यम्। सर्वेषामेव कवीनां रचनाः प्रशंसामर्हन्तीत्यत्र नास्ति संशयलेशः। सर्वमिदमवलोक्य भोजसभायां समस्यापूरणवर्णनादि न कविकल्पितं किन्तु सत्यमेवेति विश्वसिति चेतः। विन्ध्याचलवासिनां श्रीजगन्मातृकृपा–कटाक्षपात्राणां सर्वेषां भवतां सरस्वतीसमुपासकानां समुद्यमोऽयं नितरां श्लाघ्यतमः। अहमागामिनि 16-07-1975 दिनाङ्के इन्दौरनगरं गमिष्यामि। तत्र मासमेकमुषित्वा पुनरपि नागपुरमागमिष्यामि। इन्दौरनगरात्तत्रभवन्तं प्रति पत्रं प्रेषयिष्यामि । अन्यत्सर्वं कुशलमेव।

भवदीयः

वसन्तशेवडे

67

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, नागपुरम्

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 21-10-75

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु दुर्गादत्तोपाध्यायमहोदयेषु प्रणामाः सन्तु। चिरात्पत्रं प्रेषयतो मम मन्तुः क्षन्तव्यः। कार्यवशादिन्दौर– नगरं गतस्तत्र विविधव्यापारव्यग्रो मासद्वयमतिवाह्य नवरात्रमहोत्सवं सम्पादयितुं नागपुरमागच्छम्। अत्र श्रीजगन्नमातुः कृपाकटाक्षप्रसादेन प्रतिवार्षिकं शारदीयनवरात्रमहोत्सवं यथाशक्ति सम्पाद्य लब्धावकाशो भवतां पत्रं प्रेषयितुं सन्नद्धोऽस्मि। भवन्तो निर्व्याजस्नेहपरायणाः पत्रप्रेषणेन काव्यपुष्पाञ्जलिप्रेषणेन च वारं वारमनुगृह्णन्त्येदपि श्रीजगदम्बिकाप्रसादफलमेव मन्ये। सर्वाण्यपि काव्यपुष्पाञ्जलिपुस्तकान्यामूलचूलमपठिषं साभिमानश्च निर्दिशामि यद्विन्ध्याचलवासिनां सर्वेषां भवतां कविवंराणामयमुपक्रमो नितरां श्लाघ्यः। अन्यपुरवासिभिरप्यनुकरणीयश्चेति नास्ति संशयलेशः। अन्यदत्रत्यं सर्व कुशलम् । यथावकाशं पत्रप्रेषणेनानुग्रहीतव्यमिति प्रार्थयते भवतां वशंवदः।

वसन्तशेवडे

68

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, नागपुरम्

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 12 -02-1976

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु दुर्गादत्तोपाध्यायमहाशयेषु प्रणामाः सन्तु।

भवतां पत्रं प्राप्तम्। अस्मच्चित्ते खेदलेशोऽपि नास्ति। भवद्भिश्चिन्ता न कर्त्तव्या। प्रकृतेरस्वास्थ्यात् संक्षेपेणैव पत्रं लिख्यते। यथावकाशं सविस्तरं पत्रं प्रेषयिष्यामि। भवतां गुरुचरणानामपि पत्रं प्राप्नवम्। अस्मिन् वर्षे कासशैत्यादिना महतीं पीडामन्वभवम्। इदानीं श्रीजगन्मातुः कृपाप्रसादेन शनैः शनैः स्वास्थ्यमापद्यते शरीरम्। अपरमत्रत्यं सर्व कुशलमेव।. . . .

भवतां बन्धुः

वसन्तशेवडे

69

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, नागपुरम्

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 07 -11-1979

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु परमस्नेहास्पदेषु बन्धुवरेषु। भवतां पत्रं प्राप्नवम्। अहं 26/11/79 दिनाङ्के सोमवासरे नागपुरान्निर्गत्य वाराणसीमागमिष्यामि। पत्रद्वाराऽद्यैव ब्रह्मानन्दत्रिपाठिमहोदयं तथा सूचये। वाराणस्यां स्वकीयं वस्तुजातं गृहे सम्यक् स्थापयित्वा श्रीजगन्मातुर्दर्शनार्थं

विन्ध्याचलमाव्रजिष्यामि। वाराणस्यां विन्ध्याचले चोभयत्रैव यथोचितं निवत्स्यामि। अतो भवद्भिर्न दुर्मनायितव्यम्। श्रीजगन्मातुश्चरणकमलसान्निध्यं सर्वदैव समभिलषामि। आगमनात्पूर्वं पुनरपि पत्रद्वारा सूचयिष्यामि। अपरमत्रत्यं सकलं कुशलमेव। भवतां मातृ–पितृचरणेभ्यो मातुलेभ्यो डॉ.पाण्डेयमहोदयेभ्यश्च मम प्रणामाः प्रापणीयाः।. . . .

भवतां बन्धुः
वसन्तशेवडे

70

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 4-12-1979

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु परमस्नेहास्पदेषु भ्रातृषु। विगतभौमवासरे 27-11-79 दिनाङ्के वाराणसीमागच्छम् । गौदोलियास्थे घटाटेराममन्दिरे तिष्ठामि। नेदानीं वाराणस्यां समीचीनं निवासस्थानं प्राप्नवम् तदन्वेषणे तत्परोऽस्मि। शीघ्रमेव श्रीजगन्मातुर्दर्शनार्थं सर्वेषां च भवतां साक्षात्कारार्थ विन्ध्याचलमागमिष्यामि। श्रीमन्तः खिस्तेमहाशयाः कार्यवशाज्जयपुरं प्रयास्यन्ति। तत आगत्य कदाचित्तेऽपि मया सार्ध विन्ध्याचलमागमिष्यन्ति। श्रीविन्ध्यवासिनीविजयमहाकाव्यस्य नेदानीमपि कोऽपि प्रकाशनोपायो लब्धः। श्रीजगन्मातुस्तोत्रसंग्रहोऽपि मुद्रणाय सिद्धस्तिष्ठति। सोऽपि प्रकाशनमपेक्षते। शुम्भविजयमहाकाव्यमपि सप्तमसर्गपर्यन्तं सिद्धम्। सर्वमपि भवतां प्रत्यक्षं यास्यति। एतन्मुद्रणादिसर्वं श्रीजगन्मातुरधीनमेव। किं मम तच्चिन्तया। सर्वेषु तत्रत्येषु मयि स्नेहपरायणेषु प्रणामाः सन्तु।

भवतां बन्धुः
वसन्तशेवडे

71

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 15-2-1980

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु परमस्नेहास्पदेषु बन्धुषु–विन्ध्याचलमागत्य श्रीजगन्मातरं साक्षात्कृत्य वाराणसीं प्रत्यागतश्चिराय भवतां पत्रं प्रतीक्षमाणस्तदनधिगत्य निर्विण्णः पत्रमिदं प्रेषयामि। श्रीखिस्तेमहोदयानां साहाय्येन वाराणस्यां समीचीनं निवासस्थानं प्राप्नवम् । अतः परं वाराणस्यामेव मम निवासो भविता। भवतां समीपे श्रीविन्ध्यवासिनीविजयमहाकाव्यस्य तथा स्तवमञ्जूषायाः

पाण्डुलिपिलिखितं पुस्तकमस्थापयम्। मन्ये कालेनेयता तत्प्रतिनिर्वाणकार्यं पूर्णं स्यात्। अतः शीघ्रातिशीघ्रं तत्पुस्तकद्वयं कस्यचिद्धस्तेन सुरक्षितं मम समीपं प्रापयन्तु भवन्तः। अथवा खिस्तेमहाशयानां समीपं प्रेषयन्तु। बहुतिथः कालो व्यतीत इति तदपेक्षा वर्तते। श्रीमत्सु डॉ.पाण्डेयमहोदयेषु भवतां मातुलेषु च प्रणामाः प्रापणीयाः।. . . .

भवतां बन्धुः
वसन्तशेवडे

72

प्रेषकः — पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः — पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः — 28-2-1980

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु बन्धुवरेषु! भवद्भिः प्रेषिताः श्रीमन्तो राजेन्द्रप्रतापसिंहमहाभागा मद्गृहमागत्य श्रीविन्ध्यवासिनी- विजयमहाकाव्यस्य स्तवमञ्जूषायाश्च पाण्डुलिपिं मम हस्ते सन्निधाय मामन्वगृह्णन्निति सहर्षं निवेदये। मन्ये कालेनेयता श्रीविन्ध्यवासिनीविजयमहाकाव्यं स्तवमञ्जूषां चाऽमूलचूलमवालोचयन् भवन्त इति। किन्तु स्वकीयमभिप्रायं न किञ्चिदसूचयन्निति विशंकते चेतः। प्रार्थयेऽग्रिमे पत्रे काव्यद्वयविषयकं स्वकीयमभिप्रायं निवेद्य मामनुग्रहीष्यन्ति भवन्तः। अपरमत्रत्यं सर्वं श्रीजगन्मातुः कृपाकटाक्षप्रसादेन कुशलम्। डॉ.पाण्डेयमहोदयेषु भवतां मातुलेषु च मम प्रणामाः प्रापणीयाः।

भवतां बन्धुः
वसन्तशेवडे

73

प्रेषकः — पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः — पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः — 16-3-1980

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु परमस्नेहास्पदेषु बन्धुषु!

भवतां पत्रद्वयं प्राप्नवम्। मादृशाय वराकाय को वा निःशुल्कं निवासस्थानं दद्यात्? अस्य निवासस्थानस्य मासिकं शुल्कं सपादशतरूप्यकाणि (125 रू.) वर्तते। एतदतिरिक्तं विद्युद्दीपशुल्कं प्रदेयम्। तथापि महता प्रयत्नेन स्थानमिदं प्राप्तम्। मासद्वयं यावदाशानिराशयोर्दोलायमानमानस आसम्। कक्षत्रयात्मकं समीचीनमेवेति वक्तव्यम्। गत्यन्तराभावाद्यादृशं स्थानं सुलभमासीत्तादृशं स्वीकृतम्। तत्र नासील्लेशमपि तारतम्यविचारः। अधुनाऽपि नागपुराद् वस्तुजातं नागतम्। तेन

काऽपि व्यवस्था नास्ति। वस्तुजातप्राप्त्यनन्तरं नियतव्यवहारो भविष्यति। इदानीमायुष्मतो ब्रह्मानन्दत्रिपाठिमहाशयस्यैव गृहे भोजनं विधीयते। शुम्भवधकाव्यं चतुर्दशसर्गात्मकं समाप्तिमगात्। तस्य मुद्रणप्रतिरपि सिद्धा वर्तते । काव्यमिदं श्रीमद्भिः खिस्तेमहोदयैरन्यैश्च डॉ.रेवाप्रसादद्विवेदिप्रभृतिभिः श्रुतं प्रशंसितश्च। अपरमत्रत्यं सर्वं कुशलं वरीवर्ति। डॉ.कमलाकान्तपाण्डेयमहोदयाय भवतां मातुलेभ्यश्च मदीयाः प्रणामाः प्रापणीयाः।

भवतां बन्धुः
वसन्तशेवडे

74

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 8-8-1980

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु स्नेहास्पदेषु बन्धुषु!

भवतां पत्रं प्राप्नवम्। उत्तरप्रेषणे विलम्बो मर्षणीयः। दैनन्दिनकार्यजातव्यापृतस्य मम पत्रप्रेषणाभावेन पत्रप्रेषणविलम्बेन वा भवद्भिर्न विमनायितव्यम्। नागपुरे सुचिरं निवासात्सर्वमपि सूत्रबद्धं सुकरमासीत्। सुहृदामपि साहाय्यं वारं वारं प्राप्नवम्। वैदेशिकोऽहं वाराणसीमागत्य निवसन् बहुत्र व्यवहारकाठिन्यमनुभवामि। आयुष्यमान् ब्रह्मानन्दत्रिपाठिमहाशयस्तत्कुटुम्बिनश्च सर्वविधं साहाय्यं वितरन्ति तेनैवात्र व्यवहारजातं निर्वोढुं प्रभवामि। अन्यथा वाराणस्यां निवासः कठिनतरोऽभविष्यत्। शुम्भवधमहाकाव्यस्य केवलमेका मुद्रणप्रतिर्वर्तते। अन्यापि लेखनीया किन्तु तदर्थं समयो न लभ्यते। तदपि महाकाव्यं मुद्रणार्थं सिद्धं वर्तते। श्रीजगन्मातुः कृपाप्रसादेनैव प्रकाशं लभेत। नास्त्यस्माकं मुद्रणे प्रकाशने वाऽभिनिवेशः। दिष्ट्या पौत्रप्राप्त्या समेधते भवन्तः। अन्यदत्रत्यं सर्वं कुशलं वरीवर्ति। . . .

भवतां बन्धुः
वसन्तशेवडे

75

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 30-10-1980

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु स्नेहास्पदेषु बन्धुषु,

भवतां पत्रं प्राप्नवम्। नवरात्रोत्सवे व्यापृतस्य पत्रप्रेषणे विलम्बो मर्षणीयः। अहं दीपावलीमहोत्सवार्थमित इन्दौरनगरमुपेत्य तत्र कञ्चित्कालमुषित्वा ततो नागपुरं गत्वा तत्रास्मत्सुहृदः

पुत्रस्य विवाहमङ्गलं सम्पाद्य वाराणसीमागन्ताऽस्मि। अतो मासद्वयं वाराणस्या बहिरेवावस्थानं मे भविष्यति। विन्ध्यवासिनीविजयमहाकाव्यं क्रमशः सूर्योदयमासिके भारतधर्ममहामण्डलप्रचालिते मुद्रयितुं तत्सम्पादकैर्डक्टरपरमहंसमिश्रमहोदयैरङ्गीकृतमाशासे च ते स्ववचनपरिपूर्तिं करिष्यन्तीति। तदनुसारेणादिमो नवसर्गात्मको भागस्तेभ्यः प्रदत्तः । तदनन्तरं यथाशक्ति पत्रव्ययप्रदानेन ग्रन्थमुद्रणं सम्पत्स्यते। डॉ.पाण्डेयमहोदयानां निधनेन महान्तं खेदमन्वभवम्। ते सहृदया, उदारमनस्काश्चासन्। श्रीजगन्मातुः कृपया मुक्तिं प्राप्नुयुः। शेषं कुशलम्।

भवतां बन्धुः
वसन्तशेवडे

76

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 09-1-1984

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु स्नेहास्पदेषु दुर्गादत्तमहोदयेषु–

भवतां पत्रं प्राप्नवम्। श्रीविन्ध्यवासिनीविजयमहाकाव्यम् उत्तरप्रदेशसंस्कृतअकादमीद्वारा कालिदास–पुरस्कार–प्रदानेन पुरस्कृतम्। अयं पुरस्कारः पञ्चसहस्ररूप्यकात्मको वर्तते। पुरस्कार–वितरण–समारोहो लक्ष्मणपुरे 17 जनवरीदिनाङ्के सम्पत्स्यते। शुम्भवधमहाकाव्यमपि मुद्रितमतः विन्ध्यवासिनीविजयं शुम्भवधं चेति महाकाव्यद्वयमादाय यथावसरं श्रीजगन्मातुर्दर्शनार्थं विन्ध्याचलमागमिष्यामि। तत्पूर्वं पत्र द्वारा भवद्भ्यः सूचयिष्यामि। पूर्वं निवासस्थानं परित्यज्य नूतनं निवासस्थानं स्वीकृतम्। . . . . अपरं सर्वं कुशलम्।

भवदीयः
वसन्तशेवडे

77

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 11-4-84

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु स्नेहास्पदेषु दुर्गादत्तोपाध्यायमहोदयेषु– कविसम्मेलनावसरे भवद्भ्योऽकथयं यद् श्रीजगन्मातुर्दर्शनार्थं विन्ध्याचलमागमिष्याम इति। तदनुसृत्य एप्रिलमासस्य 22 दिनाङ्के रविवासरे वयं विन्ध्याचलमायास्यामः। शुम्भवधमहाकाव्यस्य मुद्रणं सञ्जातमतः महाकाव्यद्वयं श्रीजगन्मातुश्चरणकमलयोः समर्पयितुमिच्छामि। आशासे तस्मिन् दिने भवन्तोऽवकाशं

काऽपि व्यवस्था नास्ति। वस्तुजातप्राप्त्यनन्तरं नियतव्यवहारो भविष्यति। इदानीमायुष्मतो ब्रह्मानन्दत्रिपाठिमहाशयस्यैव गृहे भोजनं विधीयते। शुम्भवधकाव्यं चतुर्दशसर्गात्मकं समाप्तिमगात्। तस्य मुद्रणप्रतिरपि सिद्धा वर्तते । काव्यमिदं श्रीमद्भिः खिस्तेमहोदयैरन्यैश्च डॉ.रेवाप्रसादद्विवेदिप्रभृतिभिः श्रुतं प्रशंसितश्च। अपरमत्रत्यं सर्वं कुशलं वरीवर्ति। डॉ.कमलाकान्तपाण्डेयमहोदयाय भवतां मातुलेभ्यश्च मदीयाः प्रणामाः प्रापणीयाः।

भवतां बन्धुः
वसन्तशेवडे

74

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 8-8-1980

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु स्नेहास्पदेषु बन्धुषु!

भवतां पत्रं प्राप्नवम्। उत्तरप्रेषणे विलम्बो मर्षणीयः। दैनन्दिनकार्यजातव्यापृतस्य मम पत्रप्रेषणाभावेन पत्रप्रेषणविलम्बेन वा भवद्भिर्न विमनायितव्यम्। नागपुरे सुचिरं निवासात्सर्वमपि सूत्रबद्धं सुकरमासीत्। सुहृदामपि साहाय्यं वारं वारं प्राप्नवम्। वैदेशिकोऽहं वाराणसीमागत्य निवसन् बहुत्र व्यवहारकाठिन्यमनुभवामि। आयुष्मान् ब्रह्मानन्दत्रिपाठिमहाशयस्तत्कुटुम्बिनश्च सर्वविधं साहाय्यं वितरन्ति तेनैवात्र व्यवहारजातं निर्वोढुं प्रभवामि। अन्यथा वाराणस्यां निवासः कठिनतरोऽभविष्यत्। शुम्भवधमहाकाव्यस्य केवलमेका मुद्रणप्रतिर्वर्तते। अन्यापि लेखनीया किन्तु तदर्थं समयो न लभ्यते। तदपि महाकाव्यं मुद्रणार्थं सिद्धं वर्तते। श्रीजगन्मातुः कृपाप्रसादेनैव प्रकाशं लभेत। नास्त्यस्माकं मुद्रणे प्रकाशने वाऽभिनिवेशः। दिष्ट्या पौत्रप्राप्त्या समेधते भवन्तः। अन्यदत्रत्यं सर्वं कुशलं वरीवर्ति। . . .

भवतां बन्धुः
वसन्तशेवडे

75

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 30-10-1980

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु स्नेहास्पदेषु बन्धुषु,

भवतां पत्रं प्राप्नवम्। नवरात्रोत्सवे व्यापृतस्य पत्रप्रेषणे विलम्बो मर्षणीयः। अहं दीपावलीमहोत्सवार्थमित इन्दौरनगरमुपेत्य तत्र कञ्चित्कालमुषित्वा ततो नागपुरं गत्वा तत्रास्मत्सुहृदः

पुत्रस्य विवाहमङ्गलं सम्पाद्य वाराणसीमागन्ताऽस्मि। अतो मासद्वयं वाराणस्या बहिरेवावस्थानं मे भविष्यति। विन्ध्यवासिनीविजयमहाकाव्यं क्रमशः सूर्योदयमासिके भारतधर्ममहामण्डलप्रचालिते मुद्रयितुं तत्सम्पादकैर्डाक्टरपरमहंसमिश्रमहोदयैरङ्गीकृतमाशासे च ते स्ववचनपरिपूर्तिं करिष्यन्तीति। तदनुसारेणादिमो नवसर्गात्मको भागस्तेभ्यः प्रदत्तः । तदनन्तरं यथाशक्ति पत्रव्ययप्रदानेन ग्रन्थमुद्रणं सम्पत्स्यते। डॉ.पाण्डेयमहोदयानां निधनेन महान्तं खेदमन्वभवम्। ते सहृदया, उदारमनस्काश्चासन्। श्रीजगन्मातुः कृपया मुक्तिं प्राप्नुयुः। शेषं कुशलम्।

भवतां बन्धुः

वसन्तशेवडे

76

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 09-1-1984

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु स्नेहास्पदेषु दुर्गादत्तमहोदयेषु–

भवतां पत्रं प्राप्नवम्। श्रीविन्ध्यवासिनीविजयमहाकाव्यम् उत्तरप्रदेशसंस्कृतअकादमीद्वारा कालिदास–पुरस्कार–प्रदानेन पुरस्कृतम्। अयं पुरस्कारः पञ्चसहस्ररूप्यकात्मको वर्तते। पुरस्कार–वितरण–समारोहो लक्ष्मणपुरे 17 जनवरीदिनाङ्के सम्पत्स्यते। शुम्भवधमहाकाव्यमपि मुद्रितमतः विन्ध्यवासिनीविजयं शुम्भवधं चेति महाकाव्यद्वयमादाय यथावसरं श्रीजगन्मातुर्दर्शनार्थं विन्ध्याचलमागमिष्यामि। तत्पूर्वं पत्र द्वारा भवद्भ्यः सूचयिष्यामि। पूर्वं निवासस्थानं परित्यज्य नूतनं निवासस्थानं स्वीकृतम्। . . . .. अपरं सर्वं कुशलम्।

भवदीयः

वसन्तशेवडे

77

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 11-4-84

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु स्नेहास्पदेषु दुर्गादत्तोपाध्यायमहोदयेषु– कविसम्मेलनावसरे भवद्भ्योऽकथयं यद् श्रीजगन्मातुर्दर्शनार्थं विन्ध्याचलमागमिष्याम इति। तदनुसृत्य एप्रिलमासस्य 22 दिनाङ्के रविवासरे वयं विन्ध्याचलमायास्यामः। शुम्भवधमहाकाव्यस्य मुद्रणं सञ्जातमतः महाकाव्यद्वयं श्रीजगन्मातुश्चरणकमलयोः समर्पयितुमिच्छामि। आशासे तस्मिन् दिने भवन्तोऽवकाशं

श्रीजगन्मातुश्चरणकमलयोः समर्पयितुमिच्छामि। आशासे तस्मिन् दिने भवन्तोऽवकाशं गृहीत्वाऽस्मान् श्रीजगन्मातुर्दर्शनं कारयेयुरिति। अपरमत्रत्यं सर्वं श्रीजगन्मातुः कृपया कुशलं वरीवर्ति।

भावत्कः
वसन्तशेवडे

78

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम् उत्तरप्रदेशः
तिथिः – 24-12-84

श्रीजगदम्बिका

श्रीमत्सु दुर्गादत्तमहोदयेषु–

भवतां पत्रं मङ्गलप्रशस्तिपुस्तकं च प्राप्नवम्। कार्यव्यापृतस्य मम पत्रप्रेषणे विलम्बो मर्षणीयः। मङ्गलप्रशस्तिपुस्तकं रमणीयं वरीवर्ति। आकाशवाण्यां कविगोष्ठ्यवसरे श्रीमतः शिवजी उपाध्यायस्य शिवदत्तचतुर्वेदस्य च दर्शनमभवत्। अन्यत्सर्व श्रीजगन्मातुः कृपाकटाक्षप्रसादेन क्षेमं जागर्ति।

भवतां बन्धुः
वसन्तशेवडे

79

प्रेषकः – पण्डितवसन्तशेवडे, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 6-1-1986

श्रीजगदम्बिका

आयुष्मत्सु दुर्गादत्तमहोदयेषु–

अहं ह्यस्तने 5-1-86 दिनाङ्के नागपुराद्वाराणसीमागच्छम्। कार्यविशेषवशाद् 17-12-85 दिनाङ्के नागपुरं गत्वा तत्र सप्तदशदिनान्युषित्वा कार्यं सम्पाद्य वाराणसीं प्रत्यावृत्तो भवतां पत्रं प्राप्नवम्। साहित्यअकादम्या राष्ट्रियपुरस्कारप्रदानेन श्रीजगन्मातुः कीर्तिगाथा श्रीविन्ध्यवासिनीविजयमहाकाव्यं सम्मानितेति युक्तरूपमेव। को वा सहृदयः श्रीजगन्मातुः कीर्तिगाथां सम्मान्य आत्मसम्मानं न विदध्यात्। अभिनवमेघदूतं संस्कृतव्याख्या–हिन्दी–भाषानुवाद–आङ्ग्लभाषानुवादैः परिष्कृतं मुद्रणार्थं चिरं सिद्धं वर्तते। उत्तरप्रदेशसंस्कृत–अकादम्या असिस्टेन्ट–डायरेक्टरपदमलङ्कुर्वाणो श्रीचन्द्रकान्तद्विवेदिमहोदयः परिष्कृतं संस्करणं प्रतिशुश्राव। किन्तु जानन्त्येव भवन्तः श्रेयांसि बहुविघ्नानीति। भवतु, श्रीजगन्मातुः कृपाकटाक्षप्रसादेन मुद्रणं, प्रकाशनं च तस्य भवेत्। अभिनवमेघदूते वैदर्भीरीतेः समीचीनः परिपाकः समजायतेति प्रत्यक्षतोऽनुभाव्यम्। अन्यत्सर्वं कुशलं वर्तते।

भवदीय
वसन्त शेवडे

80

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 13-04-1984

॥ श्रीः ॥

श्रीमत्सु प्रणामाः

श्रीमतां पत्रमुपलभ्य, जीवनमिव नूतनं समधिगतम्। अहो वाक्प्रवाहो भावसौन्दर्यं च पत्रेष्वपि श्रीमताम्। श्रीमद्बोधितवर्षर्तुसंगमाय नितान्तमधुनैवोत्कण्ठामाप्नुवच्चेतः प्रतीक्षते वर्षर्तुम्। दतियानगरे पीताम्बरापीठे कार्यक्रमेषु संगन्तुं श्रीमन्तः पुनरपि निवेद्यन्ते। व्यग्रतायां शीघ्रतायां पत्रलेखनस्य धृष्टता कृपया क्षन्तव्या। सविस्तरं पत्रं पश्चात् प्रेषयिष्ये।

भवदीयः

शिवदत्तः

81

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 14-07-1984

॥ श्रीः ॥

श्रीमत्सु सादराः प्रणतयः।

श्रीमतां मनोरमपत्रयोरुत्तरेण इयान् विलम्बो भविष्यतीति नासीत् कल्पितमपि। दतियानगरे सुशोभनायोजनसौन्दर्यं निभालितम् । वर्णनातीतमेवासीत्तत्र सर्वम्। शाक्तसिद्धपीठत्वेनेदानीं ततस्थानं सुविख्यातमिति कालान्तरे कदाचित् श्रीमतां तत्र यात्रा स्यान्मया सह वा, स्वातन्त्र्येणैव वेति जगदम्बां पीताम्बरामभ्यर्थये सविनयम्।

वर्षर्तुरायाता यत्कृते विन्ध्यशोभाविलोकनौत्सुक्यमङ्कुरितमस्मच्चेतसि श्रीमद्भिः पूर्वतने पत्रे। जयपुरस्थस्वर्गीयभट्टश्रीमथुरानाथ(मंजुनाथ)तनुजन्मानः श्रीभट्टकलानाथशास्त्रिणः सन्ति जयपुरे राजस्थान–भाषा–विभाग–संचालकपदे प्रतिष्ठिताः तेऽत्र परीक्षाऽवसरे अगस्तमासस्य तृतीयेऽन्तिमे वा सप्ताहे मन्निकटे प्रायो दिनद्वयं स्थास्यन्ति । तैः सहेयं यात्रा सम्पादनीयेति जागर्ति हृदयेऽभिलाषः। आशासे श्रीमन्तः सपरिवारा जगदीश्वरीकृपया सर्वथा कुशलिनः सन्ति। पत्रोत्तरं प्रतीक्षमाणः।

भवदीयः

शिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः

82

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 28-07-1984

॥ श्रीः ॥

श्रीमत्सु मान्यवर्येषु सादराः प्रणतयः।

श्रीमत्करकमलाक्षराङ्कितं सुस्वादुशीतलं चन्दनविलेपनानन्दजनकं पत्रमुपलभ्य नितरां प्रासीदच्चेतः । तत्प्रमाणरूपेणैवेदं पत्रं पुनरपि प्रेषयामि । सेवासु, यद्धि आनन्दनिश्वासोच्छलितवर्णरूपम्। नान्यत्र किमपि नूतनं निवेदनीयम् । केवलं श्रीमन्मौक्तिकाक्षराङ्कितपत्रारूढभावलहरिकां पुनरप्यात्मसात्कर्तुमेष मे सतत जागरूकः प्रयासः प्रचलेत्– "श्रेयसि केन तृप्यते" इति काव्योक्तेः। श्रीमतां तत्रभवतां कलानाथशास्त्रिणामद्यापि कियद्दिनपर्यन्तमत्र स्थितिर्भवितेति न स्पष्टम् । पुनरपि विगतपत्रोल्लिखितदिवसेषु लखनऊनगरे उत्तरप्रदेशसंस्कृताकादम्या वार्षिकमधिवेशनं तत्र च अखिलभारतीयसंस्कृतकविसम्मेलनं तत्रापि वयमाहूता इति। तस्मिन् त्ववसरेऽधिकनिवासो दुष्कर इव। ततः पूर्वमेव यदि शिवजीमहोदयैः सह तत्राऽगमनाय कापि संवित्तर्हि ते यथेच्छं तत्र स्थातुं मया सह प्रभवेयुः। अवकाशं ग्रहीष्यामि तदर्थम्। निखिलब्रह्माण्डजनन्याश्चरणयोः कृपया मद्द्वारा प्रणामाञ्जलयो विनिवेदयन्तु तदाशीर्वादांश्च मह्यं प्रेषयन्तु कृपया।

शिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः

83

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी
प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्
तिथिः – 18-01-1985

॥ श्रीः ॥

श्रीमत्सु मान्येषु प्रणतयः।

श्रीमतां स्नेहप्रपूरितं पत्रं समासाद्य समजायत सुमहानानन्दः । श्रीमतां सुपुत्रस्य विवाहयात्रायां भूयानानन्दानुभवः समजायत। श्रीमतां शिवजीमहानुभावानां तत उत्तरं नाजायत साक्षात्कार इति परस्परालापसुखानुभवो नासादितः।

मदीयायाः कन्यायाः विवाहो विद्यते फरवरीमासस्याष्टमदिनाङ्के। श्रीमतां सेवायां तत्रोपस्थातुं विनिवेदना क्रियते। 'परिणयपुस्तकम्' आद्योपान्त नाम अनेकवारमपठम्। वहुशोभनेयं

परिणतिः प्रयासस्य। कृपया मदीयदुहितुर्विवाहावसरविज्ञापनाशीर्वादप्राप्त्यै सर्वजगदीश्वरीं विन्ध्येश्वरीं मातरं सम्प्रार्थयितुमपि श्रीमन्त एवेदानीं मया विनिवेद्यन्ते।

आगामिन्यां वर्षर्तौ श्रीमतामाज्ञां पालयिष्ये।

भवदीयः

शिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः

84

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 11-08-1985

॥ श्रीः ॥

श्रीमन्तो मान्यधुर्याः सादराः प्रणतयः,

श्रीमतां पत्राणि काले काले प्राप्तानि। कन्याविवाहावसरे श्रीमत्प्रेषितं द्रव्यमपि सादरं सम्प्राप्तमासीत्। विगतेषु मदीयस्य चेतसः कापि विलक्षणैव स्थितिः समजनि, यां कथं वा निवेदयेयम्। आस्ताम्। श्रीमतां विन्ध्यवर्णना सर्वदैव समाकर्षतितमाम्। त्वत्वर्णनैतादृशमाकर्षणं वितरति तत् स्वयं पुनः कीदृशं स्यादिति वञ्चित एवाद्यावधि तद्दर्शनादिति खिद्ये। आशासे शीघ्रमेव विनैव पूर्वसूचनां समुपस्थास्यामि श्रीमदन्तिके। पूर्वसूचना कथं वा देया स्यात्। आशासे श्रीमन्तस्तथानुष्ठितेऽपि क्षाम्येरन् माम्। शेषं कुशलम्।

श्रीमदीयः

शिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः

85

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 14-10-1985

॥ श्रीः ॥

श्रीमत्सु प्रणामाः।

सेमिनारप्रसङ्गादिहायातोऽस्मि। किमप्यस्ति निवेदनम्। हिन्दी–आङ्गलादिसाहित्यतत्तद्भाषा-लिखितानां व्यक्तिगतमहत्त्वपूर्णपत्राणां पुस्तकरूपप्रस्तुतिर्विलोक्य आनन्दः कश्चनानुभूयते। संस्कृते न दृष्टं तथाविधं किमपि केवलपत्रात्मकं पुस्तकमिति तत्रावहितं मदीयं चेतः। शताधिकपत्राणां उपलब्धिस्तु जाता। पञ्चशतादन्यूनपत्राणां संग्रहो भवेदिति मनीषा। श्रीमन्तस्तत्र भवन्तः पत्राणां

संग्रहेऽपि शूरा इति श्रीशिवजीमहोदयैर्ज्ञातम्। तत एव संग्रहीतसंस्कृतपत्राणां पत्रसंग्रहपुस्तके प्रकाशनार्थं सम्प्रदानाय भवत्सेवासु विधीयते प्रार्थना। अन्ये के तावदस्मिन् विषये भवद्विचारे सम्प्रार्थनीया इत्यपि कृपया बोधनीयम्। पत्रोत्तरप्रदानं वाराणसीसंकेतेनैव कृपया विधेयमिति। भूयो भूयः प्रणामाः।

शिवदत्तश्चतुर्वेदः

86

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 8-11-85

॥ श्रीः ॥

श्रीमन्तो मान्याः! सादराः प्रणतयः।

पत्रस्य विलम्बेनावाप्ति...खिद्ये। दीपावल्याः शुभकामनाः कृपया स्वीकुर्वन्तु । संस्कृतपत्राणां स्वतः संकलनं विधातुमामन्त्रित इति नूनमुत्साहितोऽस्मि। श्रीखिस्तेपादानामपि सविधे प्रार्थना विहिता। अन्येषामपि सविधे प्रार्थितवानस्मि। प्रयत्नमिदं कीदृशमिति स्वविचारप्रकटनेन कृतार्थनीयः। यावत्त्वावयोः साक्षात्कारो न जायते तावत्पर्यन्तं पत्रप्रदाननैरन्तर्येणानुगृह्णन्तु येनैताषामपि प्राप्तानां पत्राणां संग्रहे प्रकाशनायोपयोगित्वं स्यात्। तदर्थं सविस्तरं कासाञ्चनसमस्यानामप्युपरि प्रकाशः पातः कर्तुं शक्यो यथा शिक्षानीतौ संस्कृतस्य किं स्थानं स्यात्? संस्कृते यल्लिखितमद्यावधि तस्य ज्ञानं तु भाषान्तरेणापि सम्पाद्यत एव। साक्षात् संस्कृतभाषाशिक्षणे ये सन्त्यसमर्थास्ते तत्रत्यज्ञानलाभाय किमनुष्ठेयुरित्येवमादिविषयाणामुपरि भवादृशां प्रकाशदानं नूनं मोदाय कल्प्यते।

श्रीमद्बोधितदिशा शीघ्रमेवोपस्थास्यामि श्रीमदन्तिक इति।

भवदीयः

शिवदत्तः

87

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 12-12-85

॥ श्रीः ॥

श्रीमन्तस्तत्रभवन्तो विद्वत्प्रवराः, सविनयं प्रणामाञ्जलयः।

श्रीमतां पत्रमासादितम्। श्रीमत्प्रदर्शितदिशा शीतावकाशे तत्रागमनायावश्यं यतिष्ये । बहिर्गमनमपि तस्मिन् काले संभाव्यत इति कश्चनास्त्येव सन्देहः। परं कार्यक्रमस्तादृश एव शोभनो

यः श्रीमद्भिरासूचितः। कालेऽस्मिन् यदि श्रीशिवजीमहोदयोऽपि सङ्गतो भवेत्तच्छोभनमिति । स श्रीमतां वशंवद एवेति कृपया तमपि तथैवाज्ञपयन्तु श्रीमन्तो यथा मामादिष्टवन्त इति प्रार्थये येनावयोरितः सहैव भवेत्तत्रागमनं प्रतिनिवृत्तिश्च। संस्कृतसम्बन्धिप्रश्नोपरि श्रीमतामेवंविधं पलायनमप्रत्याशितं सर्वथा। तत्त्वविरहिता, मात्रा, श्रद्धाऽद्य भक्षयति भारतीयां सस्कृतिं संस्कृतसमाजं ब्राह्मणवर्गञ्च। भवादृशास्तेजस्विनः कुतो न तादृशं रूपं भर्त्सयेयुर्येन प्रेरणा काचिज्जागृयात् शोभनस्वरूपोपलब्धये सामयिकानाम्। पूर्वं निन्द्यं स्वरूपं पातयितुमनिवार्यं भवति नूतनोन्नतिं सम्प्राप्तये। तत्रावश्यं सुस्पष्टतया प्रगतिप्रेरकाः विचाराः श्रीमद्भिः प्रकटनीयाः। क्षन्तव्यः स्पष्टभाषणधाष्टर्याय ।

विनीतः

शिवदत्तः

88

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – 3-3-1986

॥ श्रीः ॥

मान्येषु प्रणतयः।

श्रीमतां भगवत्या वीणावादिन्या स्तुतिपद्यपुष्पसुरभितं पत्रं समासाद्य परमानन्दमन्वभवम्। बहोः कालान्न जायते दर्शनं श्रीशिवजीमहोदयानाम्। तेनैव तत्रागमनकार्यक्रमनिर्माणं नाद्यावधि सफलं जातमिति खिद्ये। मन्ये, तत्रोपस्थितिस्तु जगदम्बाया आकर्षणकृपामन्तराऽसंभवैव, प्रयत्नशतैरपि। मातुर्यदेव वाञ्छिष्यते तदैव नूनं समुपस्थितिस्तत्रावश्यम्भाविनीति निध्यायैव कालं यापयामः। श्रीमतां दिवसेष्वेषु भवेद्यदीहागमनं नूनं कृपया सूचनयाऽनुगृह्णन्तु। पुनः पुनः प्रणामाः।

भवदीयः

शिवदत्तः

89

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुरम्

तिथिः – पौष कृष्ण 7 शनिः 2082 सन् 1990

॥ श्रीः ॥

अयि श्रीमन्तः मान्याः महोदयधुर्याः।

सादराः प्रणतिततयो विलसन्तु।

श्रीमतां समासाद्य मौक्तिकप्रायाक्षराङ्कितं पत्रं निभाल्य चाक्षरसमूहनृत्यमाधुरीं पायं पायं च सुरम्यतरभावोल्लासनैपुर्णी कस्य पामरस्यापि मनो न मुह्यति माधुरीं प्रति। नितान्तं

सुनिर्मलस्वान्ताः श्रीमन्तोऽङ्गीकुर्वन्तु कृपया भूयो–भूयो मदीयाः निवेद्यमानतां नीत्वा धन्यतां नीता भावाञ्जलिपरम्पराः।

सत्यमेवाहमन्यत्र गन्तुं विवशो जातः। सद्यो विवाहितायाः कन्यायाः समीपे गमनमनिवार्यतां यातम्। शीघ्रमेव कस्मिंश्चिद्दिवसपुण्योदये श्रीमत्सविधे निवेदयितमुत्सहे निखिलकोटिब्रह्माण्डा– धिष्ठान्यन्तश्चरणसरसीरुहे प्रणामाञ्जलीन्। साक्षात्करिष्यते चाभिनवकालिदासायमानवाग्वैभवः श्रीमत्कृपा–कटाक्षितः श्रीशिवजीमहोदयः। सर्वेषामिहत्यानां स्वीकुर्वन्तु प्रणामाँस्तत्रभवन्तो भवन्तः।

विनीतः

शिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः

90

प्रेषकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः, वाराणसी

प्रापकः – पण्डितदुर्गादत्त उपाध्यायः, मिरजापुर उत्तरप्रदेशः

तिथिः – ...

॥ श्रीः ॥

श्रीमत्सु समादरणीयप्रवरेष्वेता नमस्कृतयो, विनिवेद्यन्ते श्रद्धासहिता स्वीकार्यतां यान्तु॥1॥
नानाकार्यवशादथ मासद्वयकात् प्रवासेऽहं, यातः पुनरागत्यासादितवान् भवत्पत्रे ॥2॥
पत्रप्रदानवेलाविलम्बधार्ष्ट्ये क्षमां याचे, सन्तो भवादृशानन्वपराद्धेषु क्षमोत्सुका एव॥3॥
शोकाऽकुलितं वृत्तं भवतां श्रीतातपादानाम्, नश्वरदेहत्यागं प्रकुर्वतां खेदयति चेतः ॥4॥
तेषामौर्ध्वदैहिककृत्यं सम्पाद्य विधिपूर्णं, नूनं सत्पुत्रत्वं श्रीमद्भिः सुप्रमाणितं सम्यक् ॥5॥
वारं वारं जातामुत्कण्ठां श्रीमतां गेहे, समुपस्थातुं दैवादपूरितां धारयाम्याहो॥6॥
देवर्षिकलानाथाः जयपुरतः संगताश्चासन्, त्वरिता एव पुनस्ते गतवन्तो नो गता विन्ध्ये॥7॥
भाग्यवशात्संदर्शनसौभाग्यं लभ्यते मातुर्जगदम्बाया नतमां स्वेच्छा तत्रास्ति कारणीभूता॥8॥
श्रीमत्कनिष्ठपुत्रप्रोद्वाहस्यापि सन्दोहः, सन्तिष्ठते पुरस्तादाशा काचित्स्थिता तत्र॥9॥
पुनरपि पत्रविलम्बापराधधार्ष्ट्ये क्षमां याचे। याचे पुनश्च भवतां दिव्यं स्नेहाङ्कितं पत्रम्॥10॥

भवदीयः

शिवदत्तशर्मा चतुर्वेदः

91

प्रेषकः – देवर्षिकलानाथशास्त्री, जयपुरम् (राज.)

प्रापकः – पण्डितशिवदत्तशर्मा चतुर्वेदी, गुवाहाटी

तिथिः – 12-02-2016 (माघ शुक्ल पञ्चमी सं. 2072)

राष्ट्रपतिसम्मानिताः सुहृद्वर्याः

डॉ. शिवदत्तशर्माचतुर्वेदिमहोदयाः, गुवाहाटी

प्रियसुहृदयेषु सादरप्रश्रयाः प्रणतयः.

गतेषु दिवसेषु श्रीमत्प्रणीते "आर्याणवे" विविधविषयानवलम्ब्य परःसहस्रपद्यवितर्तिं परिशीलयन् हर्ष–विस्मयस्मृत्यालोकादिभावशबलतायां मग्नोऽभूवम्। अस्मिन् संग्रहे भवद्भिस्तदानीन्तना विद्वन्मण्डल्यपि स्मृताऽस्ति, मत्पितृचरणानां कृतित्वमप्युपवर्णितम्। अहमपि स्मृत इति नूनं हृदयाह्लादकरं सर्वम्। तदानीमेव गुवाहाटीस्थितेन भवता सह दूरभाषोपरि यः संलापो गते सप्ताहे समजनि यस्मिंश्च प्रसङ्गवशात्तदिदं तथ्यमप्यनुशीलितमावाभ्यां यत्तदानीन्तनानां विद्वत्तल्लजानां यः पत्राचारोऽनुदिनं सञ्जायते स्म स प्रायशः संस्कृतेऽभूत्, तेषु च तादृशी हृदयावर्जिका भावप्रवणता, कदाचन विनोदकणिकाः, कदाचन वैदुष्यसंवलिता शास्त्रचर्चाऽनुस्यूता भवति स्म यत् पत्रलेखनस्य नूतनैका विधा जागरिताऽभूत्। तदानीन्तनेषु पाठ्यक्रमेषु पत्रलेखनविधाप्रशिक्षणस्यापि भवति स्म कश्चनांशः अनुपलब्धप्राया एव तादृश्यः पत्रसामग्र्य एषु दिवसेषु।

स्मराम्यधुना मत्पितृचरणानां संवादं विद्वद्वररामचन्द्रबलवन्तआठवलेमहाभागैः सह (ये जगन्नाथ–पण्डितराजकृतित्वविमर्शकत्त्वेन, रसगङ्गाधरस्य महाराष्ट्रभाषानुवादकत्वेन च सुप्रथिता अभूवन्) यत्र तैर्विस्मयकारीणि संस्मरणानि संसूचितानि स्वसुहृदां पत्राचारविषये। भवन्तोऽपि स्मरेयुर्यद्भवतां प्रातःस्मरणीयानां पितृचरणानां मत्पितुश्च परमसुहृदो वैयाकरणचक्रचूडामणयो राजगुरुश्रीचन्द्रदत्त– ओझामहाभागा व्याकरणविभागाध्यक्षा आसन् जयपुरीये सुप्रथिते संस्कृतशिक्षासंस्थाने महाराजसंस्कृत– कालेजाख्ये तैश्च न जाने कस्मिन् प्रसङ्गे तादृशी प्रतिज्ञाऽभूद् विहिता यत्ते संस्कृते यदपि लेखनं करिष्यन्ति तत् पद्यबद्धमेव भविष्यति। तैश्च काश्चन परीक्षा अपि पद्यबद्धान्युत्तराणि विलिख्यैवोत्तीर्णा इति सूचना बहुत्र लेखबद्धाऽपि दृष्टा मया तत्संस्मरणप्रसङ्गे, भवन्तोऽपि स्मरेयुरेव तदिदम्। तेषां खलु पत्राचारोऽपि पद्यबद्धो भवति स्म!! कीदृशः स्यात्तादृशः पत्राचार इति चिन्तयन् कः खलु रोमाञ्चं नानुभवेत्।

इदमपि सुप्रथितं जयपुरीयविद्वत्समाजे यत् संस्कृते हिन्द्यामाङ्ग्लभाषायां च प्रावीण्यमधिजग्मुषां काशीहिन्दूविश्वविद्यालये प्राच्यसङ्कायाध्यक्षाणाम्, 'उसने कहा था' इति हिन्दीलघुकथया हिन्दीसाहित्योतिहासे स्वर्णाक्षरैरङ्कनीयानां विद्वन्मूर्धन्यानां पं.श्रीचन्द्रधरशर्मगुलेरिवर्याणां पत्राचारो नितरां विनोदपूर्णश्चमत्काराप्लुतश्च भवति स्म। तेषां हिन्दीपत्राचारस्य तु भूयसी सामग्री पं. श्रीझाबरमलशर्ममहाभागैः गुलेरीग्रन्थावल्यां प्राकाश्यमप्यानायिता; संस्कृतेऽपि तेषां पत्राणि स्युरेव यतस्ते संस्कृते साधु कवयन्ति स्म, शोधलेखानपि लिखन्ति स्म। एवंविधा पत्रसामग्री निश्चप्रचमेव हृदयावर्जिका स्याद् यद्योपलम्भिता क्रियेत यथाकथञ्चित्।

कतिपयेषां विदुषां पत्राणि विचित्य कैश्चिद्विद्वत्प्रवरैः कुत्रचन प्राकश्यमप्यानायितानीति स्मरामि। दिल्लीस्थैः म.म.प्रो.सत्यव्रतशास्त्रिभिः कश्चन तादृशः प्रयत्नोऽकारि, जयपुरस्थेन विद्वद्वर्येण

डॉ. शिवसागरत्रिपाठिनाऽपि कश्चन पत्रसंग्रहः प्रयतित इति श्रुतं मया। एधतामेवंविधाः प्रयासा, जागर्तु च तादृशी रुचिर्जिज्ञासा चाऽधुनिकेऽपि संस्कृतसेविसमाजे इति प्रार्थयामश्चराचरनियन्तारम्. एकोनविंश्यां शताब्द्यां, विंश्याश्चाऽरम्भे पत्रलेखनशिक्षणमपि पाठ्यचर्यायां नियम्यते स्मेति तच्छिक्षणपराणि लघूनि पाठ्यपुस्तकानि, पाठ्यपुस्तकेषु तादृशी प्रशिक्षणसामग्री चापि भवति स्मेति तु दृष्टमेव स्याद्। भवद्भिः सर्वं तदिदं स्मारितमावयोर्दूरभाषचर्चया।

असमप्रदेशे जगज्जनन्याः कामाक्ष्याश्चरणच्छायायां भवतामध्ययनादिकं साधु प्रचलतीति ज्ञात्वा समभूत् सुमहान् प्रमोदः। गतस्य कालखण्डस्य शिखरपुरुषाणां वेदविज्ञानमनीषिणां समीक्षाचक्रवर्तिनां पं. श्रीमधुसूदनओझामहोदयानां ग्रन्थावली प्रकाशमाप्नुयादिति भवतां परामर्शः सूचितो मया विद्वत्समाजे जयपुरीये। दिल्लीस्थेन राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानेन (मानितविश्वविद्यालयेन) सर्जनात्मकलेखनत्वेन परिभाषिताः कतिचन ग्रन्थावल्यः प्रकाशिताः प्रकाश्यन्ते, प्रकाशयिष्यन्ते चेति श्रुतमभूत्. तदनु मत्पितृचरणानां 'मञ्जुनाथ–ग्रन्थावली' तु प्रकाशिता भवत्समीपे प्रहितैव मया, अलीगढस्थानां पं.परमानन्दशास्त्रिणां ग्रन्थावल्यपि प्रकाशयिष्यते इति श्रुतमासीत्। एवंविधाः कतिचनग्रन्थावलीर्वीक्ष्यैवास्मादृशा अशीतिवत्सरपारगायुषो लोकमिमं त्यक्त्वा गच्छेयुरित्यन्वहं प्रार्थयामः परमपितरम्।

परिवारे सर्वेषु मदीया नत्याशिषः सूचनीयाः। सर्वे स्वस्थाः सानन्दाश्च स्युरिति विश्वसन् भवत्स्नेह– सनाथः कलानाथः।

देवर्षिकलानाथशास्त्री

द्वितीय स्तवक

92

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, पेटलादनगरम्

तिथिः – 30.04.1962

स्वस्ति। उज्जयिनीवास्तव्यो वेङ्कटाचलः प्रियशिष्यामायुष्मतीं कुमारीमजितां वेदोक्ताभि–राशीर्भिरभिनन्द्य निवेदयति। त्वया प्रहितं पत्रद्वयमपि यथासमयमेव हस्तगतम्। प्रत्युत्तरप्रेषणे यो विलम्बो जातस्तदर्थं मन्ये किमपि कारणं न प्रस्तोतव्यं यतो हि त्वं स्वयमेव सम्यग्जानासि अकृतोत्तराणां पत्राणां पुञ्जः कियदुन्नत आसीदिति। अन्यत्र, रूढमूलं स्वभावं को वा परिवर्तयतु?

त्वदीयं द्वितीयं पत्रं यस्मिन्नहनि मत्सकाशं प्राप्तं तस्मिन्नेव दिने पुस्तकानां कृते आदेशः प्रेषितः आसीत्। अत एव तस्मिन् विषये न किञ्चित् कर्तुमशक्नवम्।

इह सर्वे वयं कुशलिनः। मम पितरौ स्वसा च समागताः सप्ताहत्रयात्पूर्वमेव। आयुष्मत्याः शुभायाः अनन्तरपरः भ्राता वा स्वसा वेति प्रश्नः अद्यावधि तदवस्थ एव! कतिपयैरेवाहोभिरस्य निर्णयो भविता। येन केनापि प्रकारेण वार्ताप्रसङ्गेन तव स्मृतिरस्मद्गृहे प्रतिदिनं भवत्येव। अन्ये कामं विस्मरन्तु परं 'पागल'– शब्दशिक्षिकां शुभा तावन्न विस्मरिष्यति।

अस्माकं 'पुस्तकं' (तस्य निर्देशे मदीयम् इति विशेषणं प्रयोक्तुं न कामयेऽहं यद्यपि त्वया तादृशमेव विशेषणं प्रयुक्तम्) सुष्ठु मुद्रितम्। समीक्षाभागः प्रकाशकमहोदयेन न मुद्रापितः। टिप्पणी शीर्षकादीनि परिशिष्टानि मुद्रितानि। छन्दः परिशिष्टं तु मया नैव लिखितम्। त्वद्हस्तेन लिखितं 'इति शम्' तथैवावातिष्ठत!)

काशीतः पुस्तकानि अद्य समागतानि। द्वित्रैरेवाहोभिः तानि तुभ्यं प्रेषयिष्यामि। कतिपयपुस्तकानि नैव समागतानि। काणेमहोदयस्य पुस्तकमपि पुस्तकालयात् प्रेषयिष्यामि।

अस्मत्पुस्तकसमर्पणस्य अन्तिमा तिथिर्न परिवर्तिता। मुद्रादोषाः बहुलं तत्र स्थिताः। नियमानुसारेण मन्नाम, प्रकाशकनाम, धन्यवादप्रसङ्गोल्लिखितानि नामानि सर्वाणि नैव मुद्रापितानि। परस्तात् प्रकाशनावसरे एव एतत्सर्वं मुद्रापयिष्यते। 'सुवर्णपुष्पा' इति नामापि साम्प्रतं न मुद्रितम्।

मम सकाशे अस्मन्मुद्रितपुस्तकस्य प्रतिलिपयो बह्व्यो न सन्ति। नो चेत् त्वदवलोकनार्थं मया एकंप्रैषयिष्यत।

कथासरित्सागरं तीर्त्वा शीघ्रमेव मन्निर्देशानुसारं सर्वं कार्यं समापनीयम्। आगामिनि वर्षे यथा समग्रेऽपि विश्वविद्यालये प्राथम्यं लभ्येत तथा प्रयत्नो विधेयः। तदर्थं प्रयत्नः अधुनैव आरम्भणीयः। **'न कूपखननं युक्तं प्रदीप्ते वह्निना गृहे।'**

अतीवत्वरया पत्रमेतल्लिखितम् । सन्तु त्वत्पितृवराणां मदीया विनयनम्राः प्रणामाः। अनुगृह्णातु च भगवानुमारमणः त्वां तादृशेन मानसोल्लासेन शरीरस्वास्थ्येन च यथा त्वं समग्रस्य कालस्य सदुपयोगं कुर्याः। **क्षणे नष्टे कुतो विद्येति** न विस्मरणीयं वचनम्।

इत्थं

वि. वेङ्कटाचलम्

93

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी
प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, पेटलादनगरम्
तिथिः – 24.8.63

स्वस्ति।

प्रियशिष्यामजितामाशीर्भिरभिनन्द्य विज्ञापयति महाकालपुरीतो वेङ्कटाचलो यथा कथमिदं समपद्यत यत् त्वया एतावतापि कालेन ग्रामप्राप्तिसूचकमपि पत्रं कस्यापि न विसृष्टम्। मन्ये बहोः कालात् पुनः स्वबन्धुजनमध्यगता इतोगतान् सर्वान् व्यस्मार्षीरिति।

तिष्ठत्वेतत्। उभयेऽपि शङ्करविजयग्रन्थे यदि त्वया कदाचित् तत् पद्यं दृश्यते यत् किल भगवत्पादैः मातृमाहात्म्यप्रतिपादकं सन्दृब्धमिति कथ्यते यच्च मया तुभ्यं कथितं, तर्हि सपदि मह्यमावेदनीयम्।

तव गमनात् परं कदाचिन्मन्मनसि बुद्धिरियमुत्पन्ना यत् त्वया एषु दिनेषु सत्यवकाशे सति च सौकर्ये "टाइप" विद्या अभ्यसितुं शक्येति। एतदधिकृत्य पित्रोरभिप्रायं ज्ञात्वा यदुचितं तद् क्रियताम्। शिष्टमन्यदा।

इति त्वदभ्युदयैषी
वि. वेङ्कटाचलम्

94

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी
प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, पेटलादनगरम्
तिथिः – 10.09.1963

स्वस्ति। प्रियशिष्यामजितामाशीर्भिर्वेदोक्ताभिरभिनन्द्य आवेदयति वेङ्कटाचलो यथा– महत् खलु मे प्रमोदस्थानं यत् त्वं विश्वविद्यालयेन छात्रवृत्तेः पात्रं निर्धारिता। निर्णयोऽयं ह्य एव कृतः। अचिरादेव तव हस्तं प्राप्स्यति तदीयमपि पत्रम्। एतदपि अश्रौषम् यत् त्वया अस्य मासस्य त्रिंशद्दिनात् प्रागेव Ph.D. पदव्याः कृते प्रार्थनापत्रं समर्पणीयमवश्यम्। प्रार्थनापत्रेण सह करिष्यमाणस्य अनुसन्धानकार्यस्य संक्षिप्तं स्वरूपमपि यथानियमं दातव्यं भविष्यति। अत एव एतत्पत्रप्राप्तिसमनन्तरमेव ततः प्रस्थाय आगम्यताम् । संभाव्यते यदहमितः केनापि कार्यान्तरेण पक्षमेकं वसेयमन्यत्र। अत एव विलम्बः परिहार्यः।

अत्रत्याः सर्वे कुशलिनः। मन्ये त्वं तव पितरौ भ्रातरश्च समे कुशलिनः। शिष्टं सम्मुखे।

इत्थं त्वदभ्युदयेन रममाणः
वि. वेङ्कटाचलम्

95

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, पेटलादनगरम्

तिथिः – 17.04.1964

शिष्यवृन्देषु प्रेष्ठां श्रेष्ठां च कुमारीमजिताम् आशीर्भिरभिवन्द्यावेदयति 'भूतपूर्वो' गुरुः (अत्रत्य– 'भूतपूर्व' शब्देन भूतकालीन मा नाम त्रासं गमः। यतो हि त्वं साम्प्रतं स्वयमेव गुरुपदयोग्यं विद्यागौरवं प्राप्तासि, गुरुपदं च न चिरादधिष्ठास्यसि अत एवायं प्रयोगो न अस्थाने)– अतर्कितोपनतेनानेन पत्रेणावश्यमन्यादृशं नन्दिष्यति हृदयं ते इति नैव न जाने। कार्यवशादिदं पत्रं प्रेषयितुं निरचिनवम्। यद्येतत्पत्रप्राप्तेः पूर्वमेव अहमदाबादनगरं गत्वा न प्रतिनिवृत्ता भवेः, यदि च पत्रं प्राप्य कार्यान्तरवशात्तन्नगरं गच्छेः, यदि च तत्र अपेक्षितं कार्यान्तरं समाप्य कश्चिदवकाशलेशः स्यात् तर्हि तत्रत्यविश्वविद्यालये रजिस्ट्रार–महोदयैः संगत्यागन्तव्यम्। यस्य संस्कृतप्राध्यापकपदस्य सम्मुखपरीक्षायां 'बम्बई' नगरे निर्वृत्तायामहं सन्निधातुं नापारयं तत्पदं किमेतावता कालेन पूरितं कैरपि महाशयैरथवा केनापि कारणेन तदधुनापि रिक्तमेवेत्येतद्विचारणीयम्। मन्निर्देशानुसारेण अनुसन्धानकार्यं कुर्वाणेष्वन्यतमत्वेनात्मनः परिचयं विधाय मद्वचनादयं प्रश्नः प्रष्टव्यः। यद्यधुनापि तद्गोपनीयताकोटितो न प्रकाशमायातं तर्हि तूष्णीमागम्यताम्। मात्मानं वृथायासस्य पात्रतानुपनय।

त्वामितः पितृगृहं प्रस्थाय जातो ममायं विशदः प्रकामं प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा ! परन्तु अचिरादेव पुनर्हस्तं प्राप्ते न्यासे कथं वा स योग्यविधया परिरक्षणीय इति चिन्तया दूयतेऽन्तःकरणमन्तः। भवतु । यथाशक्ति प्रयतिष्ये।

नन्दया सह प्रियवयस्यया निजगृहं प्राप्ता त्वमवश्यमेव नन्दिष्यसि। पुनश्चागत्य सर्वान् प्रत्यूहान् दूरे विधाय स्वकर्मणि आत्मानं नियोजयिष्यसीति प्रत्येमि। सन्दिश्यतां मदीयाः प्रणतयः पित्रोः। सन्तु च मदीयाः सदाशिषो भ्रातृवर्गस्य कुमार्याः नन्दायास्तव च ।

इत्थं

त्वदभ्युदयप्रार्थी

वि. वेङ्कटाचलम्

96

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, पेटलादनगरम्

तिथिः – 18-08-68

स्वस्ति। आयुष्मतीमजितां वेदोक्ताभिराशीर्भिरभिनन्द्य आवेदयति वेङ्कटाचलो यथा–

(1) अतिविस्तृतं, अपेक्षितसर्ववृत्तान्तावेदकं, परिहृतानपेक्षितं पत्रं त्वदीयं प्राप्य भृशं प्रासीदन्मानसम्। संस्कृतभाषया पत्रलेखने चेत्तव रतिस्तत्कस्य हेतोः परिहरणीयमिति न वेद्मि। कामं लिख यथेच्छम्। परन्तु संस्कृतपत्रलेखनव्यग्रतया कार्यान्तरोपरोधो माभूत्। ''भासा जा होई सा होदु (?)'' इति सत्यमेव। अस्माकं तावदाग्रह अर्थ एव। सर्वथा च तथा प्रयतस्व यथा अप्रसक्तलेखनेन स्वात्मा नायास्येत, न वा मम वृथा कालहरणं भवेत्। आस्तामिदम्।

(2) मद्गुरुचरणानामुभयेषामपि कृपा त्वया आसादिता, तैरुभयैरपि अभिनन्दिता त्वमिति श्रुत्वा यः प्रमोदो मयासादितः स तु आवेदनपथातीत एव। तैर्या विद्या मह्यं प्रदत्ता, प्रदाय च अनुग्रहपात्रतामहमुपनीतः तदृणस्य निष्कृतिं दातुं कथं क्षमताम्? सन्तु पात्रान्तरेषु तां संक्रमितुमीषत् प्रयत्यते, तत्र च या ईषत् सिद्धिर्भवति, तां वीक्ष्य तेषामन्तरङ्गं च प्रसीदति तेनैव कृतार्थतां भावय। दृढं च मनस्येतत् धारय यत्तेषां निरुपाधिका आशिषः चेत् त्वया प्राप्येरन् तर्हि अवश्यं कर्मण्येतस्मिन् अन्यत्र च जीवनयात्रायां कृतार्थतामेष्यसि। श्रद्धत्स्व सौम्ये।

(3) यत्तु अस्माकं गुरुचरणैः कश्चन कार्यभारो मय्यारोपितः तन्निर्वर्तनार्थं आयुष्मान् राजपुरोहितः नियोजितः। पाण्डुलिपिदापनाय च यत्कर्तव्यं तदपि निर्वर्तितम्! कतिपयैरेव अहोभिः तत् सज्जीभविष्यति। सज्जे च तस्मिन् प्रेषयिष्यामि गुरुचरणेभ्यः। तेभ्य एतदावेदय।

(4) यादृशः कार्यक्रमः त्वया स्वात्मार्थं कल्पितः मन्ये तत्सर्वं साध्वेव। तत्र परिवर्तनापेक्षां न पश्यामि। (क) अस्माकं ज्येष्ठगुरूणां सविधे गोविन्दनाथीयस्य या मातृका पूर्वमासीत् सा चेत् स्यात् साम्प्रतमपि, तां दृष्ट्वा तत्रत्यान् पाठभेदान् (पूनामुद्रितपुस्तकदृष्ट्या यस्य प्रतिलिपि– स्त्वत्सविधे वर्तते) पूर्णरूपेण लिखित्वा स्थापय। (ख) टी.एस.नारायणशास्त्रिभिः प्रणीतपुस्तकं तत्र मान्यानां श्रीबालसुब्रह्मण्यार्याणां सकाशे भविष्यत्येवेति मन्ये। तच्चेत् सुप्रापं तत्र यः त्वया अनुपलब्धांशः तं पूरयितुं प्रयतस्व। मन्ये त्वं स्मरिष्यसि यत् कलिकातातः प्राप्ते पुस्तके (pages 1 to 112 of "Age of Sanskara" and pages 161 to 336 of "The Mistaken Greek Synchronism") इयानेवांशः आसीत्। यदि पुस्तकमेतत् क्वापि क्रेयः स्यात् तर्हि केनापि वा मूल्येन तत् क्रीणीष्व। (ग) यदि शक्यसंभवं स्यात् यथाशक्ति शीघ्रमेव काञ्चीश्रीचरणानां दर्शनं कुरु। कृत्वा च तैः प्रदर्शितं पन्थानमनुसृत्य अवशिष्टं सामग्रीसंकलनकार्यं निर्वहस्व। (घ) अस्मिन् गवेषणकर्मणि विशुद्धचारित्रिकदृष्टिरेव त्वया आत्मीकरिष्यत इति यथा सर्वेषां विदितं स्यात् तथा स्पष्टं प्रतिपादय। प्रयत्नस्त्वदायत्तः फलं तु ईश्वरायत्तं यथा कथमपि भवतु। अस्माभिः अस्मिन् विषये किमपि वस्तु पूर्वसङ्कल्पितं नास्तीति सर्वेभ्यः स्पष्टं सुदृढं च आवेदय। (ङ) यस्तु त्वया

उभयपक्षश्रवणेन परस्परं च स्वेतरपक्षीयग्रन्थानामप्रामाणिकत्व–कृत्रिमत्व–कल्पितत्वादिविषयश्रवणेन च मनसि धर्म–सङ्कटकल्पः क्लेशः संजातः स तु युक्तरूप एव। तेन मा धैर्यं त्याक्षीः। सर्वं वस्तु संकलय्य परस्तात् पूर्वनिर्धारितक्रमानुसारेण व्यवस्थितैः मानदण्डैः तेषां परीक्षणेन कोऽपि निष्कर्ष निर्गलिष्यति इति विश्वसिहि । यावच्छक्ति शीघ्रमेव अनलसा सती, अनाकृष्टा विषयान्तरैः, अनतिप्रलोभितदेशान्तरदर्शनकौतूहलेन, स्वकृत्यं समाप्य पुनरायाहि। (च) कामकोटिप्रदीपाख्यायां पत्रिकायां अस्मद्गुरुचरणैरन्यैर्वा यावल्लिखितं तत्सर्वं कृत्स्नशः सम्पाद्य आनयस्व। (छ) त्वया लिखितपूर्वं संस्कृतपत्रमपि प्रेषय (ज) अवधूतशास्त्रिणः पत्रसङ्केतस्तु निम्नानुसारतः ...। (झ) अत्रत्यानां बालिकानां कृते प्रतियात्रं त्वया किमपि आनीय प्रदातव्यमिति नायमेकान्तः। तत्र किमर्थं त्वया वृथा आयास्यते आत्मा? किमर्थं वा धनव्ययः संप्रति? मद्वचनस्य भावमित्थं मा अवधारय यदहं त्वां प्रतिषेधामीति। सर्वथा दातव्यमिति चेत्ते मनीषा तर्हि यथाभिलषितं विधेहि। (ञ) मद्रपुरीतो निवर्तनात् प्राक् मत्स्वसुः मन्मातुलस्य च गृहं गच्छावश्यम्। तयोः स्थानसङ्केतस्तु इत्थम् ..... मदीयान् प्रणामान् उभयेभ्योऽपि गुरुभ्यः समर्पय। (ट) अन्तरकरमहोदयस्य स्थानसङ्केतो मत्सविधे नास्ति।

पुनश्च। पत्रमेतत् अस्मद्गुरुभ्योऽप्यनुवाचय यदि तेषामवकाशः स्यात्।

इति

वि. वेङ्कटाचलम्

97

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, बडवानीनगरम्

प्रापिक – कुमारी अजिता त्रिवेदी, पेटलादनगरम्

तिथिः – 16-10-66

स्वस्ति प्रियशिष्यायै अजितायै। पत्रद्वयं त्वदीयं प्रथमं द्वितीयदिनाङ्कितं द्वितीयं च चतुर्थदिनाङ्कितं हस्तगतम्। अधिगता च सर्वा वार्ता। जाता परमा मुत् यत् त्वं स्वकर्मणि आत्मानं व्यापारयन्ती मध्ये मार्गं समुपस्थितान् प्रत्यूहव्यूहान् यथाकालं यथापरिस्थिति च अवबुध्य स्वमत्यैव निवारयन्ती अग्रतो गच्छसि। मदीया कार्यपरिस्थितिस्तु यथापूर्वमेवास्ते। अन्ततः यादृशी ग्रहाणां परिस्थितिस्तदनुसारिणैव सर्वं कार्यं प्रवर्तिष्यते। अन्तिमक्षणपर्यन्तं सोत्कण्ठभरमात्मा आयसनीयः सर्वत्र कार्येषु इति नियतिः। एतावदेव समाश्वासनं यदित्थंगतेऽपि सर्वं कल्याणोदर्कं भवति। आशासे च साम्प्रतमपि तथा भविष्यति। आस्तामिदं स्वक्लेशबाहुल्येन शोचन्त्यास्तव मच्छोक श्रावणेन अप्राप्तकालेन।

सत्यमेतदृष्ट्या त्वं धन्यासि। एतत्कार्यव्याजेन समासादितं त्वया तीर्थसेवनसौभाग्यं नानाविधम्। न केवलं स्थावराणि तीर्थानि अवगाढानि परन्तु असुलभदर्शनानां महतां तीर्थभूतानां जनानां शुभसंगतिः सदाशिषश्च समासादिताः।

यथा त्वया आशङ्कितं दीर्घदीर्घं पत्रं पठितुं न स्यादवकाश इति अत एव अपेक्षितं पठ्यतामिति निर्दिष्टमपि नैतत्तथा। प्राचार्यासनमधितिष्ठतैव मया पत्रं प्राप्तम्। साधारणतया पत्राणि सायं षड्वादने गृहमागच्छन्ति। परन्तु त्वया द्विगुणभारं पत्रजातमारोप्य तदनुरूपा मुद्रा अनारोपयन्त्या साक्षात् मद्हस्तं प्रापितं पत्रम्। सकलमनुवाचितं रसेन, सर्वमन्यत् कार्यजातं परित्यज्य आदिश्य च प्रतीहारिणं न कोऽप्यधुना प्रवेशनीय इति। अनन्तरं च गृहमागत्य परेद्युः पुनरपि यथायथं सर्वमनुवाचितम्, **द्विर्बद्धं सुबद्धं** भवतीति।

यत्तु त्वया उज्जयिन्यां मद्गृहगमनविषये संकोचादिकमभिव्यञ्जितं, यश्च तत्सर्वं पत्रमप्यारोपितं यया रीत्या च तद्विहितं, न तत्साधु चिन्तितं लिखितं वा। पूर्वतन एव पत्रे मदीये मया स्पष्टं लिखितमासीत् यन्मोगरेभवनस्थाः सर्वेऽपि (अर्थतः अपत्यानि, भार्या च) त्वद्दर्शनसमुत्सुकाः सम्प्रति। असकृद् वार्ताप्रसङ्गेन स्मरन्ति च त्वाम्। मम विषये तु नैव वक्तव्यम्। विकीर्णेषु पत्रपत्रिकादिषु यदा कदापि दृष्टिं पातयामि तदा दृश्यते पदे पदे ....। तत्सर्वं विलोक्य कदाचित् प्रमोदभारः, कदाचिच्च व्यथाभरः। कदा कथं कुतश्च वा समासादयिष्यामि पुनरीदृशं साहाय्यविधायिनम् ?....... (न जाने किमेतत् सेत्स्यति न वेति। यदि सङ्कल्पो मदीयः शुद्धः स्यात् तर्हि स भगवान् अनुग्रहीष्यति।

मद्वार्ताविषये जिज्ञासा त्वदीया सहजा स्वाभाविकी च। विस्तरावेदनं तु दुःशकमिति परिह्रियते। विश्वविद्यालये रीडरपदे नियुक्तिस्तु समासादिता । नियुक्तिपत्रमासादितस्य मे मासद्वयं सम्प्रति। प्राध्यापकपदस्य कृतेऽहमासमभ्यर्थी। यद्यपि अन्यः कोऽपि तत्पदे तैरेतावन्तं कालं न नियोजितः, दत्तं च मह्यं वेतनं प्राध्यापकपदसमानं, तथापि सन्ति कतिपयानि इतराणि विषयजातानि यान्यन्तरेण साम्प्रतमपि तैः सह पत्रव्यवहारः प्रचलति। अन्ततः शासकीयां सेवामेनां विहाय विश्वविद्यालयपदस्वीकारस्तु निश्चप्रचः। कतिपयमासमात्रं व्यवधानं सम्भाव्यते तत्र। यदीश्वरानुग्रहः स्याच्छीघ्रमपि सम्पत्स्यते। अत एव उज्ज़यिनीं मद्विरहितां गत्वा किं करिष्यामीति वृथादुःखं मा कुरु। प्राच्यविद्यापरिषत्कार्यं तु मन्मत्या सम्यगेव निर्वृत्तम्। मुम्बानगरे विद्यमानाः विद्वांसोऽपि पृच्छ्यन्ताम्। परन्तु अध्यक्षीयभाषणं तदापि न पूरितम्, अद्यावधि तदर्धसमाप्तमेवास्ते। कदाचित् त्वदहस्तेनैव तस्य भाषणस्य इति शम् भवत्विति स्यादीश्वरसङ्कल्पः! प्राचार्यकृत्यमपि सम्यगेवानुतिष्ठामि इति प्रतिभाति। कराले छात्रकोलाहलादिभरिते काले एतत्कार्यमुपनतम्। एतद्विषयकविस्तरादिकं तु जिह्वायाः श्रोत्रयोश्च विषयः न तु लेखन्याः नयनयोश्च। तव कृते यद्ग्रन्थादिकं आनेयं तदर्थं यथाकालं प्रयतिष्ये। मुम्बानगरे मन्मातापितरौ विद्येते। ताववश्यमेव द्रष्टव्यौ। अत्र प्रमादं मा कुरु। अचिरादेव मत्पितृचरणानां चक्षुषः शल्यचिकित्सापि निर्वृत्ता। तेषां स्थान सङ्केतस्तु इत्थम्........। सम्प्रति बरोडातः उज्जयिनीपर्यन्तं बसयानं प्रतिदिनं गच्छति। गत

26-01-1967 दिनात् बरोड़ातः एतन्नगरपर्यन्तमपि बसयानं प्रवर्तितं वर्तत इति श्रूयते। शिष्टं त्वत्पत्रप्राप्तिसमनन्तरम्।

पुनश्च। अवश्यं यथासमीहितं गृहं गत्वा मातापितरौ भ्रातॄंश्च आनन्दय। तत्राहमवश्यं विघ्नकर्ता न बुभूषामि। तद्वदेव यदि अपरिहरणीयं मन्यसे, यदि च रोचते तव पितृभ्यां तर्हि विवाहेऽपि बङ्गलूरपुरे संनिधीयताम्।

इति त्वच्छ्रेयः प्रार्थी

वि. वेङ्कटाचलम्

100

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, बडवानीनगरम्

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, मलाडनगरम्

तिथिः – 27-2-1967

स्वस्ति। प्रियशिष्यामजितां परिपूतमाधुरीभरिताभिराशीर्भिरभिनन्द्यावेदयति वेङ्कटाचलो यथा –

त्वदीयं द्वितीयं पत्रमधिगतम्। परन्तु न तत् झटिति प्रत्युत्तरितं, यतो हि स्मारणरूपस्य तस्य प्राप्तेः पूर्वमेव त्वदीयस्य प्रथमपत्रस्य अपेक्षितमुत्तरं प्रेषितमासीत्। त्वया निवेदितं भवान् मह्यं समीचीनं पत्रमेकं लिखत्विति। न जाने कियन्तोषमावहत् तत्पत्रं यन्मया प्रेषितम्। यादृशं त्वया अपेक्षितं तादृशमभून्न वेति। नाहं निर्णेतुमलम्।

द्वितीये तु पत्रे त्वया पुनरपि अन्यदन्यत् अन्यादृशमिव सर्वं मन्त्रितम्। यादृशी शङ्का क्रियते न तस्याः कृतेऽस्ति कोऽप्यवकाशः। सर्वेऽपि त्वां प्रति सद्भावनामेव निदधति। यत्तु मयाप्यसकृत् खण्डिता, परुषाक्षरैः खेदिता, आक्रोशैश्च दण्डिता रोदिता च, तत्र सर्वत्रापि मूलं त्वां प्रति द्वेषं वा रोषं वा यदि मन्यसे नैतत् साधु न्याय्यं वा। न तत् तथा सर्वथा। उज्जयिनीं गत्वापि मोगरेभवनं न जिगमिषसीति न वा तेभ्यः पत्रप्रेषणं रोचयसे। इति च यत् त्वया लिखितं नैतद् विचारक्षमं लिखितम्। प्रशान्तं चिन्तय तावत् स्वयमेव। ततः स्वयमेव सत्यमवगमिष्यसि अवधारयिष्यसि च। साम्प्रतमपि पुनः पुनरहमेतदेव भणामि। यत्त्वया ललितायै पत्रमवश्यं प्रेषणीयम्। तथैव त्वत्सख्यै नन्दकुमार्यै अपि। आस्तां तावदिदम्।

साम्प्रतमेषां सर्वेषां प्रश्नानां यथाक्रममुत्तराणि देहि –

1-कुम्भघोणस्यास्य असाधारणप्रकृतेः पण्डितस्य सकाशे आसादितस्य बृहच्छङ्करविजयस्य प्रतिलिपिः किं त्वया कृता? नो चेत् कस्य हेतोः? तत्र के नाम प्रत्यूहाः समजनिषत? न नाम लिखितः स्यात्, किं वाचितः सम्पूर्णः प्रबन्धः? स ग्रन्थः कीदृशः? तमन्तरेण त्वं किं मन्यसे? अन्ततस्तेन महाभागेन किं त्वया कलह एव कृतः? सर्वमेतत् सविस्तरं लिख। कदाचित् सप्ताहत्रयाभ्यन्तरे मया मद्रपुरी गन्तव्या भवेत्। यदि सुकरं स्यात् तर्हि काञ्चीपीठाधीशाः साक्षात्कर्तव्या इत्यस्ति मनीषा। तेभ्यो निवेद्य यदि किञ्चित् साधयितुं शक्येत तर्हि प्रयतिष्ये।

प्राच्यविद्यापरिषदि सन्निधातुं पञ्चभिरेवाहोभिः इतः प्रस्थातव्यम्। उज्जयिनीं गत्वा मध्ये गालवपुरे तत्रत्यविश्वविद्यालयस्य संस्कृताध्ययनपरिषदः (Board of Studies) अधिवेशने 25 तमे दिने सन्निधाय परस्तात् अलिगढ़नगरं गमिष्यामि। तत्र चाधिवेशनं भविष्यति 27 दिनतः 29 दिनपर्यन्तम्। पश्चादुज्जयिनीमार्गेण अत्रागमिष्यामि। आगमनकाले दशदिनपर्यन्तमत्र निवासाय पत्नीं अपत्यानि च आनिनीषामि। दीपावल्युत्तरं विद्यालयाद्युद्घाटनकाले ते सर्वे पुनरुज्जयिनीं यास्यन्ति।

सत्यपि गलग्राहिणि कार्यजाते त्वत्प्रार्थनां स्वीकृत्य मया पत्रं पूर्वं प्रेषितं येन तव मनसि उत्साहभङ्गो न स्यात्, येन च तव कार्यं चारुतया प्रचलेत्। परन्तु नैतदुचितं यत्सर्वमत्रत्यं मदीयं वृत्तं सम्यग्जानानापि त्वं पुनः पत्रप्रेषणाय अनुरुणद्धि। सर्वं त्वदावेदितं वृत्तान्तमनुवाच्यापि मम तादृशः कश्चिदुपायो न स्फुरति मनसि येन अमोघेन मन्त्रप्रयोगेणेव सा पाण्डुलिपिस्त्वदधीना स्यात्, त्वत्समीहितं वा सिध्येत्। यथा त्वं करोषि मन्ये तत्सर्वं साध्वेव। न स्मरसि किं सूक्तिं प्राक्तनीं **लुब्धमर्थेन गृह्णीयात् साधुमञ्जलिकर्मणा। मूर्खं छन्दोऽनुवृत्त्या च याथातथ्येन पण्डितम्।** कमपि प्रयत्नं मामकीनं विना त्वं मत्कीर्तिं प्रसारयसीति किं ब्रवीमि मानसोल्लासम्? सर्वथा शिवं भवतु तव कर्मणः, स च भगवान् परमेश्वरः सदा त्वां रक्षेत् साध्वीं च मतिं दद्यादित्येव प्रार्थये।

मन्मातुलकुलेस्य समग्रस्य त्वं प्रीतिपात्रं जातेति वार्तां श्रुत्वा भृशं प्रासीददात्मा। मया त्वेतावतापि कालेन पत्रं तेभ्यो न विसृष्टं न वा विस्रष्टुं शक्ष्याम्येषु दिवसेषु। पुनर्यथा मद्रपुरीं प्रयास्यसि तदा अवश्यं मत्स्वसुर्गृहमपि गत्वा तत्रास्माकं कृते मलायातः समागतानि वस्तूनि गृहीत्वा आनीयन्ताम्।

नूतनो देशः भाषा च अंशतो नूत्ना। यत्र स्थाने त्वमसि तत्रत्यजनानां प्रकृतिविषये लोकवार्ता अन्यादृशी प्रचलति। (यद्यपि मन्मनसि ईदृशीषु वार्तासु नास्ति विश्वासलवोऽपि।) अत एव सर्वत्र अप्रमादा भव।

अन्येऽपि यदि केचित् तव प्रश्नाः स्युः उत्तरसाकाङ्क्षाः ते परस्तात् समाधास्यन्ते अथवा सम्मुखमेव प्रस्तोष्यन्ते। मत्तः उत्तरं अप्रतीक्षमाणा त्वं यथायथं पत्राणि प्रेषयन्ती भव। इति

तव कार्यस्य शिवं शीघ्रसमाप्तिं च प्रार्थयमानः

वि. वेङ्कटाचलम्

98

ॐ

प्रेषकः — आचार्यवेङ्कटाचलम्, बडवानीनगरम्

प्रापिका — कुमारी अजिता त्रिवेदी, मलाडनगरम्

तिथिः — **24.1.1967**

स्वस्ति। प्रियशिष्यामायुष्मतीमजितामाशीर्भिरभिनन्द्यावेदयति वेङ्कटाचलो यथा। चिरात्पत्रं त्वत्तो नाधिगतमिति विचिन्त्य मनो मे जातचिन्तं साम्प्रतम्। अचिरादेव पत्रं संप्रेष्य वीतचिन्तं कुरु। मद्रपुरीतः त्वया दीपावल्यभिनान्तर्हितं पत्रं यत् प्रेषितं तत्तावत् मासात् परं

हस्तमायातम्। तदनन्तरं त्वद्वृत्तान्तानभिज्ञतया केन स्थानसंकेतेन पत्रं तुभ्यं प्रेषयेयमिति अजानानः एतावन्तं कालं नैभृत्यमवालम्बे। मध्ये त्वत्सतीर्थ्याया नन्दकुमार्याः सकाशाद् वार्ता अधिगता यत् त्वं प्रायशो मासमेकं 'बङ्गलूर' नगरे तद्बन्धुगेहे अवात्सीरिति।

पूर्वं दीर्घदीर्घाणि पत्राणि प्रेषितवत्यास्ते साम्प्रतं किं जातं येनाक्षरमात्रमपि न विसृजसि? कीदृशं ते कार्यजातं संप्रति? कदा वा दक्षिणदिक्तीर्थयात्रां समाप्य पुनर्निवर्तिष्यसे? तेषु तेषु स्थानेषु तांस्ताननुभवान् कार्यानुकूल्यं प्रातिकूल्यं वा, स्वानुसन्धानविषयसामग्रीलाभं वा अलाभं वा इत्यादि सर्वं सप्रपञ्चं वर्णयत् पत्रमेकं शीघ्रमवश्यं विसृज।

त्वत्स्थानानभिज्ञतया पत्रमेतत् त्वत्पितुर्नाम्ना प्रेषयामि, येन ते त्वत्स्थानं प्रति प्रेषणाय उचितं विधास्यन्ति। मन्ये गुरुमिव मातपितरावपि न विस्मृतवत्यसि! उज्जयिन्यां मोगरेभवनस्थाः सर्वेऽपि त्वद्दर्शनलालसाः। त्वद्गृहस्वामिनी (रावलभवनम्) च मन्ये किञ्चिदसन्तुष्टेव येन त्वं गृहवेतनमपि न ददासि गृहं च बद्धं त्यक्त्वा अन्यत्र भ्राम्यन्ती स्वस्थासि!

तवानुसन्धानकर्मणः शीघ्रसाफल्यं श्रेयश्च प्रार्थयानः –

वि. वेङ्कटाचलम्

99

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, बडवानीनगरम्

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, मलाडनगरम्

तिथिः – 10-2-1967

स्वस्ति। प्रियशिष्यामायुष्मतीमजितामाशीर्भिरभिनन्द्यावेदयति दैवयोगप्राप्तकतिपयकालमात्र–वटवनीनिवासो वेङ्कटाचलशर्मा यथा–

आसादितं त्वदीयं द्राघिष्ठं पत्रं वार्ताभारभरितम्। मन्ये इतोऽपि दीर्घतरं पत्रं न लेखिष्यसीति, अत एव विस्रब्धं 'द्राघिष्ठः' निर्देशः कृतः। उदन्तजातं सर्वं विज्ञाय महतीं मुदमवाप्नवम्। यत्तु त्वया सर्वत्र जनानां स्नेहः सद्भावः समादरश्च प्राप्तस्तत्तु युक्तरूपमेव। न तु तत्र किमप्युपनतमतर्कितपूर्वम्। विद्वान् किल सर्वत्र पूज्यत एव। तत्र स्त्रीजनसुलभसरससौकुमार्यस्यापि चेत् संयोगस्तर्हि कैमुतिकन्यायसिद्धमेव तत्। यदि त्वं प्राप्तानवसरान् अमोघीकुर्वती प्रवचनान्यपि द्वित्राणि अकरिष्यस्तर्हि शोभनतरमभविष्यत्। नेदृशाः अवसराः पुनः स्वयमुपस्थास्यन्ति।

आस्तामिदम्। गतं नानुशोचन्ति पण्डिताः। अग्रे चेदवसरानीदृशान् प्राप्नुयास्तान् मोघान् मा कृथाः। मध्ये कालट्यां पूर्णानद्यवगाहनस्य शृङ्गगिरौ तुङ्गभद्राभद्रतीरसमासादितशान्तिसुखस्य च यद्वर्णनं त्वया विहितं तत्पठतो मम चेतसि यद्यपि एकतो महानानन्दः सञ्जातस्तथापि स्वयं तदप्राप्तिमहादुःखमपि क्षणमात्रं जागरितमेव।

सत्यमेतदृदृष्ट्या त्वं धन्यासि। एतत्कार्यव्याजेन समासादितं त्वया तीर्थसेवनसौभाग्यं नानाविधम् । न केवलं स्थावराणि तीर्थानि अवगाढानि परन्तु असुलभदर्शनानां महतां तीर्थभूतानां जनानां शुभसंगतिः सदाशिषश्च समासादिताः।

यथा त्वया आशङ्कितं दीर्घदीर्घं पत्रं पठितुं न स्यादवकाश इति अत एव अपेक्षितं पठ्यतामिति निर्दिष्टमपि नैतत्तथा। प्राचार्यासनमधितिष्ठतैव मया पत्रं प्राप्तम्। साधारणतया पत्राणि सायं षड्वादने गृहमागच्छन्ति। परन्तु त्वया द्विगुणभारं पत्रजातमारोप्य तदनुरूपा मुद्रा अनारोपयन्त्या साक्षात् मद्हस्तं प्रापितं पत्रम्। सकलमनुवाचितं रसेन, सर्वमन्यत् कार्यजातं परित्यज्य आदिश्य च प्रतीहारिणं न कोऽप्यधुना प्रवेशनीय इति। अनन्तरं च गृहमागत्य परेद्युः पुनरपि यथायथं सर्वमनुवाचितम्, द्विर्बद्धं सुबद्धं भवतीति।

यत्तु त्वया उज्जयिन्यां मद्गृहगमनविषये संकोचादिकमभिव्यञ्जितं, यश्च तत्सर्वं पत्रमप्यारोपितं यया रीत्या च तद्विहितं, न तत्साधु चिन्तितं लिखितं वा। पूर्वतन एव पत्रे मदीये मया स्पष्टं लिखितमासीत् यन्मोगरेभवनस्थाः सर्वेऽपि (अर्थतः अपत्यानि, भार्या च) त्वद्दर्शनसमुत्सुकाः सम्प्रति। असकृद् वार्ताप्रसङ्गेन स्मरन्ति च त्वाम्। मम विषये तु नैव वक्तव्यम्। विकीर्णेषु पत्रपत्रिकादिषु यदा कदापि दृष्टिं पातयामि तदा दृश्यते पदे पदे ....। तत्सर्वं विलोक्य कदाचित् प्रमोदभारः, कदाचिच्च व्यथाभरः। कदा कथं कुतश्च वा समासादयिष्यामि पुनरीदृशं साहाय्यविधायिनम् ?....... (न जाने किमेतत् सेत्स्यति न वेति। यदि सङ्कल्पो मदीयः शुद्धः स्यात् तर्हि स भगवान् अनुग्रहीष्यति।

मद्वार्ताविषये जिज्ञासा त्वदीया सहजा स्वाभाविकी च। विस्तरावेदनं तु दुःशकमिति परिह्रियते। विश्वविद्यालये रीडरपदे नियुक्तिस्तु समासादिता । नियुक्तिपत्रमासादितस्य मे मासद्वयं सम्प्रति। प्राध्यापकपदस्य कृतेऽहमासमभ्यर्थी। यद्यपि अन्यः कोऽपि तत्पदे तैरेतावन्तं कालं न नियोजितः, दत्तं च मह्यं वेतनं प्राध्यापकपदसमानं, तथापि सन्ति कतिपयानि इतराणि विषयजातानि यान्यन्तरेण साम्प्रतमपि तैः सह पत्रव्यवहारः प्रचलति। अन्ततः शासकीयां सेवामेनां विहाय विश्वविद्यालयपदस्वीकारस्तु निश्चप्रचः। कतिपयमासमात्रं व्यवधानं सम्भाव्यते तत्र। यदीश्वरानुग्रहः स्याच्छीघ्रमपि सम्पत्स्यते। अत एव उज्जयिनीं मद्विरहितां गत्वा किं करिष्यामीति वृथादुःखं मा कुरु। प्राच्यविद्यापरिषत्कार्यं तु मन्मत्या सम्यगेव निर्वृत्तम्। मुम्बानगरे विद्यमानाः विद्वांसोऽपि पृच्छ्यन्ताम्। परन्तु अध्यक्षीयभाषणं तदापि न पूरितम्, अद्यावधि तदर्धसमाप्तमेवास्ते। कदाचित् त्वदहस्तेनैव तस्य भाषणस्य इति शम् भवत्विति स्यादीश्वरसङ्कल्पः! प्राचार्यकृत्यमपि सम्यगेवानुतिष्ठामि इति प्रतिभाति। कराले छात्रकोलाहलादिभरिते काले एतत्कार्यमुपनतम्। एतद्विषयकविस्तरादिकं तु जिह्वायाः श्रोत्रयोश्च विषयः न तु लेखन्याः नयनयोश्च। तव कृते यद्ग्रन्थादिकं आनेयं तदर्थं यथाकालं प्रयतिष्ये। मुम्बानगरे मन्मातापितरौ विद्येते। तावदवश्यमेव द्रष्टव्यौ। अत्र प्रमादं मा कुरु। अचिरादेव मत्पितृचरणानां चक्षुषः शल्यचिकित्सापि निर्वृत्ता। तेषां स्थान सङ्केतस्तु इत्थम्........। सम्प्रति बरोडातः उज्जयिनीपर्यन्तं बसयानं प्रतिदिनं गच्छति। गत

26-01-1967 दिनात् बरोड़ातः एतन्नगरपर्यन्तमपि बसयानं प्रवर्तितं वर्तत इति श्रूयते। शिष्टं त्वत्पत्रप्राप्तिसमनन्तरम्।

पुनश्च। अवश्यं यथासमीहितं गृहं गत्वा मातापितरौ भ्रातृंश्च आनन्दय। तत्राहमवश्यं विघ्नकर्ता न बुभूषामि। तद्वदेव यदि अपरिहरणीयं मन्यसे, यदि च रोचते तव पितृभ्यां तर्हि विवाहेऽपि बङ्गलूरपुरे संनिधीयताम्।

इति त्वच्छ्रेयः प्रार्थी

वि. वेङ्कटाचलम्

100

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, बडवानीनगरम्

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, मलाडनगरम्

तिथिः – 27-2-1967

स्वस्ति। प्रियशिष्यामजितां परिपूतमाधुरीभरिताभिराशीर्भिरभिनन्द्यावेदयति वेङ्कटाचलो यथा –

त्वदीयं द्वितीयं पत्रमधिगतम्। परन्तु न तत् झटिति प्रत्युत्तरितं, यतो हि स्मारणरूपस्य तस्य प्राप्तेः पूर्वमेव त्वदीयस्य प्रथमपत्रस्य अपेक्षितमुत्तरं प्रेषितमासीत्। त्वया निवेदितं भवान् मह्यं समीचीनं पत्रमेकं लिखत्विति। न जाने कियन्तोषमावहत् तत्पत्रं यन्मया प्रेषितम्। यादृशं त्वया अपेक्षितं तादृशमभून्न वेति। नाहं निर्णेतुमलम्।

द्वितीये तु पत्रे त्वया पुनरपि अन्यदन्यत् अन्यादृशमिव सर्वं मन्त्रितम्। यादृशी शङ्का क्रियते न तस्याः कृतेऽस्ति कोऽप्यवकाशः। सर्वेऽपि त्वां प्रति सद्भावनामेव निदधति। यत्तु मयाप्यसकृत् खण्डिता, परुषाक्षरैः खेदिता, आक्रोशैश्च दण्डिता रोदिता च, तत्र सर्वत्रापि मूलं त्वां प्रति द्वेषं वा रोषं वा यदि मन्यसे नैतत् साधु न्याय्यं वा। न तत् तथा सर्वथा। उज्जयिनीं गत्वापि मोगरेभवनं न जिगमिषसीति न वा तेभ्यः पत्रप्रेषणं रोचयसे। इति च यत् त्वया लिखितं नैतद् विचारक्षमं लिखितम्। प्रशान्तं चिन्तय तावत् स्वयमेव। ततः स्वयमेव सत्यमवगमिष्यसि अवधारयिष्यसि च। साम्प्रतमपि पुनः पुनरहमेतदेव भणामि। यत्त्वया ललितायै पत्रमवश्यं प्रेषणीयम्। तथैव त्वत्सख्यै नन्दकुमार्यै अपि। आस्तां तावदिदम्।

साम्प्रतमेषां सर्वेषां प्रश्नानां यथाक्रममुत्तराणि देहि –

1-कुम्भघोणस्यास्य असाधारणप्रकृतेः पण्डितस्य सकाशे आसादितस्य बृहच्छङ्करविजयस्य प्रतिलिपिः किं त्वया कृता? नो चेत् कस्य हेतोः? तत्र के नाम प्रत्यूहाः समजनिषत? न नाम लिखितः स्यात्, किं वाचितः सम्पूर्णः प्रबन्धः? स ग्रन्थः कीदृशः? तमन्तरेण त्वं किं मन्यसे? अन्ततस्तेन महाभागेन किं त्वया कलह एव कृतः? सर्वमेतत् सविस्तरं लिख। कदाचित् सप्ताहत्रयाभ्यन्तरे मया मद्रपुरी गन्तव्या भवेत्। यदि सुकरं स्यात् तर्हि काञ्चीपीठाधीशाः साक्षात्कर्तव्या इत्यस्ति मनीषा। तेभ्यो निवेद्य यदि किञ्चित् साधयितुं शक्येत तर्हि प्रयतिष्ये।

2- भोपालतः किमपि पत्रं (त्वन्नियुक्तिविषयकं) मया प्राप्तम् आसीत्। तैरावेदितं यद् भवद्भिः अजितायाः स्थानसङ्केतं प्रपूर्य स्वयमेव प्रेष्यताम्। त्वत्स्थानसङ्केतः तैरपि जिज्ञासितः । मया उभयमपि कृतम्। पेटलादस्थानसङ्केतेन तत्पत्रं प्रेषितम्। आशासे त्वन्निकटमायातं स्यात् तत्। तैरपेक्षितं विवरणादिकं प्रपूर्य किं प्रतिप्रेषितं तेभ्यः अथवा न ?

3- मद्रपुर्यां किं डॉ.राघवमहाभागाः मिलिताः ? यदि मिलितास्तर्हि तेषां त्वत्कार्यमन्तरेण किमभिमतम्? अथवा जातपक्षपातया तेषां दर्शनमेव न व्यधायि त्वया? तथा चेत् नैतत् साधु कृतम्। सत्यम् असुलभदर्शनास्तादृशाः विद्वांसः।

4- अस्मद्गुरुभिरस्मिन् विषये सम्बद्धेषु विषयेषु द्रविडभाषया यद्यल्लिखितं (मुद्रितं) तत्सर्वं कृत्स्नशः समासादितं किम्? नो चेत् कथ्यतां यदासादितम्। तत्रापि अनासादितानां लाभाय प्रयतिष्ये।

5- मदीयस्य पत्रस्य एतावता कालेनापि कुतः प्रत्युत्तरं न प्रेषितवत्यसि ? किं दूरावस्थानसङ्कल्पः पत्रोत्तरदानमप्यवरुणद्धि? !!!

साम्प्रतमितो गतं वृत्तान्तजातमपि किञ्चित् शृणु।

1- त्वदीया ज्येष्ठस्वसा श्रीमती नाडकर्णी सम्प्रति डॉक्टरपदभूषिता सञ्जाता। अचिरनिर्वृत्ते बिरुददानमहोत्सवे समासादितं तया तत्। तस्याः प्रबन्धस्य परीक्षकयोरन्यतमैर्बलदेवोपाध्यायैः प्रशंसितः प्रबन्धस्तस्याः। एषा प्रथमा शुभवार्ता। जानीषे एव त्वं यन्मयापि अस्याः प्रबन्धविषये सुदृढा मतिर्न धारितेति।

2- यद्यन्या वार्ताः शुश्रूषसे तर्हि सार्धमनुप्रेषितमाङ्गलमयं पत्रमनुवाचय। तत्र सूत्ररूपेण सर्वं प्रस्तुतं वर्तते। भाष्यं तु भाष्यमेव न तु लेख्यम्।

3- अड्यारवाचनालये उपलभ्यमानस्य हस्तलिखितग्रन्थस्य होस्पेटस्थाने उपलभ्यमानस्य मुद्रितग्रन्थस्य च कृते यन्मया कर्तव्यं तदशेषितम्। तद्विषये यत्पत्रद्वयं प्रेषितं तयोः प्रतिलिपी अपि अनुप्रेष्येते। तत एवावगन्तव्यं तत् ।

4- ततः पूर्वमपि वाराणसेयविश्वविद्यालये समुपलब्धस्य हस्तलिखितग्रन्थस्य प्रतिलम्भनायापि बहुधा प्रयतितम्। परन्तु न तत्र सिद्धिः समासादिता, यद्यपि हस्तगतप्राया सा समलक्ष्यत। विस्तरस्त्वेतद्विषयकः परस्मात्सम्मुखमावेद्यते।

5- अधुना दूरगङ्गोऽपि सन्निहितनर्मदोऽहं नर्मदावगाहनेन स्मरणेन चात्मानं पावयितुं प्रयतमानो वर्ते। जानास्येव त्वं वयं मूलतो नार्मदेया ब्राह्मणाः, कदाचित् यवनाक्रोशभीता इतः स्वधर्मरक्षणाय (स्वशरीरक्षणाय)? पलायिता विन्ध्यस्य दक्षिणां दिशम्। को वा जानातु, किमस्मिन्नेव स्थाने मत्पूर्वकुलीयाः न्यवसन्न वेति?

6- मम मातुलपुत्र्याः कुमार्याः शकुन्तलाया विवाहमङ्गलं भाविनि मार्चमासद्वाविंशे दिने भविष्यति मद्रपुर्यामेव।

अधुना मुम्बानगरेऽन्यत्र वा यत्ते कर्तव्यमवशेषितं तद् विशृणु। श्रुत्वा च सम्यगवधारय। अवधार्य च सावधानमनुतिष्ठ।

1- भारतीयविद्याभवनप्रवर्तकमूलपुरुषाः डॉ.के.एम.मुन्शीमहाभागाः अवश्यं द्रष्टव्याः परिचेतव्याश्च स्वात्मानं स्वकार्यं चाधिकृत्य। काले सर्वं फलिष्यति। अत्र विषये केनापि स्वकलितेन हेतुना

औदासीन्यं मा अवलम्बिष्ठाः। स्वानुसन्धानकर्मणि तदपेक्षितसाधनलम्भने चापि तेषां साहाय्यं प्रार्थयस्व।

2- स्वगुरोः कर्मकरणे भृषं सन्तुष्यसि, तेन चात्मानं कृतार्थां भावयसीति नैव न जाने। तेन तस्य तपस्विनः कृतेऽपि द्वयमधोनिर्दिष्टं कार्यं साधय। (क) एशियाटिसोसायटीसंस्थायाः पत्रिकायां मा किं वर्षद्वयात् प्राक् मदीयो लेखो मातृपञ्चकविषयकः प्रकाशितः। तत्र च प्रमादात् तैः के. वेङ्कटाचलम् इति लेखकनाम निर्दिष्टम्। परस्तात् संशोधनप्रकाशनार्थं पत्रिकाङ्कस्य पुनर्मुद्रणानां (रिप्रिन्ट्स) च कृते बहुधा बहुशो निवेदिता अपि तैः तूष्णींभावः एवावलम्बितः। जातनिर्वेदेन च मया परित्यक्तं साम्प्रतं यदि ते क्षमं तर्हि सर्वमेतत् साधय। एतादृशे कर्मणि तु सत्यं कुशलासि (ख) भारतीयविद्याभवनतो निर्गच्छति प्रतिपक्षं पत्रिकैका आङ्ग्लभाषामयी भवन्स् जर्नल इति। अस्याः पत्रिकायाः अङ्कद्वयं मया अपेक्ष्यते(1) जुलाई 3 दिनाङ्कितं यत्र शृङ्गगिरिजगद्गुरोः सुन्दरं चित्रं मुखपृष्ठेऽस्ति। (2) नवम्बरमासस्य 6 दिनाङ्कितम् अथवा 20 दिनाङ्कितम् यत्र भगवतो महाकालस्य चित्रं (शिल्पिनिर्मितम्) अन्तःप्रकाशितम्। यदि शक्यते तर्हि द्वयमिदं च क्रीत्वा आनेयम्।

पत्रमेतदतिदीर्घं संजातम्। तथापि द्वयमन्यद् लेखनीयमवशिष्यते।

1- शृङ्गगिरिमठस्थानां शङ्करविजयानामुपलब्ध्यर्थं त्वया सम्प्रति किमपि न क्रियताम्।

2- अन्तरकरमहाशयस्य त्वया उचितं प्रतिविहितं स्वस्थाने स्थापितश्चायमिति वार्ता तव गुरोः कर्णयोः कीदृशीममृतधारां प्रावाहायदिति वर्णयितुं न सुशकम्।

पत्रप्राप्तिसमनन्तरमेव प्रत्युत्तरं (कामं तल्लघु भवेत्) अवश्यं प्रेषय। सन्तु ते सर्वत्र शिवाः पन्थानः। अस्तु च जयः सर्वत्र।

इति प्रार्थयमानो

वि. वेङ्कटाचलम्

101

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, बडवानीनगरम्

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, पेटलादनगरम्

तिथिः – 11-03-1967

स्वस्ति। आयुष्मतीमजितां प्रियशिष्यामाशीर्भिरभिनन्द्यावेदयति त्वच्छिवानुध्यानपरो वेङ्कटाचलो यथा–

1- पत्रं त्वदीयं प्राप्तं यस्मिंस्त्वया मन्निर्देशानुसारमुज्जयिनीगमनं स्वीकृतम्। तदनुसारं च पत्नी निवेदिता। त्वयापि गमनात् पूर्वमेकमपि पत्रं प्रेष्यते चेच्छोभनं स्यात्। मन्ये एतावतापि त्वया नैतत् कृतं स्यात्।

2- त्वद्गृहस्वामिनस्त्वदनागमनमन्तरेण भृशं जातचिन्ता इति प्रतिभाति। श्रुतं मया यत् तैः असकृदस्मद्गृहे त्वत्स्थानविषये प्रश्नाः कृताः। इदं च कथितं यत् त्वया सुदीर्घं कालं गृहवेतनं न दत्तमिति। मन्ये गमनात् पूर्वं तेभ्योऽपि पत्रमेकं विसृज।

3- त्वत्प्रस्थानात् प्रागेव मया उज्जयिनी प्रापणीयेति या प्रार्थना तावकी न सा शक्यसम्भवा। अहं तावत् 17 दिन एव तत्र प्राप्तुं पारयिष्यामि। तस्यामेव रात्रौ गन्तव्यं स्यात् भोपालं प्रति यत्रावश्यानुष्ठेयं कर्म कृत्स्नमेकं दिनं मां व्यापारयिष्यति।

4- पूर्वस्मिन् पत्रे शैघ्र्यवशाद् अनवधानाच्च पत्रस्यैकस्य प्रतिलिपिः नैव प्रेषिता। मन्येऽधुना तत् सम्मुख एव तुभ्यं दातुं शक्यते।

5- यच्च त्वया छायैका प्राचार्यत्वसाक्षात्काराभिलाषिण्या अपेक्षिता दैवयोगात् तादृशं चित्रमेकं सन्नद्धम्। तदपि मन्ये प्रत्यक्षत एव द्रष्टुं नेतुं च शक्यते।

सन्देष्टव्याः प्रणामास्त्वत्पित्रोः शुभसंकल्पाश्च वत्सानाम्। शिष्टं सम्मुखे।

मन्ये मया पूर्वस्मिन्नेव पत्रे लिखितं त्वया अस्मद्गृहं प्रत्येव साक्षाद् गम्यताम्। आवयोः प्रत्यागमनानन्तरं त्वया न चिन्तयितुं शक्यते।

इति

वि. वेङ्कटाचलम्

102

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, पेटलादनगरम्

तिथिः – 06-10-1967

स्वस्ति। आयुष्मतीमजितां वात्सल्यसिक्ताभिराशीर्भिरभिनन्द्यावेदयति वेङ्कटाचलो यथा–

यातेऽपि बहुतिथे काले, स्थितास्वप्यवश्यावेदनीयासु वार्तासु, त्वद्वृत्तान्तजिज्ञासुं मां जानत्यामपि त्वयि, त्वया तावदेतावन्तं कालं न कुशलवार्ता प्रेषिता, न वा स्वकार्यप्रगतिर्विज्ञापितेति ईषच्चित्रं प्रतिभाति। पत्रप्रेषणालस्ये तु त्वं स्वगुरुमनुकरोषि पूर्णत इति नैव न जाने। तथापि तु तथा महानतिक्रान्तः कालो येनान्यदन्यच्चिन्तयति स्नेहनिघ्नं पापशङ्कि मनः।

जानाम्येव सम्यक् प्रकृतिं तावकीनां यद्, यदा मौनमवलम्बसे तदा काष्ठमौनादिव्रतधारिणो मुनितल्लजानप्यतिक्रम्य तिष्ठसि, लिखसि च चेद्दीर्घदीर्घं ते पत्रं लङ्कादाहव्यग्रं हनूमल्लाङ्गूलमपि व्रीडास्पदं विदधाति। (अपि नाम ते गवेषणप्रबन्धस्यापि स्थितिरीदृशी स्यात्।) अत एवाहमाशासेऽधुना यैव त्वमेतावन्तं कालं स्थिरनैभृत्यमवालम्बथाः सैव त्वं साम्प्रतं भूयिष्ठं पत्रमयीं शब्दवृष्टिं स्रक्ष्यसीति। य एव खलु मेघः ग्रीष्मे शुष्को नीरसश्चावतिष्ठते, सन्नप्यसन्निव च प्रतिभाति, स एव खलु वर्षासु प्रकामं रसवर्षी भवति!

मा किं विंशत्यहोभ्यः प्रागेव तव कृते पद्यमयं पत्रमेकं कल्पितमासीत् ''बस्'' यानेन ग्वालियरतः संचरमाणेन मया। परन्तु वृत्तपत्रिकायां क्वापि कोणे सामिलिखितं तत् संप्रत्य पुनरावर्तनाय गतं तपस्विनः कस्यचिद् व्यर्थपत्रक्रयविक्रयाजीवस्य हस्तम्। केवलं तत्रत्यमन्तिमं पद्यं स्मृतिरूढं संप्रति। तेनैव च सन्तोष्टव्यं त्वया–

''बस्'' याने स्तब्धसर्वाङ्गो हस्तपादजडीकृतः।
अन्यत् कर्तुमनीशोऽहं पद्यपत्रमकल्पयम्।।

इति

त्वद्गवेषणकर्मणः शीघ्रोच्छ्रयाकाङ्क्षी

वि. वेङ्कटाचलम्

103

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, भोपालनगरम्

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, पेटलादनगरम्

तिथिः – 06-04-1968

स्वस्ति। आयुष्मतीमजितामाशीर्भिरभिनन्द्य निवेदयति वेङ्कटाचलो यथा।

इह शिक्षाविभागतो विज्ञातं पूर्वेद्युः यत्ते नाम लोकसेवायोगेन स्वीकृतमिति, स्वीकृतानां चतुर्दशनाम्नां मध्ये चतुर्दशस्थानमेव त्वया प्राप्तमिति च । जानाम्येवैतत् यदेतत्पुनस्त्वापि हर्षस्थानं भविष्यति यत् आयुष्मता यशवन्त उद्गिरेणापि परीक्षणे विजयः प्राप्त, आत्मीकृतं च तृतीयं स्थानं तत्रेति।

साम्प्रतमेतद्विज्ञायते यत् स्वीकृतानां प्राथमिकानां नियुक्तिविषयकम् आधिकारिकं कार्यमपि प्रारब्धमेव। जुलाईमासत एव यथेमे तत्तत्स्थानेषु स्वं स्वं पदमधितिष्ठेयुस्तथा व्यवस्था करिष्यत इति श्रूयते।

अवशिष्टयोर्द्वयोर्नियुक्तिः अक्टोबरमासे भविष्यतीति कथयन्ति।

इमं सर्वं वृत्तान्तमावेद्य डॉ. सुमनोमहोदयाः प्रार्थ्यन्तां यत्ते अत्र शिक्षासचिवान् दूरभाषणेन तथा प्रार्थयन्तां यथा अन्त्ययोर्द्वयोरपि नियुक्तिविषयकं कार्यजातं साम्प्रतमेव प्राथमिकानां द्वादशानां नियुक्तिकार्येण सहैव क्रियतामिति। यद्येतद्विषये स्वयमेव डॉ. सुमनोमहोदयानां प्रार्थनमाप्राप्तकालं मन्यसे तर्हि तावत् प्रतीक्षस्व यावत्ते गुरुः पुनरुज्जयिनीं प्राप्स्यति।

अद्यैवैतद्विषयावेदकं पत्रमुद्गिरस्यापि प्रेषयामि।

शिष्टं सम्मुखे। सन्तु शुभाशिषः। भगवान् महाकालेशः विदधातु सर्वं भद्रं ते।

इति प्रार्थयते

वि. वेङ्कटाचलम्

104

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, पेटलादनगरम्

तिथिः – 20-05-1970

स्वस्ति। प्रियशिष्यामजितामाशीर्भिरभिनन्द्यावेदयति वेङ्कटाचलो यथा–

पूर्वेद्युरेव आयुष्मतो निर्भयस्य परीक्षाफलं प्रकटीकृतम्। तत्र चायुष्मता प्रथमश्रेण्यां परीक्षा समुत्तीर्णेति सत्यमभिनन्दनीयोऽयम्। अस्मदीयं चाभिनन्दनशतं तदभ्याशं प्रापयतु भवती।

आवेद्यन्तां च प्रणामाः मातरपितरयोः।

इति

वि. वेङ्कटाचलम्

105

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, शाजापुरम्

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, भोपालनगरम्

तिथिः – 20-12-1972

स्वस्ति। प्रियशिष्यामजितां वात्सल्यसिक्ताभिराशीर्भिरभिनन्द्यावेदयति समुज्झितगुरुकार्योऽपि गुरुपदभाक् वेङ्कटाचलशर्मा यथा–

त्वदीयं सुरगीर्निबद्धं पत्रं समवाप्य महतीं मुदमवापम्। कामये च त्वमित्थमेव निस्तन्द्रा सुरभारतीसाधने समर्पितहृदया कणशः कणशो भारतीसारं संचिन्वती समासादय वैदुष्याः समुच्छ्रितं किमपि पदं येनाहं वार्धके स्वं सान्त्वयितुं शक्नुयां यद् एकेनापि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगन्धिना। वासितं तद्वनं सर्वम् इति सुभाषितोक्तनीत्या एकपात्रनिहितयापि नाम विद्यया आत्मनीना गीर्वाणसरस्वती अशोचनीया समजनीति। किन्तु मा नाम जातु मतिं धारय यदीदृशं समुच्छ्रितं पदं मनोरथमात्रलभ्यमिति। आह स्म किल आङ्ग्लसाहित्ये विख्यातः डॉ. जॉन्सननामा विबुधोत्तसः प्रतिभानं किल एकोनशतांशतः श्रमस्वेदनिष्यन्दं केवलं एकशतांशमात्रया पूर्वपुण्यप्राप्तसंस्कारबलं चावलम्बते। न हीदृशानि चिरसत्यानि अन्यथयितुमीष्टे विधातापि स्वयमिति स्थिरविवेका प्रलोभनकारणानीतराणि जन्मशत्रूनिव द्विषन्ती धारय शिक्षकोचितं विद्याव्रतं येन भूतलावतरणं मोघं न भविष्यति।

आस्तामिदं परोपदेशपाण्डित्यम्। कदा कदाचित्तु जिह्रेम्येव आत्मानं प्रति विद्याव्यसनसत्संकल्पं निसर्गविशुद्धिपूते बाल्ये अक्षय्योत्साहविभूतिमहिते यौवनोपक्रमे च धृतं प्रथमं कृतां कथां प्रमत्त इव विस्मृत्य तिष्ठन्तम्। सर्वस्य संस्कृतलोकस्य मूर्ध्नि पदमप्यासितुं कृताः

संकल्पाः क्व गता इत्यपि नावैमि। साम्प्रतं तु यः कश्चित् प्राकृत इव लोकयात्रां निर्वहामि। काङ्क्षितसकलाभीष्टसिद्धिर्हि महतः पुण्यराशेः फलमिति न खलु नावैमि। जात एव यदधुनापि यत् किञ्चिदपि अवशिष्यते पूर्वं सपरिवाहस्यापि उत्साहस्रोतसो बिन्दुमात्रं तदपि पूर्वपुण्यफलमेव। अद्यात्रत्यमहाविद्यालयस्य स्नेहसम्मेलनोद्घाटनविधिं निर्वर्तयितुं समाहूतः प्राप्तेषद्विश्रमः संचितपत्राणामुत्तरलेखनेन संचितकर्मणां ज्ञानेनेव क्षयं विधातुं बद्धपरिकरोऽस्मि।

श्वः सायमितः सललितोऽहमुज्जयिनीं प्रतिष्ठासे। तत्र 24-12-72 दिने पूर्वच्छात्राणां सहशिक्षकाणां च आमन्त्रणोपक्रमो भविष्यति। पश्चाद् 25-12-72 दिने यथाशक्ति प्रयतिष्ये तावकीनमवशिष्टं कार्यं पूरयितुम्। तत् त्वं 24-12-72 दिने प्रातः आगत्य समयादिकं निर्धारयस्व।

शिष्टो वृत्तान्तस्तु सम्मुख एव शोभनतरः सुलभतरश्च।

इति

वि. वेङ्कटाचलम्

106

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, शाजापुरम्

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, भोपालनगरम्

तिथिः – 16-02-1973

स्वस्ति। श्वः मध्याह्नतः मध्यप्रदेशशासनसाहित्यपरिषदः अधिवेशनं भविष्यति। जानास्येव त्वं यदयञ्जनोऽस्यां परिषदि सदस्यत्वेन ऐषमः एव नियोजित इति। एतत्प्रसङ्गेन भोपालनगरमागमिष्यामि। प्रस्थातव्यं चावश्यमेव सायं, येन परेद्युः उज्जयिनीं प्राप्य ततः वल्लभनगरस्य विश्वविद्यालये व्याख्यानत्रय-दानार्थं प्रस्थातुं शक्नुयाम्। यदि शक्यसम्भवं त्वामपि द्रष्टुं प्रयतिष्ये। नो चेन्माऽन्यथा मंस्थाः।

तव लेखनकर्म कियत् अग्रे गत इति नैतावन्तं कालं निवेदितवतीति खिद्ये। तिष्ठत्येव जिज्ञासा बलवती। अवश्यमावेदय।

जबलपुरविश्वविद्यालये राजशेखरगोष्ठ्यां सन्न्यधाम्। कु. देवकी तत्र दृष्टा। कदाचित्तया तत्रत्यो वृत्तान्तः आवेदितः स्यात्।

त्वदभ्युदयाकाङ्क्षी

वि. वेङ्कटाचलम्

107

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, वाराणसी

प्रापिका – कुमारी अजिता त्रिवेदी, उज्जयिनी

तिथिः – 06-07-1988

स्वस्ति। वाराणसीतो विलिखति वेङ्कटाचलः सस्नेहशुभाशंसमवन्तीवास्तव्याया अजितायै पूर्वशिष्यायै यथा–

भ्रात्रोरायुष्मतोरभयनिर्भययोः विवाहमङ्गलमनुसमायोजितायाः सजग्धिसपीतिगोष्ठ्या निमन्त्रणपत्रमिह तदा प्रापद्यदावामितो मद्रनगरीं गतावास्व। ततो यदा 4.7.88 दिने न्यवर्तिष्वहि तदैव तदद्राक्षम्। ततो मङ्गलत्रयवार्ता समधिगता भ्रात्रोर्विवाह इति द्वयं नूतनगृहस्वामित्वमिति तृतीयश्च। स भगवान् महाकालो वा विश्वनाथो वा सर्वेभ्यो भवद्भ्यः श्रेयःप्रेयःपरम्परास्तनोतु इति प्रार्थये।

मत्सुहृत्प्रवराः श्रीकानिटकरशास्त्रिण इह कञ्चनकालं स्थित्वाद्य प्रतिष्ठासवः। तन्मुखेन पत्रप्रेषणस्य प्रधानमेकमेवोद्देश्यं यद्भवत्याः सविधे श्रीशङ्करभगवत्पादजीवनसम्बद्धा यावती पूर्वसञ्चिता सामग्री विद्यते तां सर्वामप्यहं कामये द्रष्टुं, यतोऽहं नियोजितोऽस्मि साहित्याकादम्या श्रीशङ्कराचार्यविषयकं लघुपुस्तकं प्रणेतुम्। शिष्टं श्रीशास्त्रिणोऽभिधास्यन्ति।

पितृचरणानां स्वर्गमनवार्तां श्रुत्वा पत्रमेकं प्रेषितमासीद् बालकृष्णस्यायुष्मतो मुखेन। विश्वसिमि तत्प्राप्तं स्यादिति। एवमेव मदीयषष्ट्यब्दपूर्त्यामन्त्रणमपि प्रेषितमासीत्। तदपि स्यात्सम्प्राप्तमिति विश्वसिमि।

यथावकाशं पत्रोत्तरं प्रेष्यताम्। आशासे अन्यत् सर्वं कुशलमिति।

भवत्यभ्युदयेच्छुः

वि. वेङ्कटाचलम्

108

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकाः – संस्कृतविभागीयसदस्याः

तिथिः – 28-12-1967

नववर्षोपहारः

किं धर्माचरणाद्भवेज्जनिमतां किं सर्वसंबोधनम् लोकस्तिष्ठति केन का प्रकृतिरित्याचक्ष्व विद्वन्नपाम्।
लूनं चेज्जलजं कथन्नु भवेत् सर्वोत्तरं वा पदं प्राप्तुं ध्येयमिहैव किं सुमतिभिः शम्भोः पदाब्जद्वयम्।।

वि. वेङ्कटाचलम्

पद्ये क्रमानुगाः

प्रश्नविशेषाः		उत्तरांशाः
1-	किं धर्माचरणात् भवेत् जनिमताम् ?	शम्
2-	किं सर्वसम्बोधनम् ?	भोः
3-	लोकः तिष्ठति केन ?	पदा
4-	का प्रकृतिः इति आचस्व विद्वन् अपाम् ?	अप्
5-	लूनम् (ल् +अनम्) चेत् जलजं कथं ननु भवेत्?	जद्वयम्
6-	प्राप्तुं ध्येयम् इहैव किं सुमतिभिः ?	शम्भोः पदाब्जद्वयम्

109

ॐ

प्रेषकः — आचार्यवेङ्कटाचलम्,उज्जयिनी

प्रापकः — शिवरामसिंहः, भोपालनगरम्

तिथिः — 17.09.1970

स्वस्ति। आयुष्मन्तं शिवरामसिंहं शुभाशीर्भिरभिनन्द्य आवेदयति वेङ्कटाचलोऽवन्तिकातः।

सह प्रेष्यमाणं पत्रं भोपालतः अद्यैव प्राप्तम्। अन्तः कदाचित् तादृशं किमपि वार्ताजातं स्याद् यद्विषयेऽपेक्षितं चेत् तन्त्रीसन्देशादिना भवानाकारणीयो भवेदिति मत्वा उद्घाटितं तद्। मन्य इदं सामान्यरूपमेव।

अत एव पत्रेणानेन प्रेष्यते। प्राप्तिरावेद्यताम्। पूर्वप्रेषितं पत्रमपि कार्यालयीयं समधिगतं स्यात्। मन्ये भवान् कुशली सहकुटुम्बः।

भावत्कः

वि. वेङ्कटाचलम्

110

प्रेषकः — शिवरामसिंहः, भोपालनगरम्

प्रापकः — आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

तिथिः — 21.9.1970

स्वस्ति श्रीमदाचार्यवर्यचरणौ सादरं सविनयं च भूरिशः प्रणम्य शिवरामसिंहो निवेदयति यत् अत्र कुशलं तत्रास्तु शम्। श्रीमतां कृपापत्रद्वयं वर्तमानमासस्य षोडशसप्तदशदिनाङ्कितं सहैव समधिगतम्। तदर्थमनुगृहीतोऽस्मि, भूयांसो धन्यवादाश्च।

पूर्वनिर्णयानुसारेण मया अगस्तमासे उज्जयिनीमागन्तव्यमासीत् तदैव ग्रीकनाटकादीनि पुस्तकानि समर्पणीयानि आसन् किन्तु कैश्चित् कारणैरुज्जयिनीं गन्तुमशक्नुवता मया तानि पुस्तकानि श्रीभारद्वाजमहोदयेन प्रेषितानि। तद्धृष्टतायै क्षन्तव्यो जनोऽयम्। मयैव गन्तव्यमासीत् इति जानन्नपि मुहुर्मुहुः श्रीमद्दर्शनार्थं गन्तुं विचारयन्नपि इच्छन्नपि च परिस्थितिवशात् पुनः

पुनरनिर्णयदोलायां दोलायमानोऽद्यावधि पुण्यचरणारविन्ददर्शनलाभाद् भूयसः कालाद् वञ्चितोऽस्मीति परमं खिद्ये।

अनुसन्धानसम्बन्धि अध्ययनमतिमन्थरगत्या चलतीति निवेदयन् लज्जे। गतेषु दिवसेषु मनो चिन्ताग्रस्तमासीत्। अतः केवलम् अभिज्ञानशाकुन्तलोत्तररामचरितयोरेवाध्ययनं कर्तुमपारयम्। The greak theater and its drama इतिग्रन्थात् chorus आदीनि प्रतिलिखितानि लिख्यन्ते च। अरस्तुनाट्यशास्त्रमपि प्रारभ्यते। विजयादशमीदीपावलीनाम्नि अवकाशे श्रीमतां सेवायामहम् उपस्थास्यामि, तदा किञ्चित्सम्यगध्ययनं भविष्यतीति विभावयामि।

डिप्टीकलेक्टरपदस्य नियुक्तिविषये अद्यावधि तु शासनेन कोऽपि आदेशः सन्देशो वा न प्रेषितो मम सकाशे। यदि किञ्चित् आगमिष्यति तर्हि श्रीमतां सेवायामेव प्रथममागमिष्यति–तद्द्वारैव प्राप्स्यति जनमेनम्।

मया श्रुतमासीत् यत् एकस्माद् वर्षादनन्तरं लोकसेवायोगस्य निर्वाचितप्रत्याशिनां सूचिः निरस्ता भवतीति। अतो निरस्तीकरणं परिशङ्क्य अहं मुख्यसचिवश्रीमद्रमाप्रसन्ननायकमहोदयेभ्य 18/08/1970 तमे दिनाङ्के एकं प्रार्थनापत्रं प्रेषितवान् यस्मिन् निवेदितमासीन् मया यत् दशमासाः व्यतीताः परं नाद्यावधि शासनेन, कोऽपि उपर्युक्तविषये आदेशः प्रेषितः। सन्दिग्धावस्थायामहं निजभविष्यत्कार्यक्रमं सम्यक् साधयितुं न पारयामि। अतः कृपया सूचनीयं कियदवधि अहं प्रतीक्षे इति। तस्य पत्रस्य अभिस्वीकृतिः मासान्तरं प्राप्ता या श्रीमद्भिः दृष्ट्वैव प्रेषिता च मां प्रति। न जाने कियत्पर्यन्तं सर्वकार उत्तरम् आदेशं दास्यतीति। यथार्थस्थितिं ज्ञातुं गतेषु दिवसेषु अहं भोपालं गन्तुमैच्छं परन्तु भीरुतावशात् शासनस्य उपेक्षापूर्णव्यवहारतश्च न गतोऽहम्। अयं द्वादशमासो वर्तते। यदि यथैव श्रुतं तथैव तर्हि निर्वाचनसूचिः मासान्तं निरस्ता भविष्यति वर्षपूर्णत्वात् इति महीयसी चिन्ता आसीत्। अस्मिन् विषये श्रीजयनारायणशर्मा तु सर्वदैव अर्थवादम् आशावादं च लिखति यत् अस्मिन् मासे आदेश आगमिष्यति, अस्मिन्निति श्रीप्रेमनारायणगर्गः मयैव सह निर्वाचितः लिखति यत् साम्प्रतं न रिक्तपदानि यतः शासनेन सेवानिवृत्तिं प्राप्स्यतां डिप्टीकलेक्टराणां सेवावधिः वर्धापिता। अतः नावसरो अस्मादृशानां नूतननिर्वाचितानां जनानाम्। काऽपि वैधानिकी क्रिया निर्वाचितैः सर्वै : मिलित्वा विधेयेति। अन्यः प्रकटयति यत् आर्थिक–उद्देश्यतः शासनं सम्प्रति नवनियुक्तिर्न करिष्यतीति। अपरो विश्वस्तः कथयति यत् इदं प्रकरणं मुख्यमन्त्रि–महोदयाधीनमस्ति। अतः अधुना ते यदा इच्छन्ति तदा करिष्यन्तीति। इत्थं मुखे मुखे नवीनाः वार्ताः श्रूयन्ते। उज्जयिनीतः निर्वाचिताः ये प्रत्याशिनः ते निश्चितरूपेण कथयेयुः सम्प्रति मम इयमपि एका निरर्थिकी चिन्तैवास्ति। योऽपि अध्ययनप्रत्यूह एव विद्यते। पूर्वपत्रस्य अभिस्वीकृतिं प्राप्य पुनर्मया प्रार्थनापत्रं भोपालं प्रेषितं परन्तु अधुना अवरसचिवश्रीयुत्व्ही.जी.ए.अय्यरमहोदयेभ्यः प्रेषितम्। कदाचित् ते वस्तुस्थितिं प्रकटयेयुः। ते उत्तरं दास्यन्ति चेत् तर्हि तत् श्रीमतां सकाशमेव आगामिष्यति। एतादृशानि पत्राणि कृपया श्रीमद्भिः उद्घाटितव्यानि आवश्यकानि भवेयुस्तर्हि प्रेषणीयानि नो चेत् यदाहमागमिष्यामि तदा तानि द्रक्ष्यामि।

जानेऽहं यत् इदमनावश्यकम् अतिरिक्तं कष्टं बहुलकार्यव्यस्तानां श्रीमतां तथापि तत्रभवन्तः सहिष्यन्ते इममपि अपराधमस्य अकिञ्चनस्य इति प्रार्थये।

कालिदाससमारोहप्रसङ्गे मम स्मरणं तत्रभवतामेव कृपा। महानयं स्ववसरो भविष्यति यदि श्रीमती सहैव अहमागमनायानुमतो भवेयम्। तत्र तु ममैवोपकारः यतो नवा नवा विद्वांसो द्रक्ष्यन्ते नवनवाः विषयाः आकर्ण्यन्ते, पुण्यदर्शनात्। सत्सङ्गतिरपि भविष्यति।

यत् आयुष्मती आङ्ग्लभाषां ग्रहीष्यतीति। यद्यपि आयुष्यमत्या आङ्गलभाषाया उपर्याधिपत्यासीदेव(?) वर्तते तथापि सहजा प्रवृत्तिस्तु संस्कृत एवास्ति मन्ये। मन्ये च तदध्ययनार्थं मदीयाऽल्पीयसी सेवापि सफलीभविष्यतीति। भविष्यति च समये आयुष्मती अध्ययनपरिश्रमेण गौरवान्वितां गुरुपरम्परां वैदुष्या प्रतिभया च विधास्यतीति विभावयामि। . .

तत्रभवतां विधेयस्य दर्शनाभिलाषिणः

शिवरामसिंहस्य

111

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः – श्रीशिवरामसिंहराठौरः, भोपालनगरम्

तिथिः – 12-03-1971

स्वस्ति।

प्रियशिष्यं शिवरामसिंहं शुभाशीर्भिरभिनन्द्य आवेदयति वेङ्कटाचलशर्मा यथा–

अधुनैव प्राप्तं भवता प्रेषितं पूर्वेद्युः। विडम्बनैवेयं विधेः यदन्ततो यस्मिन्नहनि प्राप्स्याम्यहं भोपाल–नगरं तस्मिन्नहनि भवतः प्रस्थानं भविष्यति। मन्ये सतीर्थ्यैः सर्वैः सार्धं भवान् प्रस्थास्यते। यदि नाम स्यात् कोऽप्युपायो येन भवत्प्रस्थानं एकस्माद्दिनादनन्तरं शक्यते कर्तुं तर्हि तथा क्रियताम्। नोचेन्नायास्यतामात्मा। भविष्यन्ति शतशोऽवसराः पुनरपि आवयोः सङ्गमाय। भवत्प्रस्थानात् पूर्वं यथेदं भवद्धस्तं प्राप्नुयात् तथा कर्तुमिदं त्वरितवितरणप्रणाल्या प्रेषयामि।

भावत्कः

वि. वेङ्कटाचलम्

112

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः – श्रीशिवरामसिंहः, भोपालनगरम्

तिथिः – 31-05-1971

स्वस्ति। उज्जयिनीतो भोपालपुरवासिनं श्रीशिवरामसिंहमावेदयति वेङ्कटाचलो यथा आयुष्मता प्रहितमुभयमपि पत्रं यथायथमधिगतम्। यथावेदितमायुष्मता श्रीनटराजशास्त्रिणः समागताः। बसयानविलम्बेनातर्कितोपनतेन मध्येरात्रमेकवादन एव तेऽत्रागन्तुमशक्नुवन्

द्वितीयश्राद्धनिमित्तम्। पूर्वतनेऽवसरे तु सायमेव प्रापंस्ते इति नोपस्थितश्चिन्तावसरः। पुनश्च 12-6-1971 दिने श्राद्धमेकं भविष्यति। तत्रापि सन्निधातुं कृतसमयास्ते।

आयुष्मान्विश्वनाथः पञ्चदशाहानि अतिसारपीडित आसीत् सम्प्रति कृतव्याधिप्रतीकारः स्वस्थप्रायः। पितृचरणाः सम्प्रतीहैव विद्यन्ते। असकृच्च भवन्तं सस्नेहं स्मरन्ति। सन्त्वाशिषः।

भावत्कः

वि. वेङ्कटाचलम्

113

ॐ

प्रेषकः — आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः — श्रीशिवरामसिंहराठौरः, भोपालनगरम्

तिथिः — 19-08-1971

स्वस्ति। आयुष्मन्,

भवदुपरि तन्त्रीसन्देशमुखेन यः कार्यभारः समारोपितो यश्च सहजया श्रद्धया यथायथमूरीकृत्य साधितस्तत्सर्वं शुभोदर्कमेव सञ्जातम्। शास्त्रिभिः लिखितस्य पत्रस्याप्राप्त्या क्षुभितमिव मानसमासीत्। अत एव क्लेशितो भवान्। भवता प्रेषितः प्रतिसन्देशस्तन्त्रीमार्गीयः श्राद्धदिनस्य पूर्वतने दिनेऽप्रापि। तदनुसारि यत्पत्रं प्रेषितं तदपि श्राद्धदिवसस्य प्रातःकाल एव प्राप्तम्। ईदृग्विधां यां निष्ठामच्छिन्नं धारयति भवान् तन्निष्कृतिमन्यां कल्पयितुमनीशोऽहं केवलं भवदभ्युदयाय यथाशक्ति प्रार्थये भगवन्तम्। स एव वहतु योगक्षेमम्।

भाविन्यधिवेशने प्राच्यविद्यापरिषदः यदि भवानपि सदस्यरूपेण समन्वीय शोधपत्रं प्रस्तोतुकामः स्यात्तर्हि तत्सम्बन्धि पत्रजातं प्रेषयिष्यामि। आवेदयत्वात्मनिश्चयम्। सन्त्वाशिषः।

वि. वेङ्कटाचलम्

114

ॐ

प्रेषकः — आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः — शिवरामसिंहः, भोपालनगरम्

तिथिः — 21-08-1971

आयुष्मन्, पत्रं त्वदीयं सम्प्राप्तम्। अभीप्सितं प्राच्यपरिषत्सदस्यतावेदनपत्रजातं सार्धमनुप्रेष्यते।

विधित्सितं विधीयताम्। मन्येऽहं साधु निर्णीतं भवता यदतर्कितोपनतोऽयं लाभः स्वहस्तात् स्वयं न च्यावयितव्यः।

परिषदधिवेशने प्रस्तोष्यमाणस्य निबन्धस्यानुरूपविषयचयने किञ्चित्पूर्वपरामर्शस्तावत्प्रथमं स्वयमेव भवता विधीयताम्। विषयः पुनः भवता करणीयत्वेन स्वीकृतेन शोधविषयेण सम्बद्धो यथा स्यात्तथा प्रयत्यताम्। अनन्तरं यदा भवान् पुनरिदन्नगरं समागच्छैत्तदास्य निष्कर्षः शक्यसम्पादः।

आगामिनि भौमवासरे रात्रौ 10–15 वादने भोपालं आयास्यति यानेऽहमागमिष्यामि। मत्सुहृदः श्रीकुमारार्याः याननिलयमागमिष्यन्ति। तां रात्रिं तैस्सह वत्स्यामि। यदि सुकरं स्यात् भवानपि याननिलयमागच्छतु। अन्येद्युः 'बरखेडा' ग्रामे शास्त्रिणां गृहे मातुः मासिकश्राद्धकर्म निर्वर्तयिष्यामि।

सन्त्वाशिषः।

भावत्कः

वि. वेङ्कटाचलम्

115

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः – शिवरामसिंहः, शिवपुरी

तिथिः – 10-05-1975

आयुष्मन्, पत्रं भावत्कमासाद्य तत्रावेदितं विभागीयपरीक्षोत्तरणवृत्तान्तं च विज्ञाय परमं प्रहर्षमवापम्। प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजन्तीति सत्यापितं वचो महाकवेः। तत्रापि उच्चश्रेण्यामुत्तीर्ण इति यत्सत्यमभिनन्दनीयसङ्कल्पबलोऽसि। ईदृगेव भविष्यकाले उत्तरोत्तरानभ्युदयान् प्राप्नुहीति हृदयस्थिता मे शुभाशीः।

त्वत्पत्रप्राप्तेः कतिपयदिनेभ्यः प्रागेव भवान् मत्स्मृतिपथमायातः आसीत्। प्रसङ्गान्तरे स्मृत आसीत्। यदा भवानत्रागमिष्यति तदा सर्वं कथयिष्यामि। आयुष्मत्याः ज्येष्ठपुत्र्याः वरान्वेषणकर्मणि बद्धपरिकरोऽहमेषु दिवसेषु। अद्य यावत् साफल्यं नासादितम्। तथापि परमेश्वरकृपा न चिरादेव जागरिष्यतीति दृढामाशां बध्नन्नासे। शिष्टं परस्तात् सम्मुखे वा।

भावत्कः

वि. वेङ्कटाचलम्

116

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः – शिवरामसिंहः, रीवानगरम्

तिथिः – 02-03-1978

आयुष्मन्,

महान् मे प्रमोदः समभूद् भवद्गृहे दिनमेकं सार्धमुषित्वा। पुत्रौ द्वावपि मेधाविनौ विद्यासु निपुणौ भविष्यतो यथाकालम्। सन्तु तयोरुभयोराशिषो मदीयाः।

भवदधीनमवशिष्टं कार्यं यथासमयं निर्वर्तितमिति सूचना पत्रमुखेन प्रेषिता समधिगता पूर्वेद्युः।

बालकयोः कृते मदीयं स्नेहचिह्नं समुचितमुपहारीकर्तुं नापारयमिति खिद्ये। अवकाशदारिद्र्येण सर्वं कार्यं सुशोभनं विधातुं नाशक्नवम्। कुलपतेर्गृहगमनसङ्कल्पोऽपि मोघीकृतः। तान् सम्प्रति पत्रमुखेनैव प्रार्थयिष्ये क्षन्तुं माम् । श्रीजयनारायणः सम्प्रति भोपाले नियोजित इति कदाचित् विदितं स्याद् भवतः।

विशेषतश्च भवतः पत्न्या मम सेवाविधाने महती श्रद्धा आस्थितेति सापि मद्वचनादभिनन्दनीया। स भगवान् परमेश्वरः भवतां सर्वेषां कुशलं करोतु इति प्रार्थये।

पुनश्च। तत्रत्यो यो बन्धुर्मदीयः परिचायितः तेन सह व्यवहारे महदवधानं कर्त्तव्यम्। श्रूयते सः नातीव– विश्वासयोग्यः।

इति

भवदभ्युदयैषी

वि. वेङ्कटाचलम्

117

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः – शिवरामसिंहः, पन्नानगरम्

तिथिः – 31-03-1982

आयुष्मन्,

भवता प्रेषितं पत्रद्वयं यथावत् सम्प्राप्तम्। महान् प्रमोदः समजनि, यद् भवान् सकुटुम्बः पन्नानगरं समायातः सुखी सन् निर्वहति जीवनयात्राम्।

मध्ये अस्मद्विभागेन भोजसंगोष्ठी द्वितीया समायोजिता। तत्कार्यव्यग्रतया पत्रलेखने विलम्बोऽभूत्। संगोष्ठी–सम्बद्धानि पत्राणि सार्द्धमनुप्रेष्यन्ते।

प्रार्थये परमेश्वरं यद् भवान् राज्यकार्येषु समुचितां सिद्धिं श्रेयश्च प्राप्नुयादिति।

भावत्कः

वि. वेङ्कटाचलम्

118

प्रेषकः – शिवरामसिंहः, नागोदनगरम्

प्रापकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

तिथिः – 30-06-1982

परमादरणीयाः श्रीमन्तः आचार्यपूज्यपादाः,

तत्रभवद्भिः प्रेषितं कृपापत्रं समये समधिगतं किन्तु परिस्थितिवशात् मनःवैकल्याच्च यथासमयं पत्रं सेवायां न प्रेषयितुं शक्तोऽभवम् इत्यतः क्षमां याचे। पन्नातः अप्रेलमासे मम स्थानान्तरणं नागौदनगरे सञ्जातम्। तत्र च भारग्रहणे केचन अवरोधाः आसन्। ते च शनैः शनैः दूरीभवन्तः सन्ति दूरीभविष्यन्ति च। यथा मईमासस्य वेतनादिकस्य अप्राप्तिः, आवासगृहस्य अनुपलब्धिरित्यादि। भगवत्पादानां शुभकामनया आशीर्भिः च सपरिवारोऽहं कुशली। यद्यपि यदा कदा शरीररोगाश्च पीड्यन्त्येव तथापि न कोऽपि चिन्ताविषयः।

तत्रभवतां विधेयस्य

शिवरामसिंहस्य

119

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः – श्रीशिवरामसिंहः, खरगोननगरम्

तिथिः – 17-09-1986

स्वस्ति।

आयुष्मन्, गीर्वाणभाषासंदब्धं भावत्कं पत्रमनुवाच्य पुत्रोत्सवेनेव अन्तरङ्गमभ्यनन्दत्। अन्तराले महति काले व्यतीतेऽपि प्राप्तपूर्वां संस्कृतविद्यां यथापूर्वं रक्षति भवानिति महान् प्रमोदः। इत्थमेव प्रयत्नतो रक्ष्यतामियं, येनेयमन्त्ये वयसि पतिपरायणा पत्नीव धर्म्ये पथि प्रवर्तयन्ती महते कल्याणाय कल्पिष्यते। "श्रद्धत्स्व सौम्य"!

यथेत्थं तेजस्विनी संस्कृतलेखनी भवतः तदा कथं विश्वस्यतां, भवान् विस्मरणदोषसमाक्रान्त इति। सर्वथा नास्ति तादृशः कोऽपि दोषो भवतीति मन्ये। परिणते वयसि सर्वेषां मनुष्याणां स्मृतिदौर्बल्यं जायत एव। मन्ये भवान् वृथा निर्वेदं कुर्वन्नात्मानं खेदयति। यदि भवान् विस्मरणहतोऽभविष्यत् तर्हि ईदृशं सुबद्धं संस्कृतं सर्वथा नालेखिष्यत्, यादृशमधीतसंस्कृताः प्राप्तस्नातकोत्तरोपाधयो भूयांसः पण्डितम्मन्या अपि संप्रति न शक्नुवन्ति मनसापि कल्पयितुम्। तन्मा व्यर्थचिन्तयात्मानमधः पातयतु। सर्वैरेव प्राणिभिरवश्यमेव भोक्तव्यं शुभाशुभानां पूर्वकर्मणां फलम्। तेषु दिनेषु तादृशं किमपि कर्म फलोन्मुखं स्थितं स्यात्।

सम्प्रति सर्वं परिवर्तिष्यते। धारय पूर्ववदुत्साहं सर्वकर्मसु। सत्यनिष्ठया आधिकारिकेषु कर्मसु प्रवर्तस्व। परं सत्यनिष्ठया सह लोकव्यवहारमपि यथायथमनुवर्तस्व। उभयोः समन्वयेनैव पुरुषः जीवनयात्रायां सफलो भवति समेधते च। मैतद्विस्मार्षीः। सन्ततं च स्मर वाल्मीकेर्वचनानि–

अनिर्वेदः श्रियो मूलमनिर्वेदः परं सुखम्। अनिर्वेदो हि सततं सर्वार्थेषु प्रवर्तकः॥

–रामायण 5.12.10

अनिर्वेदं च दास्यं च मनसश्चापराजयम्। कार्यसिद्धिकराण्याहुस्तस्मादेतद् ब्रवीम्यहम्॥

तत्रैव.4.49.6

मन्ये पारमेश्वरसंविधानकमिदं यद् भवान् सम्प्रति श्रीमतो मोहनगुप्तस्य हस्ते तिष्ठति। दृढं विश्वसिमि स कथमपि भवते महत् साहाय्यमाचरिष्यति। संस्कृतं प्रति तस्य महाशयस्यासाधारणी रतिः। अत एव संस्कृतज्ञं भवन्तं विज्ञाय भवतः क्लेशतनूकरणाय प्रयतिष्यते।

इयमपि वार्ता शोभना तस्मै निवेद्यतां यद्गते 9-9-86 दिने उत्तरप्रदेशराज्यपालस्य कार्यालयादागतेन पत्रवाहकेन अतर्कितोपनतविधया सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य कुलपतिपदे नियुक्त्यादेशः समानीतो मम कृते। अनभ्रवृष्टिरेवं संजाता। अद्यापि न जाने केन वा महाभागेन मदभ्युदयतत्परेण मन्नाम तत्र समारोपितमिति। तत्रापि तत्प्रदेशस्थानन्यान् समतिक्रम्य कुलाधिपतिना मादृशस्य लौकिकपुरुषावलम्बहीनस्य नाम कथमनुमोदितं स्यादिति तु सर्वथा न निश्चेतुं शक्नोमि। विचित्रा हि लीला पारमेश्वरी। प्रथमं तावद्दोलाचलचित्तवृत्तिरासं, किमिदं स्वीकार्यमुत नेति। सम्प्रति गमनं निश्चितं, परं नवम्बरमास एव गमिष्यामि। इयमपि वार्ता निवेद्यतां श्रीमोहनगुप्ताय।

अतर्कितोपनतं कमपि कुटुम्बग्रन्थिं विश्लेषयितुं गमिष्यामि मुम्बापुरीं श्वः सायम्। त्रिचतुरैरहोभिः निवर्तिष्ये।

भवदभ्युदयाशंसी

वि. वेङ्कटाचलम्

120

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्,वाराणसी

प्रापकः – श्रीशिवरामसिंहः, खरगोननगरम्

तिथिः – 01-01-1993

स्वाध्यायश्रीप्रवचनतपःसिद्धिसौभाग्यभूम्नां
पाण्डित्यश्रीप्रथितयशसां शास्त्रसर्वस्वधाम्नाम्।
आचार्यश्रीमुषिततमसां काशिकाधन्यनाम्नां
पूर्वेषां श्रीचरणगलितां धूलिपालीं नमामि॥1॥

सदा शिवमयैः सदाशिवकृपातरङ्गानिलै-
र्भवादृशसुहृज्जनप्रकृतिपूतभावोर्मिभिः।
पुरेऽत्र पुनरागतः प्रथितविश्वविद्यालये
पुरेव परिभाव्यतां प्रणयमङ्गलैः पुष्कलैः।।2।।

मन्ये भवान् कुशली सकुटुम्बः। ज्येष्ठपुत्रश्च सम्प्रति महाविद्यालये गणिताचार्यकार्यं यथावत् सम्पादयति। सन्त्वाशिषः शुभाः सकुटुम्बस्य भवतोऽभ्युदयाय।

वि. वेङ्कटाचलम्

121

ॐ

प्रेषकः — आचार्यवेङ्कटाचलम्, नवदेहली

प्रापकः — श्रीशिवरामसिंहः उज्जयिनी

तिथिः — 13-11-1996

आयुष्मन्,

सम्प्रत्येव समधिगतं भावत्कं पत्रं 7/11/96 दिनाङ्कितम्। पूर्वं प्रेषितं पत्रमपि प्राप्तमेवासीत् समयेन। किन्तु गृहोपकरणानां स्थानान्तरसम्पादने क्वापि लुप्तमभूत्तत्। अत एव भवतः स्थानसंकेतजिज्ञासया बंगलूरनगरवास्तव्याय पुत्राय पत्रं विलिख्य अप्राक्षम्। महान् मे प्रहर्षो यद्भवान् सम्प्रति प्राप्तसेवाविश्रमः चरमं वयो महाकालपुर्यां यापयति। स भगवान् श्रीमहाकालेश्वरो भवते सुकुटुम्बाय चित्तशान्तिमयं परमं सुखं वितरत्विति प्रार्थये।

सम्प्रति नवोऽयं समाचारो यन्मया बहुधानिच्छतापि बिहारप्रान्तस्य महामहिम-राज्यपालानामाग्रह- विशेषेण तत्रस्थस्य दरभङ्गासंस्कृतविश्वविद्यालयस्य कुलपतिपदाधिकारः स्वीकृतः। 8.11.96 दिनाङ्के राजभवने पटनानगरीये स्वीकृतिपत्रे स्वहस्तोऽङ्कित एव। 21-11-96 दिनाङ्के सपत्नीकस्तस्मिन्मिथिला- प्रदेशभूषणे पुरे कार्यारम्भं करिष्यामि।

शिष्टं परस्तात्। सन्तु सकुटुम्बस्य भवतः सर्वाः सम्पदः।

इत्थं भावत्कः
वि. वेङ्कटाचलम्

122

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, शाजापुरम्

प्रापिका – कुमारी शुभा, उज्जयिनी

तिथिः – 28-02-1973

स्वस्ति। वत्से शुभे,

कुमार्याः उमायाः पत्रस्य अन्ते यत् त्वया वाक्यद्वयं संस्कृतभाषया लिखितं तद् दृष्ट्वा नर्तितुम् आरब्धं मम मनः। त्वया साधु चिन्तितं पितरं सन्तोषयितुम् उत्तमं साधनम्। सत्यं मेधाविनी असि!

अद्य त्वया लिखितं पूर्णं संस्कृतपत्रमपि प्राप्तम्। अस्मिन् अतिलघुनि वयसि अपि संस्कृतभाषया पत्रं लिखितुं प्रारम्भः कृतः इति श्लाघनीयमेतत् सर्वथा। अतीव प्रसन्नोऽस्मि।

पत्रगताः सर्वे वृत्तान्ताः ज्ञाताः। तव स्नेहभाजनभूताः पितामहस्थानीयाः श्रीमन्तः मालूमहोदयाः मां द्रष्टुमिच्छन्ति इति विदितम्। किं ते पूर्णरूपेण स्वस्थाः संजाताः अधुना? त्वं तेषां गृहं गत्वा कथय 'शरीरश्रमः भवद्भिः न कर्तव्यः' इति। अहं रविवासरे तान् स्वयं द्रष्टुं प्रयतिष्ये। शनिवासरे तु महाशिवरात्रिः भविष्यति। अत एव तस्मिन् दिनेऽहं मौनं धारयिष्यामि।

तव पत्रे ये भाषादोषाः तान् सम्मुखे एव स्पष्टीकरिष्यामि। अहं तावदभिलषामि यत् त्वम् एवमेव संस्कृतभाषया मह्यं पत्राणि लिख इति। शनैः शनैः तव रुचिः वर्धिष्यते। भाषाज्ञानमपि दृढं भविष्यति। अन्ते च महती विदुषी भविष्यसि। मामपि अतिक्रम्य स्थास्यसि।

सन्तु शुभाशिषः।

इति

वात्सल्येन आर्द्रहृदयः पिता

वि. वेङ्कटाचलम्

123

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, शाजापुरम्

प्रापिका – कुमारी शुभा, उज्जयिनी

तिथिः – 11-04-1973, श्रीरामनवमी

!! स्वस्ति !!

वत्से शुभे मया प्राप्तं पत्रं यल्लिखितं त्वया।

ज्ञात्वा च निखिलं वृत्तम् आनन्दश्च महान् अभूत्॥1॥

दृष्ट्वा च रुचिरां शैलीम् आङ्ग्लभाषाविलेखने।
अभिनन्दामि ते नूनं पत्रलेखनकौशलम् ॥2॥
कक्ष्यायां प्रथमं स्थानं प्राप्तव्यमिति यत् त्वया।
कृतश्च शुभसङ्कल्पस्तेन नन्दाम्यहं शुभे॥3॥
परिश्रमं विना शून्याः सङ्कल्पाः न फलन्ति हि।
एतन् मनसि कर्तव्यं कर्तव्यश्च परिश्रमः॥4॥
ततश्च भगवान् नूनं साहाय्यं ते करिष्यति।
प्रार्थये चाहमप्येवं तवाभीष्टस्य सिद्धये॥5॥
अन्ते चैकं महत् सत्यं वक्तुमिच्छामि ते हितम्।
प्रमादो नात्र कर्तव्यः कदापि क्वापि वा त्वया॥6॥
कामम् आत्मोन्नतिः श्लाघ्या प्रार्थनीया च सर्वथा।
किन्त्वेदर्थं न प्रार्थ्यम् अन्येषां पतनं भयम्॥7॥

वि. वेङ्कटाचलम्

124

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी
प्रापिका – श्रीमती विजया सुब्रह्मण्यम्, मुम्बईनगरम्
तिथिः – 30-12-1978

स्वस्ति। आयुष्मतीं वत्सां विजयां श्रुत्युक्ताभिः समस्ताभिराशीर्भिरभिनन्द्य लिखति (भोपालत उज्जयिनीं प्रति गच्छन्) बाष्पयानतः पिता। कतिपयान्येव गतानि मे ज्येष्ठभगिन्यास्ते पत्रं विसृष्टवतः। तदपि विस्तृतं पत्रं यात्रामध्य एवालेखि। चिन्तितमासीत् तदैव तवापि पत्रमेकं लेखनीयमिति। परं न तत् कर्तुं पारितं, सम्प्रति तव क्रमः समुपनतः। एषु दिनेषु दृढेनालस्यपाशेनेव बद्धोऽहमवश्यकरणीयमपि कार्यजातं न कर्तुं शक्नोमि। मातुलान्या आगमनेनापि कार्यविघ्नः समजायत। त्वया सह दिनद्वयं यापयित्वा भृशं प्रसन्ना सा त्वद्भगिनी उमा च। न जाने कीदृशीं मायां त्वं प्रयुङ्क्षे यया त्वत्सान्निध्यं प्राप्ताः सर्वेऽपि प्रसन्नान्तरङ्गा निवर्तन्ते। इयं ते नैसर्गिकी माया तव पतिविषये पतिकुटुम्बीयानां सर्वेषामपि विषये सर्वथा यथार्था भवत्विति प्रार्थये परमेश्वरम्। अपि नाम त्वत्पतिस्तव नित्यसन्निधानेन प्रहृष्टान्तरङ्गः सर्वदा भवेत्। तेन च युवयोर्दाम्पत्यजीवनं यत्सत्यं कृतार्थं भवेदेकया दृष्ट्या। कृतार्थतायाः समग्रता तावत् तदा सम्पत्स्यते यदीदृशात् बाह्यपरितोषाद् उत्कृष्टतरमान्तरङ्गमानन्दमपि स्वयं द्वावपि युवां प्राप्नुयातम्। तच्च तदा भवति यदा कश्चित् प्रेयोमार्गमतीत्य श्रेयोमार्गे सञ्चरितुमारभते। गच्छता कालेन (ऐहिकमौन्नत्यं सर्वं प्राप्य तदनन्तरम्) तदपि अनुगृह्णातु स भगवान् युवयोरित्यपि प्रार्थये। (मन्ये काचिदशरीरिणी वाक् 'तथास्तु' इति ब्रूते सम्प्रति।)

त्वां प्रति पत्रलेखनसमये कवित्ववश्ये ममापि चेतसि कवित्वभावना सहजरूपेणैव प्रादुर्भवति। किं क्रियताम्? सम्प्रति लोकयात्रावृत्तं द्रक्ष्यामः। तव अपेक्षितं प्रमाणपत्रादिकं सर्वं सम्पादयितुं प्रयतिष्यामहे। 'कॉन्वेन्ट' विद्यालयतः प्रमाणपत्रं प्राप्तमेवं पूर्वेद्युः। तदनेन सहैव प्रेषयिष्यामि। इतरदपि पत्रजातं परस्ताद्यथायथं प्रेषयिष्यते। तद्विषये निर्विण्णा मा भूः। यद्यपि गृहे एव बालकानां बालिकानां त्वदभिमतसंगीतचित्रकलादीनां मदभिमतसंस्कृतभाषाया वा अध्यापनेन ईषत्प्रयोजनमवश्यं सेत्स्यति(उभयविधमपि प्रयोजनं कालयापनं धनार्जनश्च) तथापि न मे बहु रोचते अयं पथाः। न वानेन पन्था तव महानभ्युदयो भविष्यति। सन्ति लोके सहस्रशो जना मध्यमपथसञ्चारिणः। तेषु यदि त्वमपि अन्तर्भावयिष्यस्यात्मानं तेन किं महत्कार्यं साधितं स्यात्? **'उत्सर्पिणी महतामभ्यर्थना'** इति महाकविवचनं मा विस्मार्षीः। उन्नतं पदं प्राप्तुं प्रयतस्व। तच्च तपसा सिध्यति नान्येन केनापि साधकेन। तपो नाम न तत् यत् जराजीर्णैः कतिपयैः कुत्रापि वनगहने वा गुहायां वा आत्मा क्लेश्यते। तपो नाम दृढः संकल्पः, तपो नाम नित्यमग्लानः परिश्रमभूमा। तच्च सर्वैरपि सर्वदा सर्वत्र कर्तुं सुकरम्। स्वं गृहस्थधर्मं सम्यक् पालयन्त्या तन्द्रां सर्वथा वर्जयित्वा सङ्कल्पितमात्मनः उन्नतिमार्गं प्रति त्वयापि नितान्तसुलभं नितान्तसरसं तमाचरितुं शक्यते। तपः शब्दस्य ईदृशं व्यापकमर्थं मनसि कृत्वैवाह स्म भगवान् मनुः–

"यद्दुर्लभं यद्दुरापं यद्दुर्गं यच्च दुस्तरम्। सर्वं नु तपसा साध्यं तपो हि दुरतिक्रमम्"। इति। अतो ब्रुवेऽहं क्षुद्रेषु मा रमस्व। स्पृहय महीयसे श्रेयसे। इदमेव प्रकारान्तरेण घोषयति ऋषिरुपनिषदि **"यो वै भूमा तत् सुखम्। नाल्पे सुखमस्ति।"** इति। यत्र कुत्रापि कर्मणि आत्मनो नियोजनात् पूर्वं सर्वान् पक्षान् सम्यग्विचिन्त्य निश्चिनुहि। **सहसा विदधीत न क्रियाम्। विमृश्यकारिणं स्वयं वृण्वन्ति सिद्धयः।** यदा यदा अवकाशो लभ्यते तदा शोधकार्यलेखनमविच्छिन्नतया कुरु। कथमपि प्रारब्धं तत् कार्यं पूरणीयम्। कदा कुत्र केन प्रकारेण तत् साहाय्यं विधास्यति इति न वक्तुं शक्यते सम्प्रति केनापि। मुम्बापुरीविश्वविद्यालये संस्कृतविभागाध्यक्षमवश्यं पश्य। तदर्थं पत्रमेकं प्रेषयिष्यामि यदि रोचते। तत्रैव कस्मिन्नपि अन्यस्मिन् महाविद्यालये अवधूतशास्त्री प्राध्यापकपदमधितिष्ठति। तमपि पश्य। सन्त्यन्येऽपि मत्परिचिताः केचित्। तानपि द्रष्टुं शक्ष्यसि यदि ते रोचते। सम्यक् पूर्वोत्तरं विमृश्य मह्यं लिखाभीप्सितम्।

पुस्तकसूचीप्रेषणाय आत्मानं मा खेदय। यथासम्भवं परस्तात् प्रेषयितुमर्हसि। विवाहानन्तरमपि आत्मानं पतितः पृथग्जानासीति चित्रमेतत्। अन्यथा पत्ये बहूनि पत्राणि प्रेषितानि मह्यमल्पतराणि इति कथं चिन्तयसि। सर्वाण्यपि पत्राणि उभयस्मै एव प्रेषितानीत्यवधारय। (द्विवचनान्तम् 'उभाभ्यां' पदं खण्डयित्वा 'उभयस्मै' इत्येकवचनान्तं पदं मया ज्ञानतः प्रयोजनतश्च प्रयुक्तमत्रेति जानीहि।)

अन्यच्च। धैर्यमवलम्बस्व। कूपमण्डूकवृत्तिमाश्रयन्ती स्वगृहाङ्गणे एव आत्मानं मा बधान। शनैः शनैः नगरजीवनरहस्यैः प्राप्तपरिचया भविष्यसि। नगरविहारेषु सर्वथा सर्वदा च नितान्तं सावधाना भव। नो चेद् धूर्तानां प्रतिनगरं भूयिष्ठसुलभानामामिषं भविष्यसि। नाम्नैव तत् सर्वं नगरं, वस्तुतस्तु तद् गरमित्यवेहि। (गरम् अर्थात् विषम्)।

यथासम्भवमवश्यं प्रयतिष्यते ते जननी मुम्बापुरमागत्य त्वद्गृहसंविधानसौभाग्यं स्वयं वीक्ष्य परमानन्दमनुभवितुम्। अचिरादेवायं मनोरथः संपत्स्यते। तन्मा शुचः। ईदृशी एव लोकयात्रा गृहस्थानाम्। बहुधा काम्यमानमपि कदाकदाचिद् झटिति कर्तुं न शक्यते। तत् कालं प्रतीक्षस्व। यथाशक्ति मुम्बापुरीवास्तव्यानां कौटुम्बिकानां सुहृदां च गृहाणि पत्या सार्धं गत्वा परिचयं रक्ष।

03-01-1979

एतावदेव लिखितं यात्रायाम्। गृहमागत्य तु यथापूर्वं नानाप्रकारेषु कार्येषु व्यापृतेन चिन्तयितुमपि न पारितम्। त्वदीयं पत्रमपि अत्र आगतं पठित्वा भृशं प्राह्लष्यन्मानसम्। एतदपि सम्यग्विचारय यन्मया तुभ्यं पत्रं प्रथममेव लिखितमिति।

उमाशुभयोर्भगिन्योर्लिखितं विस्तृतं पत्रमपि प्राप्तमेव। अथ च नववर्षमुपलक्ष्य त्वत्प्रणीत– 'तबला'वादकवीणानादिनीचित्राभ्यामुपेतमभिनन्दन द्वय...। सर्वमतीव शोभनम्। विशेषतश्च भावचञ्चलं यद् वाक्यजातं त्वया लिखितं तत्पठित्वा भृशं प्रमुदितोऽहम्। इत्थम्.... त्वयि विद्यमानं वर्धमानश्च उत्साहप्रवाहं विचिन्त्य मन्ये त्वं नूनं धन्यासि। ईदृशमेव उत्साहं स भगवानजस्रं रक्षतु पोषयतु चेति प्रार्थये। त्वच्छ्वसुरमहोदयस्यापि पत्रमभिनन्दनपत्रसहितं पूर्वेद्युः प्राप्तम्। तेऽपि त्वयि बद्धस्नेहा इति नितान्तं श्लाघनीयासि। परं नेदं कदापि विस्मर यत्त्वया तथा वर्तितव्यमागामिषु वत्सरेषु यथा तेषां स्नेहः शुभाशंसनं शुभाशिषश्च सर्वदा त्वयि स्थिरतया तिष्ठेयुः। **जरसा यस्मिन्नहार्यो रसः** इतिवत् वर्षैरनेकैर्यस्मिन्नहार्यो भवेद्रसः तथा भावबन्धो रक्षितव्यः।

पुस्तकसूची त्वया प्रेषिता प्राप्तैव।

अन्यत् सर्वं कुशलम्। पत्रोत्तरं यथासम्भवं प्रेषय। पतिं सर्वथा सुखिनं कर्तुं प्रयतस्व। पत्युः सुखेनैव स्वयं रमस्व। इदमेव भारतीयनार्याः कृते श्रेयस्करं, विशेषतश्च संस्कृतसाहित्येन संस्कृतायाः ललनायाः।

कल्याणं भूयात्।

इति वात्सल्यनिघ्नः त्वदभ्युदयाकाङ्क्षी पिता

वि. वेङ्कटाचलम्

125

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः – डॉ.गङ्गाधरपण्डा,जम्मूनगरम्

तिथिः – 04-09-1980

आयुष्मन्,

पत्रं त्वदीयं यथासमयमेव अधिगतम्। ततः प्राक् जम्मूप्राप्तिसूचकः तन्त्रीसन्देशोऽपि प्राप्त एव। सर्वं विदित्वा महान् प्रमोदभरः सञ्जातः। साहसे श्रीः प्रतिवसति इति महाकवेरुक्तिः त्वया साधु सत्यापिता। एवमेव आत्मशक्त्या निरन्तरं पौरुषं कुर्वाणः अभ्युदयपरम्पराम् प्राप्नुहि। विद्यापीठे

यत्कार्यं त्वदधीनं निर्धारितम् तस्य सर्वस्यापि निर्वहणे समग्रां बुद्धिशक्तिं देहशक्तिञ्च विनियुञ्जानः तथा वर्तेथाः यथा तत्रत्याः कार्यनिर्वाहकाः त्वां प्रति प्रसादसुमुखाः भवेयुः। एकतः श्रद्धा अपरतः परिश्रम इति चक्रद्वयमधिष्ठायैव साफल्याख्यो रथः अग्रतः प्रसरति।

अन्ते च विशिष्टमेकं वस्तु अवधानार्हं तव। यतो हि संस्कृतभाषयैव अध्यापनं समग्रं विधेयं भवेत् यतश्च भाषाव्युत्पत्तिस्त्वदीया नैतावतापि सौष्ठवमारूढा, अत एवास्यां दिशि प्रयत्नविशेषः समास्थेयो भविष्यति। त्वत्प्रहिते पत्रे ये शब्ददोषाः तान् सर्वान् कुण्डलीकृत्य त्वत्सविधे प्रेषयामि येन स्वदोषप्रत्यभिज्ञाने काचन दिशा आसादिता स्यात्।

मत्पितृचरणानां स्थितिः तदवस्थैव यादृश्यासीत् त्वत्प्रस्थानवेलायाम्। बहु क्लिश्यन्ते क्लिश्नन्ति च। किन्तु यस्य नास्ति प्रतीकारः तस्य तथैव सहनादन्यत् नास्त्युपायान्तरम्। तत्रत्यसंस्कृतदिवसस्य मुद्रितमामन्त्रणं त्वयैव प्रेषितं प्राप्तमत्रत्यैः सर्वैरपि । शिष्टं परस्तात्। सन्तु स्नेहाशिषः।

इति
त्वदभ्युदयप्रार्थी
वि. वेङ्कटाचलम्

126

ॐ

प्रेषकः – आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी
प्रापकः – आचार्य रेवाप्रसादद्विवेदः, वाराणसी
तिथिः – 01.04.81

स्वस्ति। वाराणसीवास्तव्यान् पण्डितकवीन् सुहृद्वरान् रेवाप्रसादद्विवेदान् विज्ञापयत्यावन्त्यो वेङ्कटाचलो यथा–वाराणसीतः प्रत्यावृत्तेन मया यथासंकल्पमिह प्राप्तं स्वगृहं 1.9.81 दिने नभोमध्यमप्राप्त एव नभोमणौ। यात्रायां नासीत्कोऽपि क्लेशः।

वाराणस्यां सञ्जातेन भावुकविद्वत्समाजसमागमेन नितरां निर्वृत इवात्मा। तथापीषद् दुःखाकरोतीदं यद् इतोऽपि भूयसां सदसद्व्यक्तिहेतूनां विदुषां सङ्गत्यवसरो नासादितो यावतामस्ति सम्भावना काश्याम्। विशेषतश्चेदं सम्प्रत्यपि अनुस्मृतमपि खेदाय कल्पते यत्संस्कृतविभागीया अपि आचार्या नापारयन् सन्निधातुमुत्सवे। न खलु न जानामि क्लेशमीदृशकार्यसम्पादने। बहुतरं ज्ञातास्वादोस्मि ईदृशेष्वायोजनेषु विद्वच्छ्रोतृसमवायसम्पादनकर्मणि निहितं नानाप्रकारं क्लेशबाहुल्यम्। तत्र भवन्निष्ठं गुणानां दौरात्म्यमेवापराध्यति यदि धुर्यो भवान् प्रार्थ्यते। किं तैरसंख्यैगोगडिभिर्ये किलासञ्जातकिणैः स्वस्कन्धैरेव आत्मानं चरितार्थान् मन्यन्ते। नगरप्रतिष्ठितं योग्यं समग्रं पण्डितवृन्दं यथायस्कान्तेनेव बलादाकृष्टं भवेत् तथा व्यवस्थां सम्पादयितुं न भवान् नालमिति निवेद्यत इदं भवते। दृढं प्रत्येमि वस्तुतः त्वदन्यत्सम्भ्रमस्यास्य च्छेत्ता न ह्युपपद्यते इति।

विश्वसिमि चानेन स्तोकेन क्षोभेणैव विप्रकृतः पन्नग इव भवानवश्यं स्वं पूर्णं महिमानं प्रतिपत्स्यत इति। आगामिषु वत्सरेषु च समग्रां काशीवैदुषीं विश्वविद्यालयभवने समाकृष्य च संस्थापयिष्यतीति। आस्तामिदम्। स्वीक्रियन्तां साधुवादाः उत्सवसाफल्याय। धन्यवादाश्च मामकीनाः तत्र सन्निधानसौभाग्यसंविधानकल्पनाय।

प्रस्थानक्षणे शीघ्रतावशादवश्यकर्त्तव्यद्वयं व्यस्मारि मया। प्रथमं तावद् त्रिपाठिने प्रत्यर्पणीयमासीद् तावद् द्रव्यं यावत्तैर्गङ्गाजलपात्रक्रये गङ्गाजलानयने च व्ययितं स्यात्। मध्ये रेलयानमार्गमेतत्स्मृत्वा श्रीसोमास्कन्दमहोदयेभ्यो निवेद्यापि अन्ते यानस्य सोत्प्रेक्षितसमयाच्छीघ्रतरप्रस्थानजेन सम्भ्रमेण पुनर्विस्मृतम्। तत् क्षामये त्रिपाठिनं प्रमादस्खलितमिदं मामकम्। द्वितीयश्च तत्र अतिथिनिवासनियुक्ताय हरिसिंहाय सुमनोमूल्यं किञ्चिद्देयमासीत्। प्रस्थानकाले तस्य जनस्यान्यत्रगमनेन उपान्त्य क्षण एव प्रत्यावर्तिनेनं चेदं समजनि। यदि भवानुचितं मन्यते तर्हि तस्मा अपि पञ्चरूप्यकाणि दाप्यन्ताम्। एतत् द्वयमपि मद्ग्राह्यं यद्यवशिष्टं किमपि द्रव्यं स्यात् चेत्तत एव विनियोज्यताम्। विनियोज्य च यद्यवशिष्टं ततोऽपि भवेत् तर्हि प्रेषयतु भवान्। नोचेन्मह्यं सूचयतु येन तदुचितं प्रतिविधीयेत।

भवतो धर्मपत्नी परमेश्वरानुग्रहेण शीघ्रमेव लब्धस्वास्थ्या भवतां सारस्वतव्यापाराभ्युदयनिष्ठासु साह्यं विदधातु इति प्रार्थये। आवेद्यन्तां स्नेहसिक्ताः प्रणामाः त्रिपाठिप्रमुखेभ्यः सर्वसुहृद्भ्यः। सन्तु प्रणामाः सादराः भवते च।

पुनश्च। नेपालीये विदुषे श्रीमदात्रेयाय तदपेक्षितं पत्रं प्रयागतः प्रेषितमासीत्। किं तेन प्राप्तमुत नेति निवेदयतु भवान्।

वि. वेङ्कटाचलम्

127

ॐ

प्रेषकः — श्रीनिरञ्जनदेवतीर्थस्वामी
प्रापकः — आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी
तिथिः — 17-06-65

श्रीमत्सु वेङ्कटाचलम्महोदयेषु नारायणस्मरणाशिषः। श्रीमतां काचिच्छिष्यात्रागत्य सुखं स्वेप्सितविषयविज्ञानं सम्पादयतु। वाष्पयानविश्रामस्थान एव यस्मै कस्मैचिदपि वाहनचालकाय मया शङ्कराचार्यमठे गन्तव्यमिति निवेदिते सति सोऽस्मन्मठपर्यन्तमानेष्यत्यनायासेन।

अस्मन्मते काव्यत्वन्नैतिहासत्वबाधकमपितु साधकमेव। रामायणमहाभारतादिषु काव्यत्वस्यैतिहासत्वस्य च युगपदुपलभ्यमानत्वात्। रामायणं तु सन्नपीतिहासो महाकाव्यत्वं भजत्येव। ऐतिहासिकेषु काव्येषु कल्पना न्यूना सत्यश्चाधिकमिति मन्तव्यमेवान्यथा

रामायणमहाभारतप्रसूतकथानां काल्पनिकत्वापत्तेः। सोऽयं सर्वोऽपि विषयोऽत्रागतायै भवच्छिष्याया उपदेक्ष्यते विस्तरेण सशङ्कासमाधि। सुखमत्रागच्छतु सा। सम्पादयतु च स्वेष्टविषयज्ञानमिति श्रीनिरञ्जनदेवतीर्थस्वामिनः।

128

ॐ

प्रेषकः — आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः — श्री के. एम. बालसुब्रह्मण्यम् (जगद्गुरुशङ्कराचार्यस्य सचिवः), नवदेहली

तिथिः — 31-07-82

श्रीमदाचार्यपादानां महासन्निधानस्वामिश्रीचरणानां सन्निधानस्वामिश्रीचरणानाञ्च पदकमलयोः भगवन्नारायणमन्त्रोच्चारपूर्वकं मनसा त्रिः प्रणिपत्य सप्रश्रयं विज्ञापयति शिष्यो वेङ्कटाचलशर्मा यथा – श्रीचरणानामाज्ञया प्रेषितं पत्रं यथाकालं समासादितमेव। झटित्येव तदुत्तरयितुं नापारयमित्यपराद्ध–मात्मानं भावये। श्रीचरणैः क्षन्तमात्मानमिच्छामि।

मदुपज्ञस्य विकटभोजप्रहसनस्य विषये श्रीचरणैः प्रयुक्ताभिराशीर्भिः कृतिरसौ सत्यं धन्या समजनि। यथाशक्ति शीघ्रमेव तां पूर्णां विधाय प्रकाशयितुमभिलषामि। प्राकाश्यमुपयाते तस्मिन् श्रीचरणकमलयोः ध्रुवं समर्पयिष्यामि।

ऐषमः प्रवर्त्स्यति श्रीमहागणपतिसभाधिवेशने नूनं भागं जिघृक्षामि। मद्विवक्षितं शास्त्रार्थविषयमागमनतिथिश्च परस्ताद् निवेदयिष्यामि। अन्तिमेषु त्रिचतुरदिवसेषु सभायाम् उपस्थातुं प्रयतिष्ये। अतोधिकमवस्थानं दुष्करं सम्भाव्येत।

मदुचितं यत्किमपि कार्यजातं श्रीचरणाः अनेन जनेन कारयितुमिच्छन्ति तत्र सज्जस्तिष्ठत्येष जन इति निवेदये।

श्रुत्वा श्रीचरणाः प्रमाणम्।

इति श्रीमठसेवातत्परः

वि. वेङ्कटाचलम्

129

ॐ

प्रेषकः — आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापकः —श्रीशेषाद्रिनाथशास्त्री, मद्रासनगरम्

तिथिः — 31-03-1984

स्वस्ति। उज्जयिनीतो लिखति वेङ्कटाचलशर्मा ब्रह्मश्रीशेषाद्रिनाथशास्त्रिभ्यः संस्कृतकलाशालाप्राचार्येभ्यः सप्रणामं यथा–

मन्ये भवतां नायञ्जनो नापरिचितः। स्मरन्ति चेमम्। भवन्तः प्राचार्यपदेऽभिषिक्ता इति शुभोदन्तोऽस्माभिः श्रुतचर एवास्मन्मित्रस्य जयपुरवास्तव्यस्य डॉ. रामचन्द्रद्विवेदस्य मुखात् डॉ. स्वामिनाथस्य मुखाच्च। समासादितं च गते मासे भवद्भिः प्रहितं वार्षिकमहोत्सवामन्त्रणम्। किन्तु उत्सवदिवसात्परं दिनस्य विलम्बेन तत्प्राप्तमिति नोत्तरप्रेषणे व्यापारित आत्मा।

सम्प्रति विश्वविद्यालयानुदानायोगेन राष्ट्रियव्याख्यातृपदनियोजनेन सम्मानितोऽहमैषमः। तत्प्रसङ्गेन च मद्रपुरीकलाशालायाः संस्कृतविभागे व्याख्यानानि चत्वारि समायोजितानि 6.4.1984 दिवसात् 9.4.1984 दिवसपर्यन्तम्। अस्य कार्यक्रमस्य पुष्टिः प्रतीक्ष्यमाणास्ते। इतो 4.4.1984 दिने प्रस्थाय 6.4.1984 दिने प्रातः प्राप्स्यामि मद्रपुरीम्। यदि कार्यान्तरानुपरोधः स्याद्यदि च सुकरं भवेद्भवतां काङ्क्ष्यामि तदन्तराले एव साहित्यविषये मया कृतानां नूतनविमर्शविषयाणां मध्ये कांश्चिद् विषयानाश्रित्य तत्रत्यानां छात्राणां विदुषां च पुरस्तात् विधातुं त्रिचतुराणि भाषणानि। यदीदमभिमतं भवेद्भवतां तर्हि सज्जोऽहं सम्पादयितुं कृत्यमिदम्। निवेदनं परं कर्तव्यं मामकीनं निर्णयस्तु भवदधीनः। यदि मनोरथोऽयं मामकीनः समियात्सिद्धिकायं तर्हि संस्कृतकलाशालाया मातृकल्पाया यत्पुत्रवात्सल्यमादर्शितं पूर्वं तस्य निष्कृतिलेशकरणेन भावयिष्यामि कृतार्थतातोषम्।

व्याचिख्यासिता विषयास्तावदिमे—(1) आलङ्कारिकैरलक्षितचरो नूतनः कश्चिच्छब्दालङ्कारः। (2) माघीया शब्दकोशवैदुषीप्रकाशनसुषमा—काचिदभिनवसूक्ष्मेक्षिका। (3) कुवलयानन्दे क्वचिद् दीक्षितेन्द्रमतविषये पुनश्चिन्तनम्। (4) कालिदासीयसन्दर्भाणां केषाञ्चित् नवा सूक्ष्मेक्षिका।

प्रार्थये पत्रस्योत्तरं प्रेषितं सत्वरं मदीये मद्रपुरीस्थनिवासे येन मद्रपुरीप्राप्तिसमनन्तरमेव ज्ञातं भवेन्मम ...।

इति भावत्कः

वि. वेङ्कटाचलम्

130

ॐ

प्रेषकः — आचार्यवेङ्कटाचलम्, उज्जयिनी

प्रापिका — डॉ. पुष्पा त्रिवेदी, बिलासपुरम्

तिथिः — 02-01-1985

कामं निसर्गतः क्लीबं पुष्पं नारीयतु क्वचित्। नारीभूय च सा पुष्पा सृजत्वग्निशिखामपि।।1।।

किन्त्वेषाग्निशिखा दग्धचित्तादस्या विनिःसृता। धर्षित—क्लिष्ट—संघृष्ट—प्लुष्ट—भर्जित—शोषितात्।।2।।

कथं विदग्धचित्तेषु जायते पुनरद्भुता। लोल—कल्लोल भावार्द्रपुष्पासारपयःस्विनी।।3।।

स्वस्ति। कविताधन्यां मान्यां श्रीमतीं त्रिवेदोपनाम्नीं पुष्पां सस्नेहमभिनन्द्यावेदयति उज्जयिनीवास्तव्यो वेङ्कटाचलशर्मा। चिरायैव भवत्या प्रेषितमग्निशिखोपहारं सपत्रं संप्राप्य काव्यञ्च भावत्कमनुवाच्य मुदमवाप्नवं महतीम् किन्तु कार्यान्तरव्यग्रतया सद्यः प्रेषयितुन्नाशक्नवमुत्तरम्। मध्ये च चिराज्जागरितं सकृन्मनः। ततश्च व्यासृजं पत्रमेकं द्राघीयसा विलम्बेन अभिप्रायप्रेषणं कस्मा अपि प्रयोजनाय कल्पिष्यते न वेति जिज्ञासमानः। अत्रान्तरे भवत्या प्रेषितं स्मारणपत्रं समागान्माम्। ततः प्रत्यभान्मामकं पत्रं नापद्ध्वस्तं भावत्कम्। यथाकथमप्यास्ताम्। सम्प्रति प्रेषितमनुष्टुप्त्रयं यथेप्सितं प्राकाश्यं नीयताम्। अत्रापि जात एवेषद्विलम्बः। प्रार्थये मर्षयतु भवती। भगवती वाग्देवी पुष्णातूत्तरोत्तरं कवितविलासं भवत्या इति प्रार्थये।

पुनश्च। सूक्ष्मेक्षिकया केचन भागा एव वीक्षिताः। तत्र च कदाकदाचित् केचिच्छन्दोभ्रंशाः दृष्टाः। क्वचिच्च अपाणिनीयाः प्रयोगा अपि शङ्कापदमवतीर्णाः। परन्तु भवती पाणिनीये शास्त्रे नदीष्णेति जानानः किञ्चित्संकुचामि आवेदयितुं यतो वयं तावन्न तस्मिन् शास्त्रे तथा कृतावगाहाः। यथा 'हृदयस्य गृहं ज्वलितम्' इति काव्यभागे 'समतिक्रमते' इति क्रमेरात्मनेपदप्रयोगः परिसुप्तमित्यत्र षत्वाभावश्च विमृश्येयताम्। यदि प्रयोगः साधुस्तर्हि जनोऽयमपि शिक्ष्यतां येन याथार्थ्यं जानीयादयमपि। 'रविना' इति णत्वाभावस्तु मन्ये 'मुद्राराक्षस' एव स्यात्। अस्मिन् काव्ये तृतीयचतुर्थपञ्चमपद्यप्रथमपादान्ते छन्दो भज्यते (अक्षरमेकमधिकं यत् द्वितीयपादादौ योजनीयं स्यात् तेन च पदमध्ये पादभङ्गः)। ईदृशी स्थितिर्द्वादशपद्यतृतीयपादे च दृश्यते उपान्त्यपद्यतृतीयपादे विद्यमानोऽपि दोषः केवलं मुद्रणपरिवर्तनेनैव सुशोध्यः स्यात्। इत्थमेन भवत्या सूक्ष्मेक्षिकया सर्वं विमृष्टव्यं येनाग्रे निर्दोषतां नीयेताग्निशिखा।

वि. वेङ्कटाचलम्

परिशिष्टः

राष्ट्रपतिसम्मानितान् आचार्यशिवदत्तशर्मचतुर्वेदान् प्रति

विदुषां भावोद्गाराः

1. पण्डितबटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी

गिरिधरबुधमौलेर्लब्धजन्मा कवीन्द्रः शिवपुरि शिवदत्तः शुद्धचित्तश्चकास्ति।
यदुदितरचनासु श्रीसरस्वत्येव नूनं रजयति निजवीणामाधुरीं साधु रीतिम्।।1।।
गुणगणपरिणतकीर्तिः सुविहितनानानिबन्धसम्पूर्तिः।
सुधियां सहजवयस्यः शिवदत्तो भातु भारते सततम्।।2।।
अभिनवपरिमलमिलितैर्विबुधमिलिन्दैरमन्दमास्वाद्यम्।
शिवदत्तसुकविलसितं तुलसीशतकं चिरं जीव्यात्।।3।।
सालङ्कारा सरसा भक्तजनानन्दमादधती।
तुलसीशतकविनिर्मितिरुदयतु सुयशोविभूषितभुवने।।4।।



2. पण्डितरतिनाथझा, वाराणसी

निस्सङ्गो विषयेषु कर्मनिरतो गीताविवेकप्रदो, नेतृत्वं सुकृतात्मनां सुमनसां क्षेमाय सन्धारयन्।
कर्त्तव्याद्विमुखं विमोहवशगं प्रोद्दीपयन् भारतं, तत्त्वज्ञानविदांवरो गिरिधरः शर्माणि नः साधयेत्।।1।।

आचार्यान्मधुसूदनादभिनवां व्याख्यां समाख्यादराद्,
आम्नायार्थनिरूपणे निरुपमा रीतिः समासादिता।
तेनाश्रान्तपरिश्रमेण विदुषा श्रीमच्चतुर्वेदिना,
स्वीयोपाधिरतीव सार्थकतमः सम्पादितो विद्यया।।2।।

शास्त्रार्थेषु जयश्रिया तिलकितो मन्त्रान् पठन् वैदिकान्,
विज्ञानाभिमतार्थबोधनपटुः श्रीसंस्कृतिं पालयन्।
नव्यं भव्यतमं सनातनमतं पुष्णन् नवीनोर्जया,
सत्कीर्त्या प्रथयन् स्वधार्मिककुलं लोकोत्तरो योऽभवत्।।3।।

विज्ञानप्रतिपत्तिसम्मतनवं वेदार्थमुद्भावयन्, जिज्ञासूनभिनन्दयन् सुमनसः सौरभ्यमुत्कर्षयन्।
श्रौतीं संस्कृतिमुत्तमां प्रवचनैः संस्थापयन्नन्वहं, लोकेऽलौकिकमेधया गिरिधरो विद्वत्सु सम्पूजितः।।4

तपस्विनो ज्ञानधनस्य वाग्मिनो, यशस्विनः सद्गुरुकीर्तिशेवधे।
मनस्विनः पुण्यपरायणत्विषः, पितुः प्रियः पुत्रवरो विराजते।।5।।
क्रियासु दाक्ष्यं तरुणेषु तन्वन्, प्रमादमन्तर्हृदयान्निरस्यन्।
सुधां सदा काव्यरसे विमिश्रयन्, जयत्युदारः शिवदत्तशर्मा।।6।।

सोत्साहो विनयी नितान्तमधुरो नैसर्गिकः शीलवान्,
प्राज्ञः पण्डितमानिनां सुनिकषः सल्लेखकः कीर्तिमान्।
प्रत्युत्पन्नमतिः प्रसन्नवदनो विद्यावतां प्रेरकः,
प्राचार्यः शिवदत्तशर्मविबुधाधीशश्चिरं जीवतात्।।7।।

रत्नाकरो जयति दुर्लभसन्मणीनां कीर्त्त्या सितीकृतदिगन्तरसो विभाति।
सौजन्यशेवधिरनर्घगुणाभिरामो, वैदुष्यभूष्यवचनः शिवदत्तशर्मा ।।8।।
मैत्रीं धृतिं प्रमुदितां हृदि सन्दधानो, मानोन्नतिस्रजमुरस्यवलम्बमानः।
अध्यापने जयति सत्कविताविताने प्रामाणिकप्रवचने शिवदत्तशर्मा।।9।।
यः पाणिनीयनिगमे कविकर्मदाक्ष्ये, काव्यागमे रुचिरलेखनकौशले च।
अध्यापने ललितमुद्रणशिल्पकल्पे, धर्मादिसत्प्रवचनेऽनुपमश्चकास्ति।।10।।
लोकोत्तरप्रणयवानपि मुक्तरागं, गेहे वसन्नपि सदैव विविक्तसेवी।
बद्धोऽपि सद्गुणगणेन निरावृतान्तर्विद्याव्रतोऽपि जयति व्यवहारदक्षः।।11।।
आत्मानुशीलनविधौ पितुरात्तदीक्षो, दर्पान्धसिन्धुरविपक्षभयाय सिंहः।
काव्यानुशासनविबोधनलब्धकीर्तिर्जीव्याच्चिराय शिवदत्तकवीश्वरोऽयम्।।12।।
नीराजयन्ति कृतिनो विविधागमेषु, यस्य प्रशस्यरचनार्चितलेखनीं याम्।

तस्याभिनन्दति निबन्धनिबन्धनेषु, को नानवद्यकृतिसत्कृतये मनस्वी?॥13॥
प्रीतिं निसर्गरमणीयतमां बिभर्ति, नीतिं निभालयति सज्जनचन्दनानाम्।
रीतिं समर्चति सतां विदुषां मुनीनां,भीतिं विमुञ्चति दुरात्मजनादुपेताम्॥14॥
अभ्यर्चयन्ति सुधियः शुभलेखनीं तां येयं सुवर्णनिवहैरिह वाङ्मयं नः।
वृद्धं समृद्धमलिचारुविचाररत्नैः, सम्मण्डितं कृतवती विषमेऽपि काले ॥15॥
यश्चोत्तमानि शतकानि बहूनि सद्यो, निर्माय काव्यमितरच्च गुणानुबन्धि।
निर्माय मात्रयशसो महसा दिगन्तान्, रम्यांस्तथा वितिमिरान् कुरुते प्रकृत्या॥16॥
स्मेराननोऽपि मधुरोऽपि दृढव्रतोऽपि, सौजन्यशेवधिरपि प्रियबान्धवोऽपि।
दैन्य – प्रवञ्चन – कदर्य –कथानुवृत्तिं, नाङ्गीकरोति परिवारकदर्थितोऽपि॥17॥
संसत्सु यः सुमनसां मधुरैर्वचोभिर्हास्यच्छटामभिनवामुपदीकरोति।
श्रोता विमुग्धहृदयो हसितं विकृण्वन्,लोकोत्तरं किमपि कौतुकमातनोति॥18॥
यः प्रावृषेण्यनिविडाम्बुदमालिकासु , ग्रीष्मोऽपि पूर्णतरुणेऽपि च सस्मितास्यः।
राकासु दर्शरजनीष्वपि तुल्यकान्तिर्बभाति स द्विजपतिर्भुवनं पुनानः ॥19॥
विद्यालता शिवतरुं परिरम्य पुष्पैरामोदमेदुरमरन्दकरम्बिताऽऽस्ते।
मुग्धा यतो मधुकरा मधुरा मधौ तु, गायन्ति गीतमविगीततमस्वरेण॥20॥



3. पण्डितवायुनन्दनपाण्डेयः, वाराणसी

श्री– श्रीलो गिरिधरशर्मा महामहोपाध्यायश्चिरं जयति।
यद्वंशमौक्तिकमणिः शिवदत्तो गिरं रञ्जयति॥1॥

शि– श्रेयः संदिशताच्छिवः सुरगिरां संवर्धने शैशवात्,
संसक्ताय सुमेधसे सहजया शक्त्या समृद्धात्मने।
सद्यः सूक्तिसुधाकरे सुकवये साहित्यशास्त्रश्रिये,
शश्वत् श्रीशिवदत्तशास्त्रिसुधिये संवित्सरोजन्मने ॥2॥

व– वाचाऽऽशासु समुत्सृजन्सुविशदं सारस्वतं सौरभं,
काव्यं कर्णरसायनं सहृदय– प्रीतिप्रदं संसृजन्।
शिष्याज्ञानतमस्ततिं विघटयन् ज्ञानाब्जमुद्भासयन्,
सूराभः कविभारतीपरिषदं सम्भूषयन् भ्राजते॥3॥

द– दक्षश्चारुचरित्रचित्रणविधौ संख्यावतां मण्डले,
पारे सप्तति संविधाय शतकान्यार्यांकविः ख्यातिभाक्।
शास्त्रेऽधीतिरनुत्तमा बुधकविभ्राजिष्णुवंशोद्भवः,
तत्त्वज्ञो विनयी मृदुर्मधुरवाक् भूमण्डले भ्राजताम्॥4॥

त्त– तस्य कमनीयकीर्तिः, प्रकाशयतु राजमण्डलं सुतराम्।
सुमनोमनोऽभिरामा निरवद्या सदोदिता भातु।।5।।

✻

4. पण्डितवासुदेवद्विवेदः, वाराणसी

श्रीशिवदत्तचतुर्वेदमहोदयैः पुनरपर एव पन्थाः स्वीकृतः, अन्यदेव च उद्देश्यं स्वीकृतम्। एते साहित्यशास्त्रानुशीलने, ग्रन्थसम्पादने प्रबन्धलेखने काव्यनिर्माणे च स्वकीयं कौशलं प्रदर्श्य संस्कृतविद्वत्समाजे श्लाघनीयं स्थानमलभन्त। एभिरनेकानि महाकाव्यानि लघुकाव्यानि शतकानि सहस्राधिकाश्च स्फुटाः कविताः निरमीयन्त येन संस्कृतसाहित्यस्य पुष्पोद्यानं नितरां सुशोभितं रसिकजनानां च कृते लोभनीयं समजायत।

श्रीशिवदत्तचतुर्वेदमहोदया आर्याछन्दसः प्रयोगे सविशेषं सिद्धहस्ता इति सर्वैरपि तेषां पाठकैर्मुक्तकण्ठं स्वीकर्तुं शक्यते। आर्याश्च एतेषां सर्वा अपि उत्तमकाव्यगुणोपेताः शब्दार्थयोः समानरूपेण रमणीयतां व्यञ्जयन्ति। अतः

सरसा सालङ्कारा सुपदन्यासा विचित्रपदललिता।
आर्या तथैव भार्या न लभ्यते पुण्यहीनेन।।

इत्युक्त्यनुसारं नूनमनूनपुण्यवन्तः श्रीचतुर्वेदमहाभागा इति निःसंशयं वक्तुं शक्यते।

श्रीमन्तश्चतुर्वेदमहाशयाः न केवलं विनोदनैव तुष्यन्ति, प्रत्युत एतेषां हास्येऽपि – तत्रापि उन्मुक्तहास्ये अट्टहास्ये चापि महती प्रवणता दरीदृश्यते सर्वत्र।

✻

5. पण्डितजनार्दनशास्त्री पाण्डेयः, वाराणसी

विश्वविश्रुतवैदुष्यं भारतीयसंस्कृतेः सनातनधर्मस्य च मूर्तिमत्स्वरूपं महामहोपाध्याय-गिरिधरशर्मचतुर्वेदं को न जानाति, यदा ते अष्टादशपुराणानां भूमिकामलिखन् तदा तत्सन्निधावुपविश्य कार्यकरणावसरो मयाऽपि लब्धः, तदानीमेव श्रीशिवदत्तशर्मणा परिचयो जातः। प्रायः संस्कृतविदुषां पुत्राः संस्कृतं न पठन्तीति प्रचलितं प्रवादं मिथ्यापयताऽनेन विदुषा प्रदर्शितं योग्यस्य पितुः योग्यपुत्रत्वम्। अध्ययनेऽध्यापने वक्तृत्वे कवित्वे ग्रन्थनिर्माणे च यादृशी प्रतिभाऽनेन प्रदर्शिता सा स्पृहणीया समेषाम्। स्वभावेन सरलः, मृदुभाषी, विनम्रः, हास्यप्रियोऽपि गम्भीरचिन्तकः श्रीशिवदत्तशर्मा दीर्घायुष्यं लब्ध्वा पितुरिव संस्कृतवाङ्मयस्य बहूपकरिष्यतीत्याशास्ते।

✻

6. पण्डितकपिलदेवपाण्डेयः, वाराणसी

ऋजवे सुहृदे नित्यं शिवदत्ताय नमो नमः।

इहानेके सन्ति प्रथितयशसः केऽपि विबुधाः, धनार्थं कीर्त्यर्थं कृतकसुरवाणीप्रणयिनः।
कियन्तस्ते ये वै सहजशुभसाहित्यकृतिनो विना स्वार्थं सत्यं सुकविशिवदत्तेन सदृशाः ॥1॥
संस्कृतभाषोन्नत्यै निर्व्याजं प्रयतमाना ये। सुहृदस्ते शिवदत्ताः शर्माणः प्राप्नुयुः शर्म॥2॥
आस्ये खेलति हास्यं लास्यं तनुतेऽट्टहासश्च। आर्या येषां प्रेष्ठा श्रेष्ठा विदुषां चतुर्वेदाः॥3॥
ये खलु सुहृदां सुहृदो निरहङ्कारा मनस्विमूर्द्धन्याः ।
धन्याः कविभारत्याः भरतास्ते पूर्णकामाः स्युः॥4॥
यस्य वचसि वैदग्ध्यं व्यवहारे चार्जवं सदाऽमन्दम्।
शिवपुर्यां शिवदत्ताल्लब्धोत्कर्षाद्वदान्यः कः ॥5॥
प्रह्वः प्रणमति शिरसा, मित्राग्रगण्यमेष शिवदत्तम्।
'कपिलः' कामयते च, स्मर्तव्यो ऽयं जनः सततम् ॥6॥

✻

7. आचार्यरेवाप्रसादद्विवेदः, वाराणसी

मार्गे सनातनाख्ये भुक्त्वा भुक्तिं प्रसाधयति तुलसीदासः सुकविर्वज्रशरीरो महापरिघः।
तस्य प्रत्यक्चेतनबिम्बितबिम्बस्य तीर्थराजस्य आर्या तुलसीशतकं शर्मचतुर्वेदकृतिरर्च्यम् ॥1॥

✻

8. देवर्षिकलानाथशास्त्री, जयपुरम्

जयपुरनगरीशुक्तेर्मुक्तैका प्रोषिता काश्याम्,
विलसत्याचार्यपदे हिन्दूविश्वविद्यालयाख्यगुरुपीठ।
मद्बन्धुः शिवदत्त एष सुकविः सौजन्यवारांनिधिः,
साहित्याम्बुधिमन्दराद्रिरतुलः काशीप्रवासोज्ज्वलः॥1॥
विश्वद्रयं च मुदं चयन् गिरिधरप्रख्यस्य विद्वन्मणेः।
कीर्तीनां किरणौघमश्लथवचा जीव्यात् सहस्रं समाः॥2॥
श्रीशिवदत्तं सुहृदं सादरमभिनन्दनैः सभाजयति।
जयपुरनिवासिमथुरानाथतनूजः कलानाथः ॥3॥

✻

9. पण्डितशिवजी उपाध्यायः, वाराणसी

येनाध्यायि सदा हृदा सुरगवी पुण्यप्रकर्षोज्ज्वला

येनाधायि धिया निवारितभिया सर्वत्र नैजास्पदम्।

येनाकारि सुचारुकाव्यमनिशं सानन्दमन्तर्दधत्,

सोऽयं श्रीशिवदत्तशर्मसुकविः साहित्यव्योम्नो रविः ॥1॥

आर्यानर्गलनिर्गलन्नवनवच्छन्दोवितानोच्छलच्चातुर्यप्रवणा च तुर्यपदवी लब्धा चतुर्वेदिना।

काव्यं येन सुवेदवद् हृदि मुदा नक्तन्दिवं बिभ्रता,

स्वोपाधिश्चरितार्थितः स हि चिरं शैवं महो विन्दताम्।।2॥

यस्यासीज्जनको जगत्सुविदितो विद्वद्विभूषामणिः, सम्भूतो गिरिशो यथा गिरिधरो विद्याविनोदप्रियः।

तच्छर्मप्रतिशर्मतो धृततनुर्दत्तश्च साक्षात्पुरः, पुत्रत्वेन शिवेन शैशवमगादात्मैव सोऽयं सुधीः।।3॥

स्मेरास्योल्लसदन्तरङ्गविकसच्चेतोऽवदातप्रभोद्भासि स्वान्तसुनिर्मलच्छविकविः को वा चतुर्वेदिवत्।

क्वासौ काव्यकलासहासरसिक–स्निग्धो विदग्धो

बुधोपान्तप्रीतिमुचा रुचा प्रतिसमं सम्भासतां यः सताम्।।4॥

लब्ध्वा शताधिकतरायुरयं मनस्वी, सत्काव्यसृष्टिकृदवाप्य यशो यशस्वी।

सौख्यश्रियोन्नतमनाविलजीवनं स्वं, सन्दीपयन् दिशि ध्रुवमुच्चकास्तु ॥5॥

काव्यं नव्यमनेकं निर्व्यूढं पञ्चगव्यमिव येन, सहृदयहृत्कमनीयं जयतितरां शिवदत्त एष सुकविः॥6॥

*

10. पण्डितमिश्रोऽभिराजराजेन्द्रः, शिमला

वाग्देवताकरसरोरुहलालिताङ्गो, दीप्त्या चरित्रविभया घनसारशुभ्रः।

गोष्ठीरसामृतविधुस्मितशोभिवक्त्रो जीव्यात्तुरीयनिगमश्शिवदत्तशर्मा॥ 1 ॥

आनन्दकाननसमेधितपारिजातो । गौरीहरोभयगृहीततृतीयपुत्रः।

नित्यं लसद्गिरिधराङ्घ्रिरतिर्बुधेन्द्रो। जीव्यादरातिरहितश्शिवदत्तशर्मा ॥ 2॥

सारस्वते तपसि दत्तमना मनस्वी । सर्वोदयाय नितरां विहिताभिलाषः।

बान्धव्यसिन्धुशफरः कवितावधूटीसौभाग्यभालतिलकश्शिवदत्तशर्मा ॥3 ॥

*

11.पण्डितरामकरणशर्मा, देहली

शिवदत्त एष लोके सरलं पन्थानमाश्रयति, किन्तु ।

सौन्दर्यसर्जनविधौ वक्रः पन्थाः सदैवास्य॥1॥

शर्माऽसौ कामयते शिवं समेषां महाशयः, किन्तु।

न दिदृक्षतेऽपि घटनां कृत्रिमकुसुमस्रजामासाम्।।2॥

स चतुर्वेदीचतुरः साङ्गान् वेदान् दधाति हृदि, किन्तु।
न स चतुरो न च लौकिकपरिग्रहकलां कलयति बुधः॥3॥
जयति सहृदयशिरोमणिरेष महाकविरनेकशास्त्रधनः।
रमणीयाया भणितेर्जयति स चतुराननो रसिकः॥4॥

*

12.पण्डितरवीन्द्रनागरः, देहली

साहित्यसंस्कृतिकलाकवितासु दक्षः, श्रीमान् श्रुतो विश्रुतशुक्लशीलः।
पुत्रोऽपि विश्वविदितस्य महाश्रुतस्य जीयाच्चिरं प्रियवरः शिवदत्तविज्ञः॥1॥

*

13. पण्डितचन्द्रकान्तः दवे, देहली

पितृव्यः पूजनीयश्च गुरुभ्राता च मे मतः। शिवदत्तसुधीः धीमान् साहित्यार्णवतारणः॥1॥
वेदवेदाङ्गनिष्णातः पाणिनीयेऽपि पूर्णधीः। शिवेन दत्त एवायं वरो गिरिधरात्सुतः॥2॥
चतुर्वेदाग्रगण्यश्च प्रतिवादिभयङ्करः। शास्त्रार्थधुरि धौरेयः सर्वशास्त्रविचक्षणः॥3॥
प्रज्ञां नवनवोन्मेषशालिनीमाशु बृंहयत्। शतावधानी कवयन् राजते दिव्यकाव्यकृत्॥4॥
मनोज्ञः मधुरो वाचि वाग्मी प्रियविनोदनः। शास्त्रव्याख्यानविख्यातः शिवः सर्वहिते रतः॥5॥

*

14. पण्डितमनुदेवभट्टाचार्यः, वाराणसी

आर्याचरणनिषण्णोऽप्यार्याचरणसमाश्रयश्रमादयः।
आर्याऽचरणविलासी सार्यः शिवदत्तकविर्जयति॥1॥
गोस्वामितुलसीदासं कविता–वितानदासीकृतभुवनम्।
बबन्ध तूर्णं स्वगिरा गिरामधीशं सुधीर्धीशम्॥2॥
यद्भद्रामचरित्रं गोस्वामिकृतं भुवने खलु विततम्।
तद्वत्तस्य चरित्रं शिवदत्तकृतं प्रथतादधि भुवि॥3॥

*

15. पण्डितइच्छारामद्विवेदः, मैनपुरी

सदा विद्याभ्यासे प्रवचनविधौ काव्यरचने, विनेयानां मध्येऽप्यमितगरिमाणं वहति यः।
सभागोष्ठीसत्रप्रथितमहिमः सोऽस्ति विबुधः चतुर्वेदो धीमान् जगति शिवदत्तो विजयते॥1॥
सितं रम्यं वर्णं रुचिरतरताम्बूलदशनो, मुखे मन्दं हास्यं नयनयुगले दिव्यकरुणा।
सदाऽऽर्यासंसक्तो विहरति प्रसन्नेन मनसा, चतुर्वेदो धीमान् जगति शिवदत्तो विजयते॥2॥

*

16.पण्डितशशिधरशर्मा, चण्डीगढ़

धर्मोद्धृत्यै पुनरुपगताज्जन्म लब्ध्वा विभूम्रः (?) कुन्दस्मेरां व्यतत भुवने कीर्तिमभ्रङ्कषां यः।
धैर्यौदार्यप्रणयनयभूः शश्वदुत्साहधाम वाणीभूषाः स शिवसुकविः कस्य शस्यो न नाम॥1॥
प्राप्तं सर्वं भुवनमहिश्रीगुरोः गुरोः(?) सम्प्रसादादेक यत्स त्रिपुरमथनादर्थनीयन्तथापि।
आरूढो यत्ततदनुविहितां शाश्वतीं धर्मपद्यां सान्द्रानन्दः शतमतितरस्त्वं सतो मोदयस्व॥2॥



17. पण्डितविन्ध्येश्वरीप्रसादमिश्रः वाराणसी

वाग्देवीवदनोल्लसद्रसभराञ्छब्दान् तथार्थान् गुणान्,
रम्यालङ्कृतिकल्पकल्पनयुतान्पद्यान्सुवृत्तान्वितान्।
यो भङ्ग्या स्मितलीलया प्रतिपदं प्रोद्भावयत्यञ्जसा–
ऽसौ काश्यः शिवदत्तशर्म्मविबुधो वन्द्योऽभिनन्द्यस्सदा॥1॥
पुण्यश्लोकमणेर्गुरोर्गिरिधरप्रख्याप्रभाभास्वरे
सद्यः काव्यकलापकल्पनकलाश्रीभारती भासिते।
ताम्बूलारुणशोभनाधरधरे धन्ये वदान्ये गुरौ
शर्म्माख्ये शिवदत्तकीर्तितपदे को वा न यो रज्यते ॥2॥



18.पण्डितरमेशचन्द्रः पण्डा, वाराणसी

कविताकामिनी वक्ति चतुर्वेदो ममानुगः। विद्वत्ता क्रोधसंयुक्ता भाषते परुषं वचः ॥1॥
दुष्टे त्वं कविते मिथ्यावादिनि किं न लज्जसे। ममानुगं वशीकर्त्तुम् ईहसे सततं हृदा ॥2॥
जानामि परमं सत्यं तयोर्न विदितं शृणु। विद्वत्तां कविताञ्चैव रमते सः पृथक्–पृथक्॥3॥



19. पण्डित उपेन्द्रपाण्डेयः, वाराणसी

ताम्बूलं मुखशोभि वाङ्मधुरिमामाधारयन् राजते, शान्तो दान्त उदारमञ्जुलगुणः शिष्यौघसद्वत्सलः।
साहित्याम्बुधिपारगः कविवरः सद्ग्रन्थसम्पादकः विज्ञः श्रीशिवदत्तशर्मविबुधो मोमुद्यतां सर्वदा॥1॥



20. पण्डितशिवरामशर्मा, वाराणसी

सस्मितवदनविराजितताम्बूलरामरञ्जितास्योऽसौ।

विमलाम्बरं वसानः शिवदत्तः विबुधाग्रणीर्जयति॥1॥

वाराणस्यां कवयः नवाः यद्यपि बहवो विराजन्ते।

किन्तु विना शिवदत्तं कविसमवायो न पूर्णतामेति ॥2॥

मार्गे त्रिचक्रयाने गंगातीरेऽथवा चरन् प्रायः ।

योऽसौ कवितामग्नः सः शिवदत्तो विबोद्धव्यः ॥3॥

गिरिधरशर्मतनूजः दीपाद्दीप इवोद्योतितः स्निग्धः।

शिवदत्तः शुचिव्रतः काश्यां कविपुङ्गवो विभाति॥4॥

सर्वास्वाद्यरसोपेता नानारूपातिशर्मदा।

आर्या शिवदत्तस्य भार्या वा शेषशायिनः॥5॥



21. पण्डितशरदिन्दुकुमारत्रिपाठी, वाराणसी

नवसंस्कृतसाहित्य – निर्माणे ख्यातकीर्तयः ।

शिवदत्तचतुर्वेदाः जयन्ति विदुषां वराः॥1॥

सान्निध्यमेषां समवाप्य शिष्यः, ज्ञानस्य धत्ते परमां समृद्धिम्।

बिभर्ति सौगन्ध्यमभूतपूर्वं, वृक्षो वने चन्दनपार्श्ववर्ती॥2॥

काव्यान्यनेकानि मनोहराणि, विलिख्य नानाविषयाश्रितानि।

कृते कविभ्यः कृपया युवभ्यः, निरूपितं काव्यविधानशिल्पम्॥3॥

सौभाग्यमेतत् परमं ममासीत्, सान्निध्यमेषां यदहं प्रपन्नः

तेषां कृपायाः फलमेव यन्मे, साहित्यशास्त्रे समभूत् प्रवेशः॥4॥

वैदुष्येऽप्रतिमाकवित्वरचना चातुर्यपारं गता,

शश्वद् व्यंग्यविनोदहास्यविषये विख्यातिभाजश्च ये।

तेषां श्री शिवदत्तशर्मविदुषां, पादारविन्दद्वये,

भूयान् मे नति भक्ति–भाव–भरितो भूयः प्रणामाञ्जलिः ॥5॥



आचार्य रामचन्द्र द्विवेदी ग्रन्थमाला

1. **कालिदास के काव्य में सादृश्येतर अलङ्कार**
   लेखक : डॉ. विष्णुराम नागर, सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, प्रशान्त प्रकाशन, वाराणसी, 1995
2. **तन्त्रालोक में कर्मकाण्ड**
   लेखिका : डॉ. बीना अग्रवाल, सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, प्रशान्त प्रकाशन, वाराणसी, 1996
3. **सांख्य एवं काश्मीर शैव दर्शन में सृष्टि**
   लेखक : डॉ. विजयशङ्कर द्विवेदी, सम्पादक : डॉ. कृष्णकान्त शर्मा, प्रशान्त प्रकाशन, वाराणसी, 1997
4. **उन्मीलनम् (पं. बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते अभिनन्दन–ग्रन्थ)**
   सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, प्रशान्त प्रकाशन, वाराणसी, 1998
5. **बौद्धाचार्य वसुबन्धु**
   लेखकः डॉ. मुनिराम तिवारी, सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, प्रशान्त प्रकाशन, वाराणसी, 1999
6. **मेदपाट–मण्डन पं. गिरिधरलाल शास्त्री**
   लेखकः डॉ. यशवन्त कुमार जोशी, सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, प्रशान्त प्रकाशन, वाराणसी, 1999
7. **दर्शन–कणिका**
   लेखक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, प्रशान्त प्रकाशन, वाराणसी, 2002
8. **बौद्ध सुभाषित**
   लेखक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2003
9. **बौद्ध शैक्षिक मूल्य**
   लेखिका : डॉ. मीना शर्मा, सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2004
10. **अभ्युदय (लाल राजेन्द्र बहादुर सिंह अभिनन्दन–ग्रन्थ)**
    सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, प्रकाशक डॉ. अमलधारी सिंह, बैसवाड़ा, 2004
11. **वेदान्त में बौद्ध सन्दर्भ**
    लेखिका : डॉ. अनामिका सिंह, सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2005

12. **आचार्यवसुबन्धुप्रणीते पञ्चस्कन्धप्रकरणं त्रिस्वभावनिर्देशश्च**
अनुवादिका : डॉ. अनामिका सिंह, सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2005

13. **दर्शनमञ्जूषा**
लेखिका : डॉ. अनामिका सिंह, सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2005

14. **तन्त्रविमर्श**
सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2005

15. **मध्यान्तविभाग**
लेखिका : डॉ. अनामिका सिंह, सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2007

16. **पीयूष–पथ**
लेखक एवं सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2011

17. **बौद्ध बिन्दु**
लेखक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2012

18. **नेपाल में बौद्ध मत**
लेखक : सार्की शेर्पा, सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2015

19. **दर्शन–मकरन्द**
लेखक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, ऋषि–मुनि प्रकाशन, उज्जैन, 2016

20. **विदुषां–पत्राणि**
सम्पादक : डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2016

डॉ. सूर्यप्रकाश व्यास की अन्य रचनाएँ

1. **बौद्ध, वेदान्त एवं काश्मीर शैव दर्शन, विवेक प्रकाशन, अलीगढ़ 1986.**
2. **सिद्धित्रयी (अनुवाद और सम्पादन), चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 1986**
3. **जातकमाला (अनुवाद और सम्पादन), चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 1988**
4. **आचार्य रतिनाथ झा रचनावली, (सम्पादन) राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, 2010**

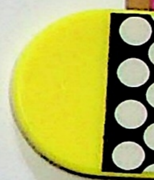
5. **बौद्ध प्रज्ञा–सिन्धु, खण्ड–5, 8, (सहसम्पादन) न्यू भारतीय बुक कॉरपोरेशन, नई दिल्ली, 2011, 2014**
6. **बौद्ध विमर्श, (सम्पादन) बौद्ध अध्ययन केन्द्र, चेतगंज, वाराणसी, 2011**
7. **आचार्य रामचन्द्र द्विवेदी रचनावली, (सम्पादन) राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, दिल्ली, 2012**
8 **ढलता सूरज, (कविता संग्रह), आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2015**
9. **श्रीमती ओमवती शर्मा और जनसेवा ट्रस्ट (लेखन, सम्पादन), 2015**
10. **जीवन–मधु, (लेखन, सम्पादन), श्रीमती ओमवती शर्मा जनसेवा ट्रस्ट, निम्बाहेड़ा(राजस्थान),2016**

सम्पादित लघु पुस्तिकाएँ व पत्रिकाएँ

1. गति –मा. व. श्रमजीवी महाविद्यालय, उदयपुर की मासिक पत्रिका, 1973 – 1977
2. श्रमधरा –(संस्कृत खण्ड), मा. व. श्रमजीवी महाविद्यालय, उदयपुर की वार्षिक पत्रिका, 1973 – 1977
3. उद्गार –प्रशान्त प्रकाशन, वाराणसी, 1998
4. गीतामृतम् –प्रशान्त प्रकाशन, वाराणसी, 1999
5. भाव–गीत– (सम्पादन) लेखक, सुभाषचन्द्र जोशी, श्रीमती अनुराधा जोशी, मुम्बई, 2002
6. सङ्गम (स्मारिका)–बुद्धिस्ट कॉन्फ्रेन्स, 16–17 फरवरी, 2008
7. संस्कृतविद्या–(सहसम्पादन) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, 2006 से 2010
8. आर्या (स्मारिका)–बौद्ध अध्ययन केन्द्र, चेतगंज, वाराणसी, 2011
9. वर्तमान वाराणसी में बौद्धमत की प्रवृत्तियाँ–(सम्पादन)लेखिका, डॉ. अनामिका सिंह, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी, 2012

प्राप्ति स्थान

1. **9 अथर्व विहार, इन्दौर रोड, उज्जैन–456010 (म.प्र.) मो. 08109516550 : ईमेलःsuryaprvyas@gmail.com**
2. **आर्यभाषा संस्थान, बी–2/143ए. भदैनी, वाराणसी–221009 (उ.प्र) मो. 09839575796**







सूर्यप्रकाश व्यास

जन्मतिथि	:	15 अगस्त, 1946
गुरु–नाम	:	(स्व.) आचार्य रामचन्द्र द्विवेदी आचार्य मूलचन्द्र पाठक
शिक्षा	:	एम.ए. (संस्कृत), 1969 पीएच.डी., 1976 मो. सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)
शैक्षिक अनुभव	:	• व्याख्याता (1972–1978) मा.व.श्रमजीवी महाविद्यालय, उदयपुर • व्याख्याता (1978–1982) मो. सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर • व्याख्याता, उपाचार्य, आचार्य एवम् अध्यक्ष (23 फरवरी, 1984 – जून, 2012) जैन–बौद्ध दर्शन विभाग काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तरप्रदेश)
शोध–निर्देशन	:	लघुशोध–निबन्ध 7, शोध–प्रबन्ध 13 विशिष्ट शोध योजनाएँ 6
प्रकाशन		पुस्तकें आदि (लेखन–सम्पादन) 38
विशिष्ट व्याख्यान	:	80
आकाशवाणी वार्ता	:	24
स्थाई पता	:	9, अथर्व विहार, इन्दौर रोड, उज्जैन–456010 (म.प्र.) दूरभाष 08109516550 ई–मेल suryaprvyas@gmail.com



आर्यभाषा संस्थान

बी. 2/143 ए, भदैनी, वाराणसी-221001



ISBN:978-81-87978-42-8

₹ 300.00